तृण सन्देश

राजभाषा वार्षिक पत्रिका

अंक - 19, वर्ष 2023-24

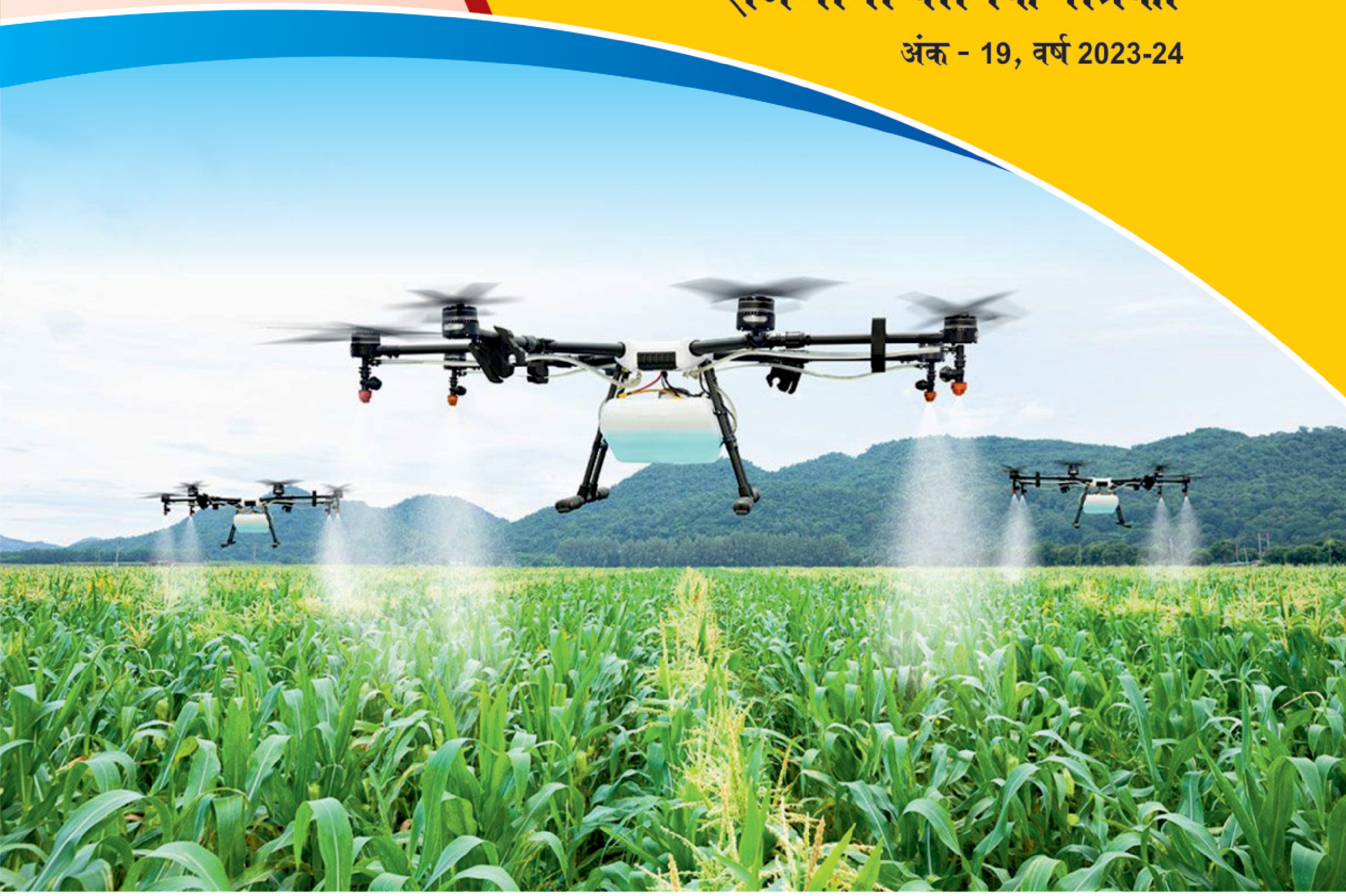

भा.कृ.अनु.प. – खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर

ICAR - Directorate of Weed Research, Jabalpur

आई.एस.ओ. 9001 : 2015 प्रमाणित

ISO 9001 : 2015 Certified

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्

महिमा गीत

जय जय कृषि परिषद् भारत की
सुखद प्रतीक हरित भारत की ।

कृषि धन पशु–धन मानव जीवन
दुग्ध मत्स्य फल यंत्र सुवर्धन ।

वैज्ञानिक विधि नव तकनीकी
पारिस्थितिकी का संरक्षण ।

सस्य श्यामला छवि भारत की
जय जय कृषि परिषद् भारत की ।।

हिम प्रदेश से सागर तट तक
मरू धरती से पूर्वोत्तर तक ।

हर पथ पर है मित्र कृषक की
शिक्षा, शोध, प्रसार, सकल तक।

आशा स्वावलम्बित भारत की ।
जय जय कृषि परिषद् भारत की
जय जय कृषि परिषद् भारत की ।।

तृण संदेश

राजभाषा वार्षिक पत्रिका

अंक–19, वर्ष 2023-24

भाकृअनुप
ICAR

भा.कृ.अनु.प. – खरपतवार अनुसंधान निदेशालय

ICAR - Directorate of Weed Research

जबलपुर, मध्य प्रदेश

Jabalpur, Madhya Pradesh

आई.एस.ओ. 9001 : 2015 प्रमाणित

ISO 9001 : 2015 Certified

D W R

तृण संदेश

राजभाषा वार्षिक पत्रिका

अंक–19, वर्ष 2023-24

संरक्षक एवं प्रकाशक

डॉ. जे.एस. मिश्र
निदेशक

प्रधान संपादक

डॉ. पी.के. सिंह
प्रधान वैज्ञानिक

संपादक मण्डल

डॉ. योगिता घरडे
वरिष्ठ वैज्ञानिक

डॉ. जीतेन्द्र कुमार सोनी
वैज्ञानिक

डॉ. अर्चना अनोखे
वैज्ञानिक

श्री संदीप धगट
मुख्य तकनीकी अधिकारी

श्री एस.के. पारे
सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी

इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

सम्पर्क सूत्र

भा.कृ.अनु.प.–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर, मध्यप्रदेश
फोन : 0761–2353138 फैक्स : 0761–2353129
ई–मेल : Director.Weed@icar.gov.in
वेबसाइट : https://dwr.icar.gov.in
फेसबुक लिंक : https://www.facebook.com/Icar-dwr Jabalpur
ट्विटर लिंक : https://twitter.com/DwrIcar

ISBN : 978-81-958133-8-4

सत्यमेव जयते

डॉ. हिमांशु पाठक

Dr. HIMANSHU PATHAK

सचिव (डेयर) एवं

महानिदेशक (आईसीएआर)

Secretary (DARE) &

Director General (ICAR)

भारत सरकार

कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली-110 001

GOVERNMENT OF INDIA

DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION (DARE)

AND

INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH (ICAR)

MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS' WELFARE

Krishi Bhavan, New Delhi 110 001

Tel: 23382629/23386711 Fax : 91-11-23384773

E-mail: dg.icar@nic.in

संदेश

खरपतवार फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता के लिए गंभीर चुनौती प्रस्तुत करते हैं। कृषि में खरपतवारों से होने वाले नुकसान को कम करने तथा किसानों की आय बढ़ाने हेतु भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा लगातार नवीनतम अनुसंधान किये जा रहे हैं। खरपतवार प्रबंधन की नवीनतम तकनीकों को किसानों तक समय से उनकी ही भाषा में पहुँचाना अति आवश्यक है। इस दिशा में निदेशालय द्वारा वार्षिक हिंदी पत्रिका **"तृण संदेश"** का प्रकाशन एक सराहनीय प्रयास रहा है। इसमें देशभर से प्राप्त लेख जिसमें खरपतवार प्रबंधन के आधुनिक तकनीकों के साथ-साथ वैज्ञानिक पद्धति से फसलों को उगाने के तरीकों एवं सामाजिक साहित्यिक लेखों का संकलन है। यह पत्रिका हमारे वैज्ञानिकों और किसानों के बीच एक महत्वपूर्ण सेतु का कार्य कर रही है, जो न केवल किसानों के लिए कृषि में नवीन तकनीकी ज्ञान का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है, बल्कि वैज्ञानिकों और कृषि विशेषज्ञों के लिए भी अत्यंत उपयोगी है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर, खरपतवार प्रबंधन में नवीनतम शोध, तकनीकों और उनके उपयोगी परिणामों को सरल और प्रभावी तरीके से **"तृण संदेश"** पत्रिका के 19 वें अंक के माध्यम से प्रकाशित कर रहा है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह अंक कृषकों, कृषि वैज्ञानिकों, विद्यार्थियों एवं कृषि से सबंधित आम जनमानस हेतु उपयोगी साबित होगा तथा राजभाषा के प्रचार-प्रसार हेतु प्रेरणादायक होगा।

"तृण संदेश" के सफल प्रकाशन के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

दिनांक: 22 अगस्त, 2024

(हिमांशु पाठक)

भाकृअनुप

ICAR

सत्यमेव जयते

संजय गर्ग
SANJAY GARG
अपर सचिव, डेयर एवं सचिव, आई.सी.ए.आर.
ADDITIONAL SECRETARY, DARE & SECRETARY, ICAR

भारत सरकार
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय
कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा विभाग
कृषि भवन, नई दिल्ली-110001
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS' WELFARE
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION
KRISHI BHAWAN, NEW DELHI-110001

संदेश

कृषि भारत की अर्थव्यवस्था और संस्कृति का एक अभिन्न अंग है, जो न केवल हमारे समाज की नींव है बल्कि देश के समग्र विकास में भी अहम भूमिका निभाती है। इस दृष्टि से कृषि के क्षेत्र में हो रहे नित नये प्रयोगों, अनुसंधानों एवं तकनीकों की जानकारी कृषकों को उनकी भाषा में प्राप्त होना अत्यावश्यक है। इस दिशा में भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर अपनी वार्षिक राजभाषा पत्रिका ''**तृण संदेश**'' के माध्यम से कृषकों को खरपतवार प्रबंधन हेतु विकसित विभिन्न तकनीकों की जानकारी सरल भाषा में उपलब्ध करा रहा है। यह पत्रिका न केवल खरपतवार प्रबंधन और फसल उत्पादन की तकनीकी जानकारी प्रदान करती है, बल्कि कृषि के क्षेत्र में नवीनतम अनुसंधानों की जानकारी हिंदी भाषा में उपलब्ध कराने एवं राजभाषा के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। मुझे विश्वास है कि ''**तृण संदेश**'' पत्रिका के माध्यम से हमारे कृषक नवीनतम तकनीकों को अपनाकर अपने कृषि कार्यों में सुधार करेंगे और अपनी उत्पादन क्षमता को बढ़ाएंगे।

इस अवसर पर ''**तृण संदेश**'' के 19 वें अंक के सफल प्रकाशन के लिए मैं निदेशालय को अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूँ।

दिनांक : 22 अगस्त, 2024

(संजय गर्ग)

Room No. 106, Krishi Bhawan, Dr. Rajendra Prasad Road, New Delhi - 110001
Tel. No. : +91 11 23384450 Fax : +91 11 23387705 Email: secy.icar@nic.in

भाकृअनुप
ICAR

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि अनुसंधान भवन-II, पूसा, नई दिल्ली-110012, भारत
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
Krishi Anusandhan Bhawan-II, Pusa, New Delhi-110012, India

डॉ. सुरेश कुमार चौधरी
Dr. Suresh Kumar Chaudhari
उप महानिदेशक (प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन)
Deputy Director General (Natural Resources Management)

संदेश

खरपतवार फसल उत्पादन में अवरोध पैदा करने वाली एक जटिल एवं विकट समस्या है, जिससे न केवल कृषि एवं गैर-कृषि क्षेत्र अपितु जल निकाय भी प्रभावित हैं। भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के अधीनस्थ खरपतवार प्रबंधन पर अनुसंधान करने वाला देश का अग्रणी शोध संस्थान है। खरपतवार समस्या के समाधान एवं निवारण हेतु संस्थान द्वारा कृषक बंधुओं को सरल एवं बोधगम्य भाषा में तकनीकी जानकारी प्रदान करना एक सराहनीय कदम है।

खरपतवारों के प्रबंधन के लिए लगातार किए जा रहे निदेशालय के प्रयासों को दर्शाती पत्रिका ''**तृण संदेश**'' किसानों में जागरूकता लाने के साथ ही राजभाषा के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। पत्रिका के माध्यम से हिन्दी में संकलित वैज्ञानिक एवं तकनीकी जानकारी के इस उत्तम प्रयास की मैं सराहना करता हूँ एवं ''**तृण संदेश**'' के 19 वें अंक के सफल प्रकाशन हेतु संस्थान तथा सभी लेखकों एवं संपादक मंडल के सदस्यों को शुभकामनाएँ देता हूँ।

दिनांक: 28 अगस्त, 2024

(सुरेश कुमार चौधरी)

भाकृअनुप
ICAR

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि अनुसंधान भवन-II, पूसा, नई दिल्ली-110012, भारत
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
Krishi Anusandhan Bhawan-II, Pusa, New Delhi-110012, India

डॉ. राजबीर सिंह
Dr. Rajbir Singh
सहायक महानिदेशक (सस्य, कृ.वा. एवं ज.प.)
Assistant Director General (Agronomy, Agroforestry & Climate Change)

संदेश

भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा खरपतवारों के प्रबंधन हेतु नवीनतम अनुसंधान किये जा रहे हैं, जो कृषि क्षेत्र में उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से महत्वपूर्ण है। अनुसंधानीय जानकारी को कृषकों एवं आमजनों तक सरल भाषा में उपलब्ध कराना अति आवश्यक है। इसी दिशा में, निदेशालय द्वारा खरपतवारों के प्रबंधन से संबंधित लेख व कृषि उत्पादन से संबंधित विभिन्न जानकारियों को उल्लेखित करती हुई पत्रिका ''**तृण संदेश**'' का प्रकाशन एक सराहनीय प्रयास है।

इस अवसर पर ''**तृण संदेश**'' पत्रिका के 19 वें अंक के सफल प्रकाशन के लिए मैं निदेशालय को अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूँ।

दिनांक: 30 अगस्त, 2024

(राजबीर सिंह)

भाकृअनुप
ICAR

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि अनुसंधान भवन-II, पूसा, नई दिल्ली-110012, भारत
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
Krishi Anusandhan Bhawan-II, Pusa, New Delhi-110012, India

श्रीमति सुपर्णा दासगुप्ता
Smt. Suparna Dasgupta
निदेशक (राजभाषा)
Director (Official Language)

संदेश

अत्यंत हर्ष का विषय है कि भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा वार्षिक हिंदी पत्रिका **"तृण संदेश"** के 19वें अंक का प्रकाशन किया जा रहा है। निदेशालय खरपतवारों के प्रबंधन एवं उनके उन्मूलन हेतु नित नये प्रयोग एवं अनुसंधान कार्यों को करता आ रहा है, तथा अपनी पत्रिका के माध्यम से खरपतवार प्रबंधन तकनीकियों और कृषि के विभिन्न क्षेत्रों की नवीनतम जानकारियाँ कृषकों तक सरल और सहज भाषा में पहुँचा रहा है, जिससे राजभाषा के प्रचार-प्रसार को भी बढ़ावा मिलता है।

हिंदी पत्रिका **"तृण संदेश"** के माध्यम से खरपतवार नियंत्रण तकनीकी का प्रचार-प्रसार एक सराहनीय प्रयास है। इस अवसर पर मैं निदेशालय को बधाई देती हूँ तथा **"तृण संदेश"** के 19वें अंक के सफल प्रकाशन की कामना करती हूँ।

मुझे विश्वास है कि यह अंक कृषकों, वैज्ञानिकों और छात्रों के लिए उपयोगी साबित होगा और साथ ही राजभाषा को बढ़ावा मिलेगा।

दासगुप्ता

(सुपर्णा दासगुप्ता)

दिनांक: 20 अगस्त, 2024

भाकृअनुप
ICAR

निदेशक की कलम से...

खरपतवार कृषि उत्पादन में एक प्रमुख समस्या है, जो फसलों से पोषक तत्व, नमी एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा कर पैदावार में लगभग 30 से 35 प्रतिशत तक कमी ला सकते है। भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर, खरपतवार प्रबंधन से संबंधित नवाचार प्रक्रिया में विगत 35 वर्षो से निरंतर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। एक संस्थान के रूप में यह निदेशालय अपने 17 नियमित एवं 07 स्वैच्छिक अ.भा.स.अनु.परि. केन्द्रो के माध्यम से पारिस्थितिकी विशेष अनुसंधान के साथ-साथ तकनीकी हस्तांतरण एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों का भी आयोजन करता है। निदेशालय निरंतर बुनियादी और रणनीतिक शोध एवं प्रसार द्वारा कृषकों को विभिन्न खाद्यान्न फसलों एवं फसल प्रणालियों, सब्जियों एवं बागवानी फसलों में आने वाले खरपतवारों तथा जलीय खरपतवार प्रबंधन की उन्नत तकनीक पर प्रशिक्षण उपलब्ध करा रहा है। संस्थान द्वारा वैज्ञानिकों, कृषि विज्ञान केंद्रों के विषय वस्तु विशेषज्ञों, कृषि अधिकारियों एवं कृषकों हेतु समय-समय पर प्रशिक्षण एवं प्रक्षेत्र भ्रमण कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं, ताकि आधुनिक खरपतवार प्रबंधन के तकनीकी पहलुओं से वे व्यवहारिक रूप से अवगत होकर उन्नत तकनीकों से कृषि उत्पादन को बढ़ाकर ज्यादा से ज्यादा आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकें। वर्तमान में सरकार द्वारा पोषण अनाजों (मिलेट्स) के उत्पादन तथा प्राकृतिक खेती पर विशेष बल दिया जा रहा है, जिनमें खरपतवार प्रबंधन एक महत्वपूर्ण शोध का विषय है।

निदेशालय द्वारा प्रकाशित वार्षिक हिंदी पत्रिका **"तृण संदेश"** के 19 वें अंक को प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष का अनुभव हो रहा है। इस पत्रिका में खरपतवार प्रबंधन के लेखों के साथ-साथ सामान्य कृषि उत्पादन संबंधी लेखों को सरल भाषा में किसानों तक पहुंचाने का सार्थक प्रयास किया गया है। जिससे राजभाषा के प्रचार-प्रसार को भी बढ़ावा मिलता है।

देशहित के लिए संस्थान के योगदान एवं नवीन कृषि अनुसंधानों के कार्यो की झलक आपको इस प्रकाशन में भी मिलेगी। मुझे पूरा विश्वास है कि इस पत्रिका द्वारा हम ज्यादा से ज्यादा किसानों, छात्रों, हितग्राहियों एवं वैज्ञानिकों को खरपतवार प्रबंधन के विभिन्न आयामों पर जागरूक कर पायेंगे। आपके बहुमूल्य सुझाव एवं प्रतिक्रियाओं के लिए हम प्रतीक्षारत रहेंगे। मैं निदेशालय के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों को इस सुन्दर संकलन में सहयोग हेतु धन्यवाद देता हूँ।

जय हिन्द !

दिनांक: 30 अगस्त, 2024

जे.एस. मिश्र
निदेशक

संपादकीय...

भारत विविधताओं का देश है, जिसमें विभिन्न भाषाओं, संस्कृतियों और परंपराओं का संगम है। यहाँ की विविधता केवल भौगोलिक या सांस्कृतिक नहीं, बल्कि भाषाई भी है। इसी बहुभाषी परिप्रेक्ष्य में हिंदी एक ऐसा माध्यम है जो हमें एकता की डोर से बांधता है और हमारे आपसी संवाद को सुगम बनाता है। हिंदी में लिखे गए साहित्य, कविताएँ और लेख न केवल सांस्कृतिक धरोहर को संजोते हैं, बल्कि समाज में जागरूकता और सृजनात्मकता को भी प्रेरित करते हैं। हिंदी की इस समृद्ध परंपरा और इसके महत्व को समझना और सराहना सभी भारतीयों के लिए गर्व की बात है, हमें इसे बढ़ावा देने तथा इसके प्रयोग को प्रोत्साहित करने की दिशा में निरंतर प्रयास करते रहना चाहिए। इसी दिशा में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् विभागीय कामकाज में राजभाषा हिन्दी के इस्तेमाल में बढ़ोत्तरी सुनिश्चित करने के लिए प्रयासरत है। नवीनतम अनुसंधानों के परिणामों को किसानों एवं जनसाधारण तक हिन्दी में पहुँचाना परिषद् का प्रमुख ध्येय है। इसे हासिल करने हेतु परिषद एवं इसके देशभर में फैले सभी अनुसंधान संस्थान अपने-अपने स्तर पर प्रयासरत है। आज विज्ञान सूचना एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी को और अधिक सक्षम बनाने की आवश्यकता है, ताकि वैज्ञानिक उपलब्धियों को किसानों तक आसानी से उनकी समझ में आने वाली भाषा में पहुंचाया जा सके ताकि दिन-प्रतिदिन किए जा रहे नये-नये अनुसंधानों का लाभ किसानों को सहजता से मिल सके।

इसी कड़ी में भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा खरपतवार प्रबंधन की नवीनतम तकनीकों को किसानों तक उनकी सरल भाषा में पहुँचाने और हिंदी को और व्यापक बनाने के लिए, अपनी वार्षिक राजभाषा पत्रिका ''**तृण संदेश**'' के माध्यम से प्रयासरत हैं। इस पत्रिका में जहाँ एक तरफ देशभर से प्राप्त खरपतवार नियंत्रण की नई-नई तकनीकों से संबंधित शोध लेखों को स्थान दिया गया है वहीं कृषि संबंधी अन्य लेखों तथा ज्ञानवर्धक विभिन्न समसामयिक लेखों एवं रचनाओं को भी उचित स्थान प्रदान किया गया है। पत्रिका का उद्देश्य किसानों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान करना है, जिससे वे अपनी फसलों की उत्पादकता बढ़ा सकें और कृषि के क्षेत्र में स्थिरता और समृद्धि को सुनिश्चित कर सकें। "तृण संदेश" पत्रिका राजभाषा के प्रचार-प्रसार में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है।

इस अंक को पिछले अंको से अधिक प्रभावशाली बनाने का समुचित प्रयास किया गया है। पत्रिका के इस संस्करण में मुख्यत: विभिन्न फसलों में खरपतवार प्रबंधन की आधुनिक तकनीकों एवं वैज्ञानिक पद्धति से फसलों की पैदावार वृद्धि से संबंधित आलेख सम्मिलित किए गए है जो कृषकों, छात्रों, कृषि अधिकारियों, कृषि विज्ञान केन्द्रों के विशेषज्ञों एवं जनमानस के लिए ज्ञानवर्धक सिद्ध होंगे। साथ ही साथ पत्रिका में कुछ रोचक एवं हृदयस्पर्शी कविताओं, कहानियों एवं स्वास्थ्य के प्रति लाभदायक लेखों को भी सम्मिलित किया गया है। संपादक मंडल सभी वैज्ञानिकों, लेखकों एवं रचनाकारों का आभारी है जिन्होने अपने शोध एवं सामान्य विचारों को लेखनीबद्ध कर पत्रिका में प्रकाशन हेतु अपनी सहभागिता दी है।

राजभाषा अनुभाग के अथक प्रयासों से निदेशालय में हिन्दी की निरंतर प्रगति हो रही है, इसी दिशा में यह उन्नीसवाँ अंक सार्थक कदम के रूप में आपके समक्ष प्रस्तुत है। हम आपके सुझावों एवं प्रतिक्रियाओं हेतु आशान्वित रहेंगे, जिससे आगामी अंक को और भी बेहतर रूप में प्रस्तुत किया जा सके।

संपादक मण्डल

।। सरस्वती वंदना ।।

वर दे, वीणावादिनी वर दे!
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत मंत्र नव
भारत में भर दे!
वीणावादिनी वर दे!

काट अंध-उर के बंधन स्तर
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर
कलुष-भेद-तम हर, प्रकाश भर,
जगमग जग कर दे!
वर दे, वीणावादिनी वर दे!

नव गति, नव लय, ताल-छंद नव,
नवल कंठ, नव जलद्-मंद्र रव,
नव नभ के विहग वृंद को,
नव पर, नव स्वर दे!
वर दे, वीणावादिनी वर दे!

वर दे, वीणावादिनी वर दे!
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत मंत्र नव
भारत में भर दे!
वीणावादिनी वर दे!

सरस्वती मया दृष्टा, वीणापुस्तकधारणी।
हंसवाहनसंयुक्ता, विद्यादानं करोतु मे॥

Saraswati Maya Drishta, Veena Pustak Dharni,
Hans Vahin Sanyukta Vidya Daanam Karotu Me...

अनुक्रमणिका

क्र.	विवरण	पृष्ठ संख्या

खण्ड - क

1. **टिकाऊ खरपतवार प्रबंधन हेतु फसल विविधीकरण आवश्यक** 1-3
जे.एस. मिश्र

2. **रबी फसलों में उन्नत खरपतवार प्रबन्धन** 4-13
पी.के सिंह, वी.के. चौधरी, योगिता घरडे, जमालुद्दीन ए. एवं जे.एस. मिश्र

3. **देश में प्रमुख विदेशी आक्रामक खरपतवार एवं उनका प्रभाव** 14-17
योगिता घरडे, सुरभि होता, पी.के. सिंह एवं पी.के. गुप्ता

4. **अरहर की फसल में खरपतवार प्रबंधन** 18-19
पी.के सिंह, वी.के. चौधरी, एस.के. पारे एवं जे.एस. मिश्र

5. ***सोनकस ओलेरेसियस* एल. : बदलते जलवायु परिदृश्य में खाद्य और पोषण सुरक्षा के लिए एक वैकल्पिक विकल्प** 20-21
सहदेव इंदलदास कुवरदादरा, दसारी श्रीकांत एवं दीपक पवार

6. **खरपतवार नियंत्रण-भौतिक एवं कृषिगत विधियाँ** 22-26
पवन कुमार पारा, पंकज शुक्ला एवं किरण शर्मा

7. **तिल की फसल में खरपतवार नियंत्रण** 27-28
निशा महान, लोकनाथ सिंह, विनोद कुमार पाण्डेय एवं बरुन कुमार सिंह

8. **भूमि आंवला (*फाइलेन्थस निरूरी*) खरपतवार के औषधीय गुण व उपयोग** 29-30
लालचन्द्र कुमावत, ए.पी. सिंह, जे. चौधरी, अशोक कुमार समोता एवं सिमरन जास्टा

9. **भारतीय कृषि पारिस्थितिकी में खरपतवारों की भूमिका तथा लाभकारी दृष्टिकोण** 31-33
आर.के. सिंह एवं सौरव चौरसिया

10. **बागों में खरपतवार प्रबंधन** 34-35
विनीता राजपूत, सुनील कुमार एवं नरेंद्र कुमार

11. **बथुआ (*चिनोपोडियम एलबम*): पोषक तत्वों से भरपूर एक अद्भुत साग** 36-37
अमनदीप रंजन, सुभाष कुमार सौरभ एवं शिवानी मीना

12. **मूंग की फसल में खरपतवार नियंत्रण** 38
मनीष राज, पवन कुमार, राजेश कुमार, कविता सोलंकी, संजय कुमार एवं आर.के. सोहने

13. **मक्का में एकीकृत खरपतवार प्रबंधन** 39-43
नीलकमल मिश्रा एवं आलोक सिन्हा

14. **फलीदार पौधे आधारित फसल प्रणाली : एक पर्यावरण अनुकूलित खरपतवार प्रबंधन का आयाम** 44-46
जीतेन्द्र कुमार सोनी एवं वैभव चौधरी

15. **जैव विविधता के परिप्रेक्ष्य में खरपतवारों की पारिस्थितिक समझ** 47-49
एम.एस. रघुवंशी, एच.एल. खरबीकर, जी.आर. डोंगरे, आर.के. नेताम, ए.ओ. शिरालेय, पी.सी. मोहाराना, रितिक विश्वास एवं एन.जी. पाटिल

क्र.	विवरण	पृष्ठ संख्या
16.	**फ्लॉस फ्लावर (*एजीरेटम ह्यूस्टोनियनम*): गैर खेती योग्य भूमि का एक घातक खरपतवार और उसका प्रबंधन** गरिमा, यूर्मिला कुमारी, कशिश वालिया एवं मीरा देवी	50-51
17.	***अर्टिका डायोका* (बिच्छू बूटी): बंजर व गैर-कृषि क्षेत्रों में एक हानिकारक खरपतवार और इसका प्रबंधन** यूर्मिला कुमारी, गरिमा, कशिश वालिया, मीरा देवी एवं गीता वर्मा	52-53
18.	**जलवायु परिवर्तन : खरपतवार प्रबंधन के लिए एक पनपता खतरा** कशिश वालिया, यूर्मिला कुमारी, गरिमा एवं आयुषी अहलूवालिया	54-56
19.	**श्रीअन्न में समेकित खरपतवार प्रबंधन** जितेंद्र कुमार दुबे, आर.पी. दुबे, पिजुश कान्ती मुखर्जी एवं वी.के. चौधरी	57-64
20.	**धान की खेती में खरपतवार प्रबंधन : मणिपुर से एक केस स्टडी** लिडिया जिमिक, लैशराम कांता सिंह, एस. रोमा देवी एवं रामगोपाल लाहा	65-66
21.	**विदेशी खरपतवारों का वन्यजीवों पर प्रभाव : एक चिंता का विषय** अर्चना अनोखे, मोगली रम्मैया, बबीता यादव एवं दीक्षा एम.जी.	67-68
22.	**मृदा का खरपतवार आधारित फाइटोरेमेडिएशन** सुरभि होता, योगिता घरडे, जीतेन्द्र कुमार सोनी एवं कृष्ण कुमार मौर्य	69-72
	खण्ड -ख	
23.	**कृत्रिम बुद्धिमता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) का महत्व एवं आधुनिक कृषि में बढ़ती उपयोगिता** पी.के सिंह, चेतन सी.आर., योगिता घरडे, एस.के.पारे, इति राठी एवं संतोष कुमार	73-76
24.	**खाद्य पदार्थों में पशु जनित जैव प्रतिरोधक दवाइयों के अवशेषों की उपस्थिति का महत्व** शोभा सोंधिया, सौम्या मिश्रा एवं नीलम राजपूत	77-78
25.	**सहजन (*मोरिंगा*) एक गुणकारी औषधीय पेड़** मुकेश कुमार मीणा एवं जी.आर. डोंगरे	79-80
26.	**बाजरे की खेती उन्नत तकनीक से कैसे करें?** पवन कुमार पारा, पंकज शुक्ला एवं किरण शर्मा	81-82
27.	**ड्रैगनफल (कमलम) की उत्पादन तकनीक** रोहित कुमार कुमावत, सत्येंद्र ठाकुर, अंकित भारती एवं अल्पना कुम्हरे	83-85
28.	**जैव संवर्धित किस्में एवं उनकी प्रमुख विशेषतायें** अमित तोमर	86-88
29.	**खरीफ ऋतु में अरहर की जैविक खेती** राजीव कुमार, प्रदीप कुमार एवं अवधेश कुमार	89-90
30.	**गन्ने की वैज्ञानिक खेती से बढ़ेगी किसानों की आय** आर.एस. सेंगर, वर्षा रानी, आकांक्षा सिंह, हुविष्का दत्त एवं शालनी गुप्ता	91-94
31.	**मसालों में हल्दी भारत की धरोहर** प्रमोद कुमार गुप्ता एवं योगिता घरडे	95-100

क्र.	विवरण	पृष्ठ संख्या
32.	**वर्टिकल फार्मिंग : भविष्य के लिए बेहतर विकल्प** अलीमुल इस्लाम एवं रमण भारती	101–102
33.	**धान–गेहूं फसल प्रणाली में धान की पराली का प्रबंधन** रिंकू कुमार, दिनेश साह, अरुण कुमार एवं संजय कुमार	103–105
34.	**तिल की आधुनिक खेती हेतु पौध संरक्षण** द्वारका एवं निशा चढ़ार	106–111
35.	**स्वदेशी तकनीकी ज्ञानः सतत कृषि पद्धतियों का खजाना** सुभाष कुमार सौरभ एवं अमनदीप रंजन	112–113
36.	**संरक्षण कृषि के माध्यम से मृदा स्वास्थ्य का परीक्षण** के.के. मौर्य, संदीप कुमार, रवि कुमार, सुरभि होता, अरिजीत बर्मन एवं आर.एम. मीणा	114–116
37.	**नैनो–कीटनाशकः कृषि कीट प्रबंधन में एक अभिनव तकनीक** सुब्रत गोस्वामी एवं एम. रघुरामन	117–118
38.	**औषधीय एवं सगंध पौधों में समन्वित व्याधि प्रबंधन** पी.के. गुप्ता एवं योगिता घरडे	119–120
39.	**सरसो के कीट एवं उनके एकीकृत कीट प्रबंधन** अर्चना अनोखे, मुकेश कुमार मीणा एवं दीक्षा एम.जी.	121–123
	खण्ड – ग	
40.	**खरपतवार चालीसा** चन्द्रभानू	124
41.	**भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का गौरवान्वित वैज्ञानिक** अर्चना अनोखे	124
42.	**राजकीय कामकाज में राजभाषा हिन्दी का महत्व** जी.आर. डोंगरे एवं मुकेश कुमार मीणा	125–126
43.	**अन्नदाता की हमसे आस** जी.आर. डोंगरे	127
44.	**किताबें हमारी मित्र** प्रीति ठाकुर	128–129
45.	**क्योंकि तुम हो गाजरघास** अंजलि बकोड़े, अभिषेक बकोड़े एवं अर्चना अनोखे	129
46.	**पानी बचाना है** विजय कुमार कौशिक	130
47.	**विकास का विश्वास** जी.आर डोंगरे	131
48.	**वर्ष 2023–24 में भा.कृ.अनु.प. – खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की गतिविधियों एवं किये गये प्रयासो का संक्षिप्त विवरण**	132–134

खण्ड-क

टिकाऊ खरपतवार प्रबंधन हेतु फसल विविधीकरण आवश्यक

जे.एस. मिश्र
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

खरपतवार किसी भी फसल उत्पादन में सबसे बड़ी बाधा है, जो फसल की उत्पादकता एवं लाभप्रदता दोनों को कम करती है। खरपतवार फसलों से विभिन्न संसाधनों जैसे पानी, पोषक तत्व, सूरज की रोशनी एवं स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करके फसल की पैदावार को काफी कम कर लेते है तथा खरपतवार प्रबंधन के कारण फसल उत्पादन की लागत बढ़ जाती है। हमारे देश में अनाजों की 10 प्रमुख फसलों में खरपतवारों के कारण 11 बिलियन अमरीकी डालर का नुकसान प्रतिवर्ष आंका गया है। विकासशील देशों में खरपतवारों को आमतौर पर हाथ से निराई करके प्रतिबंधित किया जाता है। लेकिन बढ़ते शहरीकरण, श्रम लागत में वृद्धि तथा कृषि में मजदूरों की संख्या में कमी के कारण खरपतवारों के प्रबंधन में शाकनाशी रसायनों का प्रयोग लगातार बढ़ता जा रहा है। शाकनाशियों पर अत्यधिक निर्भरता एवं अविवेकपूर्ण उपयोग के कारण शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवारों की संख्या में वृद्धि, साथ ही साथ पर्यावरण–स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं एवं मानव स्वास्थ्य और पारिस्थितिक चिताएं पैदा कर रही हैं। वर्तमान में दुनियाभर में शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवारों के लगभग 533 अनूठे मामले दर्ज किए गये हैं। शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवारों के प्रबंधन के लिए नये शाकनाशी रसायनों का विकास आवश्यक हैं, लेकिन विगत तीन दशकों से अधिक समय में भी नई क्रिया का कोई भी शाकनाशी विकसित नही किया गया हैं।

प्रमुख उत्पादन प्रणालियों में खरपतवारों के स्थाई प्रबंधन मे फसल विविधीकरण एक महत्वपूर्ण घटक हैं। फसल विविधीकरण द्वारा खरपतवारों के बीजों का अंकुरण एवं उनकी वृद्धि को कम करके खरपतवारों की संख्या में काफी हद तक कमी की जा सकती है। इसके अतिरिक्त विविध फसल प्रणालियां एकल प्रणाली की तुलना में जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाले नुकसान को कम करके बेहतर फसल उत्पादन देने में कारगर सिद्ध पायी गई हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि फसल विविधीकरण बढ़ाने से खरपतवारों पर अधिक दबाव पड़ सकता है तथा खरपतवार नियंत्रण के लिए बाहरी रसायनों पर निर्भरता कम हो सकती है। एकलप्रणाली की तुलना में फसल विविधीकरण में विभिन्न फसले/फसलों की प्रजातियां शामिल की जाती हैं, फसल चक्र मे दलहनी फसलों का समावेश किया जाता है। फसल विविधीकरण से फसलों की पैदावार में बढ़ोत्तरी, भूमि के स्वास्थ्य में सुधार के साथ–साथ खरपतवारों की संख्या में कमी तथा कीट–व्याधियों में भी कमी आंकी गई है।

खरपतवार प्रबंधन पर आधारित फसल विविधीकरण

फसल विविधीकरण द्वारा खरपतवार प्रबंधन के लिए दो प्रमुख सिद्धान्तों का पालन किया जाता है।

1. विभिन्न फसल प्रबंधन वाली फसलों के अनुक्रमों का उपयोग करके खरपतवारों के अंकुरण एवं वृद्धि को कम करना।
2. फसल विविधीकरण के तरीकों द्वारा पोषक तत्वों, नमी एवं प्रकाश को फसलों के पक्ष में अधिकतम करने के लिए डिजाइन किया जाना। जिससें खरपतवारों को इनकी उपलब्धता कम से कम हो पाये।

ये सिद्धांत किसी भी फसल विविधीकरण विधियों (जैसे फसल चक्र, कवर क्रापिंग और इंटरक्रापिंग) के लिए आधार होना चाहिए। विविधीकरण का उद्देश्य सभी खरपतवारों को पूरी तरह खत्म करना नहीं है बल्कि उन्हें नियंत्रित करके उनके द्वारा फसलों में होने वाले नुकसान को कम करना हैं। क्योकि कुछ खरपतवार फसलों, मनुष्यों एवं पशुओं के लिए फायदेमंद भी होते हैं तथा विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं भीप्रदान करते हैं।

फसल चक्रण

एक ही भूमि पर समय के साथ क्रमिक रूप से कई फसलों को उगाने की प्रथा को फसल चक्रण कहां जाता है। जिसका उद्देश्य न्यूनतम लागत के साथ उच्च आर्थिक उत्पादकता प्रदान करता है। फसल चक्रण खरपतवारों के दबाव को कम करने और फसल की पैदावार बढ़ाने के साथ–साथ भूमि के स्वास्थ्य में सुधार, कीट व्याधियों की संख्या में कमी भी करता हैं। एकल फसल प्रणाली में खरपतवार प्रजातियां प्रबंधन प्रथाओं के अनुकूल हो जाती है और फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करके पैदावार में कमी लाती हैं। फसल चक्रण में खरपतवारों को विविध खरपतवार प्रबंधन की विविधों (जैसे जीरो टिलेज, जुताई, विविध शाकनाशी रसायनों का प्रयोग, बुवाई की तिथि, कतारों के बीच की दूरी, उर्वरक एवं सिंचाई की व्यवस्था के अधीन करके उनकी वृद्धि एवं विकास को रोककर बीज उत्पादन को कम कर दिया जाता है। जिससे उनके प्रबंधन मे आसानी होती है। उदाहरण के लिए धान आधारित एकल फसल चक्रण (सीधी बुवाई धान–गेहूं–मूंग) को निरन्तर अपनाने से धान मे घास कुल के खरपतवारों जैसे- संवा, डिजिटेरिया, डाईनेब्रा, दूब घास एवं मोथा की अधिकता हो जाती है तथा धान के लिये अनुमोदित शाकनाशी रसायनों द्वारा इनका समुचित नियंत्रण न होने से धान की पैदावार में काफी कमी (70–80 प्रतिशत) पायी गई है। परन्तु फसल चक्र मे धान की जगह 1–2 वर्ष मक्का की फसल लगाने से मक्के के लिए अनुशंसित शाकनाशी रसायनों के प्रयोग से घास कुल एवं मोथा के इन खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। तथा 1–2 वर्ष बाद पुन: धान की फसल को अपनाया जा सकता है।

धान आधारित एकल फसलचक्रण (सीधी बुवाई धान-गेहूं-मूंग) को निरन्तर 12 वर्षो तक अपनाने से धान में घासकुल के खरपतवारों की अधिकता

लगातार 12 वर्षों तक सीधी बुवाई वाले धान के स्थान पर मक्का की फसल

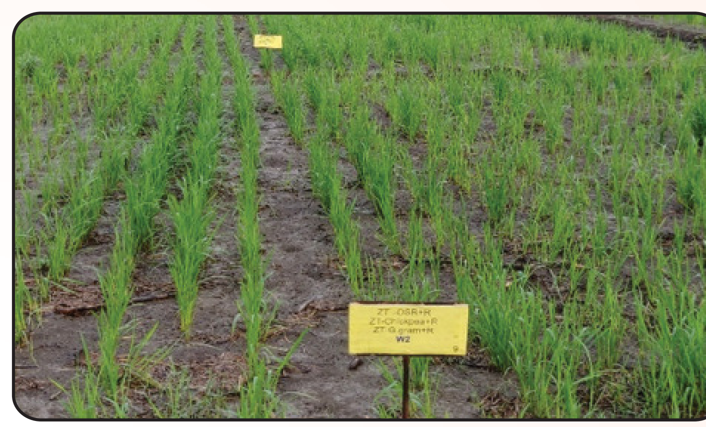

2-3 वर्षों तक मक्का लगाने के बाद पुन: सीधी बुवाई वाला धान

चित्र 1: धान आधारित एकल फसलचक्रण (सीधी बुवाई धान-गेहूं-मूंग) में फसल विविधिकरण द्वारा खरपतवार प्रबंधन

फसल विविधीकरण से जहां एक ओर फसल अनुसार शाकनाशियों मे बदलाव के कारण खरपतवारों के प्रकार एवं घनत्व मे कमी आती है, वहीं दूसरी ओर फसल प्रबंधन के तरीकों में बदलाव से खरपतवारों के अंकुरण, वृद्धि एवं विकास, एवं उनकी बीज उत्पादन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। फसल चक्रण में ऊंचाई वाली फसलों जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा, गन्ना आदि को अपनाने से बाद में उगने वाले खरपतवारों का विकास रूक जाता है। शाकनाशी प्रतिरोध को कम करने के लिए फसल चक्रण को सर्वोत्तम प्रबंधन तकनीकों मे से प्रमुख माना गया है। फसल चक्रण विभिन्न क्रियाविधि वाले शाकनाशियों के उपयोग को बढ़ावा देकर खरपतवारों में शाकनाशी प्रतिरोध को रोकने मे भी मदद कर सकता है। उचित फसल चक्रण द्वारा परजीवी खरपतवारों का आसानी से प्रबंधन किया जा सकता है।

अंतर फसल (इंटरक्रॉपिंग)

अंतरफसल एकीकृत खरपतवार प्रबंधन का मुख्य अंग है। जिसमें दो या अधिक फसलों को एक साथ उगाया जाता है। और कुछ समय तक सह-अस्तित्व में रहते हैं। इसका प्रयोग सामान्यत: कम इनपुट और संसाधन सीमित कृषि प्रणालियों में लघु एवं सीमांत कृषकों द्वारा किया जाता है।

खरपतवार प्रबंधन की दृष्टि से अंतरफसल से खरपतवार का दबाव कम होता है और फसलों को बढ़ने में मदद मिलती है। मुख्य फसल की दो कतारों के बीच खाली जगह में खरपतवार अधिक उग जाते है। इन खाली स्थानों में कम अवधि वाली एवं शीघ्र बढ़ने वाली अंतर फसलें लगाने से खरपतवरों पर काफी हद तक काबू पाया जा सकता है। उदाहरण के लिए मक्का के साथ लोबिया की अंतरफसल लेने से खरपतवारों की संख्या एवं शुष्कभार में कमी देखी गई है।

खरपतवार प्रबंधन के साथ-साथ अंतरफसल में दलहनी फसलों जैसे लोबिया, सोयाबीन मूंग, उड़द, मूंगफली आदि लेने से भूमि की उर्वराशक्ति मे भी वृद्धि होती है। जिसके कारण फसलों की वृद्धि होने से खरपतवारों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

संसाधन विभाजन के अलावा अंतरफसलों में एलीलोपैथिक अंतक्रियाएं भी शामिल हो सकती है, जो पर्यावरण अनुकूल एवं आर्थिक रूप से खरपतवार नियंत्रण प्रदान करती है। एलीलोपैथी तंत्र में पड़ोसी

पौधों के बीच निरोधात्मक एवं उत्तेजक दोनो संबंध शामिल है जो सीधे पौधों की वृद्धि एवं विकास को प्रभावित करते है। अनुसंधान परिणामों मे यह पाया गया है कि फसलों के साथ ज्वार की अंतरफसल लगाने से उनकी एकल फसल की तुलना में बेहतर खरपतवार नियंत्रण एवं पैदावार निकलती है।

परजीवी खरपतवारों जैसे अमरबेल (कस्कुटा), भूंईफोड (ओरोबैंकी) एवं अगिया (स्ट्राइगा) के प्रबंधन में भी फसल विविधीकरण का महत्वपूर्ण योगदान है। अंतरफसल तकनीक भी इन परजीवी खरपतवारों को फैलने से रोकती हैं। परजीवी खरपतवार स्ट्राइगा के प्रबंधन के लिए मक्के में मूंगफली/सोयाबीन की अंतरफसल लेने से मक्के की अधिक पैदावार के साथ–साथ स्ट्राइगा का नियंत्रण भी होता है।

चित्र 2(अ): मक्का के साथ लोबिया की अंतरफसल

चित्र सं. 2(ब): मक्का की सामान्य फसल में खरपतवार

कवर फसलें

कवर फसलें मृदा स्वास्थ्य सुधारने, मिट्टी के कटाव को कम करने तथा खरपतवारों एवं अन्य कीट व्याधियों के प्रभाव को कम करने के लिए बढ़ते मौसमों के बीच लगाई जाती हैं। कवर फसले शीघ्र बढ़ने के साथ–साथ खरपतवारों से प्रकाश, पानी एवं पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा करके खरपतवारों के विकास को दबाती हैं। फसल की समाप्ति के बाद यह मिट्टी की सतह पर गीली घास की परत बनाती हैं, जो खरपतवारों के बीज के अंकुरण, उद्भव एवं स्थापना को कम कर देती हैं। इसके अतिरिक्त कुछ कवर फसलों मे एलीलोकेमिकल्स के कारण खरपतवारों पर प्रतिकूल प्रभाव देखा गया है।

ढैंचा की कवर क्रॉपिंग

आधुनिक खेती में खरपतवार नियंत्रण के लिए शाकनाशी रसायनों पर निर्भरता बढ़ती जा रही है, परिणमस्वरूप शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवारों की संख्या में लगातार बढ़ोत्तरी, कृषि रसायनों से जुड़ी बढ़ती स्वास्थ्य समस्याएं, जल एवं मृदा प्रदूषण आदि में भी बढ़ोत्तरी दर्ज की जा रही है। ऐसे में एक टिकाऊ एवं लचीली फसल विविधीकरण पद्धति द्वारा खरपतवारों का प्रबंधन द्वारा न केवल खरपतवारों की समस्याओं से आसानी से निपटा जा सकता है, बल्कि जलवायु परिवर्तन के दौर मे टिकाऊ कृषि प्रणाली विकसित करके खाद्यान्न उत्पादन में भविष्य की चुनौतियों से भी निपटा जा सकता है।

रबी फसलों में उन्नत खरपतवार प्रबन्धन

पी.के सिंह, वी.के. चौधरी, योगिता घरडे, जमालुद्दीन ए. एवं जे.एस. मिश्र
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्रस्तावना

वर्तमान वैश्विक परिवेश में कृषि से अधिक लाभ अर्जित करने के लिए सामान्य लागत में अधिकतम उत्पादन नितांत आवश्यक है। लेकिन भारतीय किसान उन्नत किस्म के बीज, उपयुक्त उर्वरक, नियमित सिंचाई तथा पादप सुरक्षा के विभिन्न उपाय जैसे उत्पादन साधनों को वैज्ञानिक विधि से अपनाकर कृषि से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के अपने लक्ष्य में अब भी पूर्णतया सफल नहीं हो पा रहा है। इसका एक प्रमुख कारण कृषि में जैविक एवं अजैविक स्ट्रैस से उपज में कमी होना है। जैविक स्ट्रैस (जैसे कीट, बीमारी, खरपतवार, निमेटोड, चूहे आदि) फसलों को लगभग 40 प्रतिशत तक का नुकसान पहुंचाते है। देश में बढ़ती जनसंख्या के अनुरूप अधिक खाद्यान्न उत्पन्न करने के लिए जैविक एवं अजैविक स्ट्रैस से फसलों को बचाना तथा उर्वरक, पानी एवं अन्य संसाधनों का समुचित ढंग से उपयोग करना आवश्यक है। सामान्यत: यह पाया गया है कि खरपतवारों से फसलों की उपज में लगभग 37 प्रतिशत तक की कमी आती है। निदेशालय द्वारा किये गये एक अध्ययन के अनुसार देश में प्रतिवर्ष 10 प्रमुख फसलों में ही खरपतवारों द्वारा लगभग 70,000 करोड़ रूपये का नुकसान होता है। रबी के मौसम में मुख्यत: गेहूं, चना, मटर, मसूर, सरसों, गन्ना, आलू, सूरजमुखी एवं सब्जियाँ उगाई जाती हैं। इन फसलों से अधिक उत्पादन लेने में बाधक प्रमुख कारकों में खरपतवारों का प्रकोप मुख्य है। ऐसा पाया गया है कि किसान कीटों एवं बीमारियों से अधिक भयभीत होता है एवं इनके निदान हेतु प्रयास भी करता है। क्योंकि इससे होने वाले नुकसान उसे प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देते हैं। लेकिन किसान फसल के साथ–साथ उगने वाले खरपतवारों के प्रति उदासीन रहता है एवं जब खरपतवार पूर्ण रूप से फसल को प्रभावित कर लेते हैं, तभी इसके नियंत्रण हेतु कारगर उपाय ढूंढता है। लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होती है तथा खरपतवार पर्याप्त नुकसान पहुंचा चुके होते हैं, एवं इस स्थिति में खरपतवार प्रबंधन आर्थिक रूप से लाभप्रद भी नहीं होते है। अत: खरपतवारों का उचित समय पर प्रभावी नियंत्रण बहुत ही आवश्यक है।

विभिन्न पीड़को द्वारा फसलो में हानियाँ

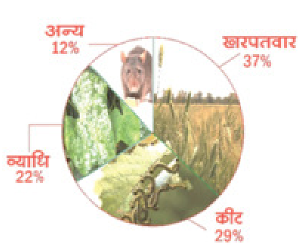

- खरपतवार फसलो के साथ प्राकृतिक संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा कर विभिन्न पीड़को द्वारा होने वाली कुल फसल नुकसान का एक तिहाई से ज्यादा हानि करता है।
- विभिन्न फसलो में खरपतवारों द्वारा औसतन नुकसान 13.8 (रोपित धान) से लेकर 35.8 % (मूंगफली) तक होता है।

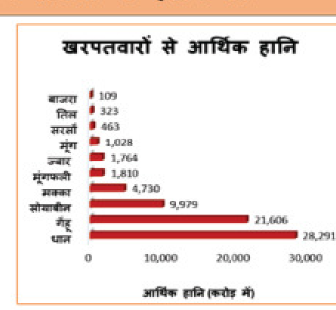

- निदेशालय द्वारा 10 प्रमुख फसलों के राष्ट्रीय स्तर पर किये गये आंकलन में खरपतवारो की उचित प्रबंधन न होने पर प्रति वर्ष 70,103 करोड़ रुपये की आर्थिक उपज हानि का अनुमान लगाया गया ।
- खेती की कुल लागत का ~20-30% खर्च खरपतवार प्रबंधन में लगता है।

रबी फसलों के प्रमुख खरपतवार

प्राय: खरपतवारों की उपस्थिति वहां की जलवायु, भूमि संरचना, नमी की मात्रा, खरपतवार, बीज भंडार, उगाये जाने वाले फसलों के प्रकार, फसल चक्र इत्यादि पर निर्भर करती है। इस कारण एक ही फसल में अलग–अलग स्थानों पर भिन्न प्रकार के खरपतवार उगते हैं। रबी मौसम के अंतर्गत प्रमुख रूप से घास, मोथा, चौड़ी पत्ती एवं परजीवी वर्ग के खरपतवार विभिन्न फसलों के साथ उगते हैं। रबी के प्रमुख फसल के साथ उगने वाले खरपतवार निम्नलिखित हैं–

खरपतवार का हिन्दी नाम	वानस्पतिक नाम	प्रभावित प्रमुख फसलें
कृष्णनील	*एनागेलिस आरवेंसिस*	गेहूँ, जौ, चना, मसूर, सरसों, अलसी, बरसीम
सत्यानाशी	*आर्जिमोन मेक्सिकाना*	चना, मसूर, सरसों एवं खाली भूमि
वनप्याजी	*एस्फोडिलस टेन्यूफोलियस*	गेहूँ, जौ, चना, अलसी, सरसों, मटर, मसूर, धनिया
जंगली जई	*एविना फतुआ/लुडोविसियाना*	गेहूँ, जौ, चना
बथुआ	*चिनोपोडियम एलबम*	गेहूँ, चना, आलू, मटर, मसूर, सरसों, अलसी
खरतुआ/खरबथुआ	*चिनोपोडियम मुरेल*	गेहूँ, चना, आलू मटर, मसूर, सरसों, अलसी
कटेली	*सिरसियम आरबेंस*	गेहूँ, जौ, चना, बरसीम, मटर, मसूर, आलू, सरसों
हिरनखुरी	*कन्वाल्वुलस आरवेंसिस*	गेहूँ, जौ, जई, गन्ना, आलू, मटर, मसूर, सरसों, अलसी, तम्बाखू
बनसोया/पित्त पापड़ा	*यूमेरिया पारविफ्लोरा*	गेहूँ, जौ, चना, जई
चटरी मटरी	*लेथाइरस अफाका*	गेहूँ, चना, मटर
जंगली गोभी	*लेनिया एस्पेलेनिफोलिया*	रबी मौसम की सब्जियाँ, मेथी, बरसीम

जंगली लुसर्न	*मेडिकागो डेन्टिकुलेटा*	मेथी, बरसीम, सरसों, चना, मटर
सफेद सेंजी	*मेलिलोटस एल्बा*	गेहूँ, जौ, चना, जई, मटर, आलू, सरसों, मसूर, अलसी
पीली सेंजी	*मेलिलोटस इण्डिका*	गेहूँ, जौ, जई, चना, मटर, आलू, सरसों, मसूर
रूखड़ी/बांदा/भुई फोड़	*ओराबंकी एजिप्टियाका*	सरसों, टमाटर, बैंगन, तम्बाकू
अमरबेल	*कस्कुटा कम्पेस्ट्रिस*	मसूर, चना, प्याज, अलसी
गुल्ली डंडा/गेहूँ का मामा	*फेलेरिस माइनर*	गेहूँ, जौ
बैंगनी कटेली/महू कटया	*सोलेनम जेन्थाकारपम*	बंजर भूमि, बगीचे एवं सड़कों के किनारे
मुनमुना/चटरी	*विसिया हिरसुटा*	गेहूँ, जौ, जई, मटर, चना, आलू
गेगला/अकरी	*विसिया सेटाइवा*	गेहूँ, जौ, जई, चना, मटर

कृष्णनील

सत्यानाशी

वनप्याजी

जंगली जई

बथुआ

खरतुआ/खरबथुआ

कटेली

हिरनखुरी

बनसोया/पित्त पापड़ा

चटरी मटरी

जंगली गोभी

जंगली लुसन

सफेद सेंजी

पीली सेंजी

भुईफोड़

गेहूँ का मामा

बैंगनी कटेली

मुनमुना/चटरी

गेगला/अकरी

अमरबेल

खरपतवारों की विशेषता

खरपतवारों में सूखा सहन करने के विशेष गुण होने के कारण इनकी बढ़वार कम पानी में भी आसानी से होती है। इन खरपतवारों में जड़ो की संख्या तथा लंबाई अधिक होती है जिससे यह मृदा की अधिकतम गहराई से पानी तथा पोषक तत्वों को ग्रहण करते हैं। खरपतवार की पत्तियों में पर्णरन्ध्र अधिक होने के कारण यह अधिक सक्रिय होते है। सामान्यत: खरपतवार फसल से या तो पहले पक जाते हैं, जिससे इनके बीज वहीं झड़ जाते हैं और मिट्टी में खरपतवार के बीज सुरक्षित पड़े रहते हैं अथवा फसलों के साथ ही पक कर काट लिए जाते हैं और जिसके कारण फसल के बीज और खरपतवार के बीज मिश्रित हो जाते हैं।

खरपतवार-फसल प्रतिस्पर्धा

खरपतवार फसलों के लिए उपलब्ध पोषक तत्व, नमी, सूर्य के प्रकाश, स्थान, एवं वायु के उपयोग के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। जिसके कारण फसलों की अधिकतम ऊर्जा व्यर्थ हो जाती है, तथा फसल प्रारंभिक अवस्था में ही कमजोर हो जाती है। खरपतवारों का अंकुरण सामान्यतया फसल से पहले हो जाता है, जिससे मुख्य फसल को पर्याप्त स्थान नहीं मिल पाता। जिससे फसल की स्थापना प्रभावित होती है। खरपतवारों की जड़ों की संख्या एवं लंबाई फसल की तुलना में अधिक होती है, जिससे ये पोषक तत्वों का उपयोग अधिक गहराई से करते हैं। साथ ही साथ खरपतवार में अधिक रन्ध्रावकाश के कारण ये जल की हानि भी अधिक करते हैं।

फलस्वरूप जल स्तर कम होता है एवं जल की मांग बढ़ जाती है। खरपतवार प्रमुख फसलों के कीट एवं बीमारियों को भी आश्रय देते है जिससे फसलों में कीट एवं बीमारियों का प्रकोप भी बढ़ जाता है। सामान्यतया खरपतवार एवं फसलों के बीच की प्रतिस्पर्धा खरपतवारों की संख्या तथा शुष्कभार पर निर्भर करती हैं, इसलिए इन खरपतवारों को यदि प्रारंभिक अवस्था में ही नियंत्रित नहीं किया गया तो ज्यादा क्षति होती हैं। फसलों में निर्धारित खरपतवार नियंत्रण की क्रांतिक अवधि सारणी–1 में दी गई है ।

सारणी–1: विभिन्न रबी फसलों में खरपतवार नियंत्रण की क्रांतिक अवस्था

फसल	क्रांतिक अवधि (बुवाई के दिन बाद)
गेहूँ	30–45
चना	15–30
मटर	30–45
मसूर	30–60
सरसों	15–40
अलसी	20–45
सूरजमुखी	30–45
गन्ना	30–120
गोभी	30–45
टमाटर	30–45
आलू	20–40
प्याज	30–75
जौ	15–45
रबी मक्का	30–45
गाजर	15–20
मिर्च	30–45
बैंगन	20–60

खरपतवारों का नमी पर प्रभाव

खरपतवारों की जल मांग सामान्यत: मुख्य फसल की जल मांग से अधिक होती है तथा खरपतवारों में कम जल अवस्था में भी जीवित रहने के गुण होते हैं। अत: फसल के साथ खरपतवार जल के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, और फसल की बढ़वार को प्रभावित कर देते है, जिससे उत्पादन और गुणवत्ता पर विपरीत असर पड़ता है।

खरपतवारों द्वारा मृदा में पोषक तत्वों पर प्रभाव

मृदा में विभिन्न पोषक तत्व जो फसल के लिए उपयोगी एवं आवश्यक होते है, खरपतवारों द्वारा औसतन 7–20 प्रतिशत तक ग्रहण कर किये जाते हैं। विभिन्न अनुसंधान परिणामों से यह स्पष्ट है कि खरपतवार फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा कर प्रमुख पोषक तत्वों को निम्नलिखित मात्रा में अवशोषित करते हैं (**सारणी 2**)।

सारणी–2: विभिन्न फसलों में खरपतवारों द्वारा भूमि में पोषक तत्व की हानि

फसल	पोषक तत्व (कि.ग्रा./हे.)		
	नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटाश
गेहूँ	20–90	2–13	28–54
चना	29–55	3–8	15–72
मटर	61–72	7–14	21–105
मसूर	39	5	21
सरसों	22	3	12
अलसी	32	3	13
गन्ना	35–162	24–44	135–242

खरपतवारों द्वारा फसलों की उपज पर प्रभाव

खरपतवार फसलों की उत्पादकता को बुरी तरह प्रभावित करते हैं। सामान्यत: खरपतवारों के प्रकोप से दलहनी फसलों में 20 से 50 प्रतिशत, तिलहन फसलों में 15 से 60 प्रतिशत तथा गेहूं व जौ आदि खाद्यान्न फसलों में 10 से 50 प्रतिशत तक पैदावार में कमी आ जाती है। सामान्यत: रबी की फसलों की पैदावार में खरपतवारों द्वारा लगभग 10–80 प्रतिशत तक की कमी आ जाती हैं, साथ ही साथ फसलों के दानो, तेल एवं प्रोटीन प्रतिशत में तथा गन्ने में शर्करा की मात्रा में कमी हो जाती हैं। तथा सब्जियों एवं चारे के गुण भी नष्ट हो जाते है, इन सब कारणों से फसलों की कीमत भी बाजार में कम प्राप्त होती है। रबी की विभिन्न फसलों में खरपतवारों से होने वाली उपज में हानि सारणी–3 में दी गई हैं।

सारणी–3: विभिन्न रबी फसलों में खरपतवार द्वारा उपज में हानि

फसल	उपज में हानि (%)
गेहूँ	20–40
जौ	10–30
रबी मक्का	20–40
चना	30–50
मटर	20–30
मसूर	20–30
सरसों	15–30
अलसी	30–40
सूरजमुखी	30–50
कुसुम	34–60
गन्ना	20–30
गोभी	50–60
टमाटर	40–70
आलू	30–60
प्याज	60–70
गाजर	70–80
मिर्च	40–70
बैंगन	30–50

खरपतवारों का उन्नत प्रबंधन

खरपतवारों का प्रबंधन फसल की शुरूआती अवस्था से करने पर अधिक लाभप्रद परिणाम प्राप्त होते हैं। प्रत्येक फसल की एक अवस्था होती है, खरपतवार प्रबंधन को फसल की क्रांतिक अवस्था में करना ज्यादा उचित एवं लाभप्रद होता है। फसलों में खरपतवार प्रबंधन हेतु सुरक्षात्मक विधि, सस्य क्रियाएँ, यांत्रिक विधियाँ एवं रसायनिक नियंत्रण आदि विभिन्न विधियों का एकीकृत उपयोग प्रभावकारी एवं लाभकारी होता है।

सभी फसलों में एक निश्चित अवधि में ही किया गया खरपतवार नियंत्रण आर्थिक रूप से लाभकारी होता है। यह आवश्यक नहीं हैं कि फसल की पूरी अवधि के दौरान खरपतवार नियंत्रण किया जाए। अनुसंधानों द्वारा प्रत्येक फसल में खरपतवारों से अधिकतम हानि की अवधि निर्धारित की गई है, इस अवधि को क्रांतिक अवधि/अवस्था कहते हैं। क्रांतिक अवधि में फसल, खरपतवारों से मुक्त रहने पर अधिकतम उपज एवं आर्थिक लाभ प्रदान करती है।

(अ) सुरक्षात्मक (निरोधक) विधि

ऐसे उपाय जिनसे खरपतवार का खेत में प्रवेश एवं उनका प्रसार न हो पाए।

- खरपतवार बीज मुक्त फसल के बीज का चुनाव करें।
- अच्छी तरह सड़ी कम्पोस्ट खाद का ही उपयोग करें।
- कृषि यंत्रों (ट्रेक्टर, सीडड्रील इत्यादि) की साफ–सफाई कर उसे खरपतवार के बीज आदि से मुक्त रखें।
- सिचांई की नालियों, मेंड़ो के आस–पास खरपतवार पनपने न दें।
- फूल आने से पहले ही खरपतवार का नियंत्रण करें, जिससे इनके प्रसार में कमी आएगी।
- रोपाई वाली फसलो की पौधशाला में ही खरपतवारों को नियंत्रित करें।

(ब) सस्य विधि

- स्टेल सीड–बेड पद्धति अपनाएँ। इसके अतंर्गत फसल बोने से पहले खेत में सिंचाई करें, 10–15 दिन बाद जब खेत में खरपतवार उग जाये, तो हल्की जुताई अथवा पैराक्वाट शाकनाशी के प्रयोग से इन्हें नष्ट कर दें। इसके पश्चात् फसल की बुवाई करे।
- फसल–चक्र अवश्य अपनाएं, जिससे कुछ विशेष प्रकार के खरपतवारों के उगने का चक्र प्रभावित होता है । फसल–चक्र में कम समय में ज़मीन ढकने वाली फसलों/किस्मों का चुनाव अवश्य करें। यदि परजीवी खरपतवार की समस्या है तो ऐसी फसले उगाएँ जिन पर इनका ग्रसन नहीं होता है।
- उपयुक्त फसल किस्म का चयन करें जो खरपतवार की बढ़वार को रोके।
- यह ध्यान रखें कि फसल बोने की बीज दर संस्तुति अनुरूप हो, यदि कम बीज दर उपयोग किया गया है तब खरपतवारों की संख्या में बढ़ोतरी सभंव है ।
- फसल सही समय पर न बोने से भी खरपतवारों की संख्या बढ़ती है।
- फसल में खाद पौधे की कतारों में ही दें न कि पूरे खेत में छिड़काव करें। इससे खाद का अधिकतम उपयोग फसल की बढ़वार में होगा न कि खरपतवार के लिए ।
- मृदा सूर्यीकरण पद्धति से भी खरपतवार नियंत्रण किया जाता है। इस विधि में ग्रीष्म ऋतु में खेतों की गहरी जुताई कर उनमें सिंचाई करते हैं। एक–दो दिन बाद पतली पारदर्शी प्लास्टिक (पोलीइथाईलीन) की परत (50 माइक्रोन) खेत में विछाकर 30–40 दिनों के लिए मिट्टी का तापक्रम बढ़ाया जाता है जिससे खरपतवार के बीज और उनके अंकुर नष्ट हो जाते हैं।
- शून्य जुताई (जीरो टिलेज) तकनीक का उपयोग करने से भी खरपतवारों में कमी आती है साथ ही जुताई के खर्च में भी कमी की जा सकती है।
- भूसे की मल्चिंग एवं काली पॉलीथीन शीट के मल्चिंग का उपयोग उच्च लाभ वाली फसलों में करने से भी खरपतवार की समस्या से निदान संभव है।

शून्य जुताई मशीन द्वारा बुवाई (हैप्पी सीडर)

पॉलीथीन शीट की मल्चिंग

गन्ना में यांत्रिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण

मृदा सूर्यीकरण द्वारा खरपतवार प्रबंधन

(स) यांत्रिक विधि

यह विधि खरपतवार नियंत्रण का सरल एवं प्रभावी तरीका है जिसमें फसल को शुरूआती अवस्था से ही खरपतवार मुक्त रखा जाता है। इसके लिए विभिन्न प्रकार के खुरपी, हाथ/बैटरी/पावर से चलने वाले यंत्र जैसे हैन्ड–हो, वीडर एवं पावर वीडर आदि का उपयोग करके रबी की फसलों में खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है। फसल की प्रारंभिक अवस्था में बुवाई के 15–45 दिन के मध्य फसलों को खरपतवारों से मुक्त रखना जरुरी है। सामान्यतः दो निराई–गुड़ाई, पहली 20–25 व दूसरी 40–45 दिन बाद करने से खरपतवारों का नियंत्रण प्रभावी ढंग से होता है। इसके लिए परम्परागत कृषि यंत्रों के अतिरिक्त उन्नत नींदानाशक यंत्रों जैसे खींचकर अथवा ढकेलकर चलाये जाने वाले सस्ते हल्के एवं प्रभावी वीडरों का प्रयोग किया जा सकता है। इन यंत्रों का प्रयोग कतार में बोई गई फसलों में ही सम्भव है। इसे खड़ी फसल में एक या दो बार प्रयोग करने पर खरपतवारों का प्रभावी नियत्रंण होता है।

हैन्ड–हो द्वारा निदाई

स्वचालित रोटरी पावर वीडर

(द) रासायनिक विधि

कृषि हेतु मानव श्रम की उपलब्धता दिनों दिन कम होती जा रही है। अतः खरपतवार नियंत्रण में रसायनों का उपयोग बढ़ता जा रहा है। खरपतवार प्रबंधन की दृष्टि से शाकनाशी रसायन अधिक प्रभावी एवं लाभकारी है। यदि शाकनाशियों की अनुसंशित मात्रा उचित समय एवं तरीके से किया जावे तो इसका पर्यावरण पर कम दुष्प्रभाव पड़ता है तथा फसल उत्पाद एवं मृदा में अवशेष नही बचते।

फसलों में उपयोग किये जाने वाले शाकनाशियों का प्रयोग मुख्यतः तीन तरीकों से किया जाता है।

1. **बुआई पूर्व मृदा में मिलावट**– इस प्रकार के उपयोग होने वाले शाकनाशियों को फसल के बुआई पूर्व एवं खेत की अंतिम जुताई के समय मृदा में मिला देना चाहिए। इस बात का ध्यान रहें कि खेत में पर्याप्त नमी उपलब्ध हो, जैसे–फ्लूक्लोरालिन ।
2. **अंकुरण पूर्व उपयोग**– इस प्रकार के शाकनाशी का प्रयोग बुआई के 3 दिन के भीतर किया जाता है, जैसे–पेन्डीमेथेलीन ।
3. **अंकुरण पश्चात् उपयोग**– इस प्रकार के शाकनाशियों का प्रयोग बुआई के 20–30 दिन की अवस्था में की जाती है। शाकनाशियों के आधार पर उनका उपयोग निश्चित समय अवधि में करनी चाहिए। जैसे– 2,4–डी, सल्फोसल्फ्यूरान, मेटसल्फ्यूरान, क्लोडिनोफाप इत्यादि। ये शाकनाशी खरपतवारों की पत्तियों एवं मृदा में सक्रिय होकर खरपतवारों को अंकुरण पश्चात नष्ट करते है।

रबी की फसल में निम्नलिखित शाकनाशियों का प्रयोग, समय, मात्रा तथा खरपतवारों पर प्रभावी नियंत्रण सारणी–4 में दर्शाया गया है।

सारणी–4: रबी फसलों में खरपतवार नियंत्रण हेतु अनुशंसित शाकनाशी

फसल	शाकनाशी	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्रा./हे.)	व्यावसायिक उत्पाद मात्रा (ग्रा./हे.)	प्रयोग का समय (बुवाई/ रोपाई के दिन बाद)	नियंत्रित होने वाले खरपतवार
गेहूं	पेन्डीमिथेलीन	678 1000–1500	1750 (38.7% सी. एस.) 3300–5000 (30% ई. सी.)	0–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	मेटसल्फ्यूरान मिथाइल	4	20 (20% डब्लू. पी.)	30–35	चौड़ी पत्ती एवं मोथा
	2,4–डी	500–750 450–750	860–1290 (58% एस.एल.) 625–1000 (80% डब्ल्यू.पी.) 1320–2200 (38% ई. सी.)	30–35	चौड़ी पत्ती
	कारफेन्ट्राजॉन– इथाइल	20	50 (40% डी. एफ.)	25–30	चौड़ी पत्ती
	क्लोडिनोफोप– प्रोपार्जिल	60	400 (15% डब्लू. पी.)	30–35	घास (विशेषकर जंगली जई)
	फिनाक्साप्राप – पी– इथाइल	100–120	1000–1200 (10% ई. सी.)	30–35	घास
	पिनॉक्साडेन	40–50	800–900 (5% ई.सी.)	25–30	घास
	आइसोप्रोट्यूरान	1000	1330 (75% डब्लू. पी.) 2000 (50% डब्लू. पी.)	25–30	वार्षिक चौड़ी पत्ती व घास
	सल्फोसल्फ्यूरान	25	33.3 (75% डब्लू. पी.)	25–30	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	सल्फोसल्फ्यूरान + मेटसल्फ्यूरान	30+2	40 (75+5% डब्लू. जी.)	25–30	घास, चौड़ी पत्ती एवं मोथा
	मेसोसल्फ्यूरान + आइडोसल्फ्यूरान	12+2.4	400 (3+0.6% डब्लू.जी.)	25–30	घास, चौड़ी पत्ती एवं मोथा
	क्लोडिनोफाप + मेटसल्फ्यूरान	60+4	400 (15+1% डब्लू. पी.)	30–35	घास एवं चौड़ी पत्ती
	पइरोक्सासल्फोन	127.5	150 एम.एल. (85% डब्लू.जी.)	0–2	गेंहू का मामा
	कार्फेन्ट्राजोन + सल्फोसल्फ्युरान	20+25	100 (20+20% डब्लू.जी.)	25–30	घास एवं चौड़ी पत्ती
	क्लोडिनोफॉप + मेट्रीब्युजीन	54+120	600 (9+20% डब्लू.पी.)	25–30	घास एवं चौड़ी पत्ती

	पेन्डीमिथेलीन + मेट्रीब्यूजीन	875+87.5	2500 (35+3.5% एस.ई.)	0–2	घास एवं चौड़ी पत्ती
	फेनाक्साप्राप + मेट्रीब्यूजीन	100+175	1250 (7.77+13.6% ई.सी.)	25–30	घास एवं चौड़ी पत्ती
	हेलाक्सीफेन + फ्लोरासुलम	12.76	31.23 (20.8+20% डब्ल्यू.जी.)	25–35	चौड़ी पत्ती
	मेट्रीब्यूजीन + क्लोडिनोफॉप	210+60	500 (42+12% डब्ल्यू.जी.)	25–30	घास एवं चौड़ी पत्ती
	मेटसल्फ्यूरान + कार्फेन्ट्राजोन	25	50 (10+40% डी.एफ.)	25–30	चौड़ी पत्ती
चना, मटर, मसूर	पेन्डीमिथेलीन	678 1000	1750 (38.7% सी. एस.) 3300 (30% ई. सी.)	0–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	क्लोडिनोफोप–प्रोपार्जिल	60	400 (15% डब्लू. पी.)	25–30	घास
	फिनॉक्साप्राप–पी. इथाइल	90	900 (10% ई. सी.)	25–30	घास
सरसों	पेन्डीमिथेलीन	338.6 1000	875 (38.7% सी. एस.) 3000 (30% ई. सी.)	0–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	आक्साडायर्जील	90	1500 (50% डब्लू. पी.)	2–3 एवं 25–30	वार्षिक चौड़ी पत्ती व घास
आलू	मेट्रीब्यूजिन	525	750 (70% डब्लू. पी.)	0–3	घास एवं चौड़ी पत्ती
	पेन्डीमिथेलीन	700–1000	1750 (38.7% सी. एस.) 3000 (30% ई. सी.)	0–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	आक्सीफ्लुओरफेन	100–200	425–850 (23.5% ई. सी.)	1–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	पेराक्वाट	500	2000 (24%)	कतारों के बीच 5–10% उद्भव पर	चौड़ी पत्ती एवं मोथा
गन्ना	एट्राजिन	500–2000	1000–4000 (50% डब्लू. पी.)	1–2	चौड़ी पत्ती व कुछ घास वर्ग
	मेट्रीब्यूजिन	750	1000 (70% डब्लू. पी.)	0–3	घास एवं चौड़ी पत्ती
	2,4–डी	1200–1800 2000–2600	3530–5290 (38% ई. सी.) 2500–3250 (80% डब्लू.पी.)	30–35	चौड़ी पत्ती
	हेलोसल्फ्युरान + मेट्रीब्यूजिन	67.5+500	90 (75% डब्लू. जी.) 750 (70% डब्लू. पी.)	25–30 दिन रोपण पश्चात	मोथा घास एवं चौड़ी पत्ती
	एमीट्रिन	2000	2500 (80% डब्लू.डी.जी.)	0–3 दिन	घास एवं चौड़ी पत्ती
	सल्फेन्ट्राजोन	720	1500 (39.6%एस.सी.)	0–3 दिन	घास एवं चौड़ी पत्ती
	एमीट्रिन + ट्राईफ्लोक्सि सल्फ्युरॉन	937.5 –1125	1250–1500	0–3 दिन	घास एवं चौड़ी पत्ती
	2,4–डी (सोडियम साल्ट) + मेट्रीब्यूजिन + पायरेजोसल्फ्युरान	2400	3000 (44+35+1% डब्ल्यू.डी.जी.)	30–35 दिन	घास एवं चौड़ी पत्ती
	क्लोमाजोन + मेट्रीब्यूजीन	563+525	2500 (22.5+21% डब्ल्यू.पी.)	0–3 दिन	घास एवं चौड़ी पत्ती
	हेलोसल्फ्युरान + मेट्रीब्यूजिन	54+247.5	450 (12+55% डब्लू. जी.)	30–35 दिन	घास एवं चौड़ी पत्ती
	मिसोट्रियॉन + एट्राजिन	875	3500 (2.27+22.7% एस.सी.)	30–35 दिन	घास एवं चौड़ी पत्ती

सूरजमुखी/ अलसी	फ्लूक्लोरालिन	1000	2222 (45% ई. सी.)	बुवाई के पूर्व 1 दिन पहले तैयार खेत में मिलाएं	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	ट्राइफ्लोरेलिन	1000	2000 (48% ई. सी.)	बुवाई के 1 दिन पहले मिट्टी में मिलाएं	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	पेन्डीमिथेलीन	700–1000	1750 (38.7% सी. एस.) 3000 (30% ई. सी.)	0–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	क्वीजालोफाप	50	1000 (5% ई. सी.)	15–20	घास
	आक्साडायर्जिल	240	300 (80%डब्ल्यू.पी.)	0–3	घास
प्याज/ लहसुन	प्रोपाक्विजोफाप	62.5	625 (10%ई.जी.)	18–22	घास
	पेन्डीमिथेलीन	678 1000	1750 (38.7% सी. एस.) 3300 (30% ई. सी.)	0–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	आक्सीफ्लुओरफेन	100–200 150–200	425–850 (23.5% ई. सी.) 750–1000 (20% डी.एफ.)	1–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	प्रोपाक्विजोफाप + आक्सीफ्लुओरफेन	43.75+ 105	875 (5+12% ई. सी.)	18–22	घास एवं चौड़ी पत्ती
	क्वीजालोफाप + आक्सीफ्लुओरफेन	100	1000 (4+6% ई. सी.)	18–22	घास एवं मोथा
टमाटर	पेन्डीमिथेलीन	700–1000	1750 (38.7% सी. एस.) 3000 (30% ई. सी.)	0–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
	मेट्रीब्यूजिन	525	760 (70% डब्लू. पी.)	0–3	घास एवं चौड़ी पत्ती
फूल गोभी/ पत्ता गोभी	पेन्डीमिथेलीन	700–1000	1750 (38.7% सी. एस.) 3000 (30% ई. सी.)	0–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती
चुकन्दर/मूली /गाजर	पेन्डीमिथेलीन	700–1000	1750 (38.7% सी. एस.) 3000 (30% ई. सी.)	0–2	घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती

शाकनाशियों का प्रयोग करते समय सावधानियां

- फसल में शाकनाशी का प्रयोग अनुसंशित मात्रा, उपयुक्त पानी के साथ (500 लीटर अंकुरण पूर्व एवं 375 लीटर अंकुरण पश्चात) ही करें। इसकी उचित मात्रा संस्तुत पानी के घोल (सामान्यत: 500 लीटर प्रति हेक्टेयर) में मिलाकर मिट्टी या फसल पर एक समान छिड़काव करें।
- शाकनाशी के छिड़काव हेतु फ्लैट फैन/फ्लड जेट नोजल का ही उपयोग करें।
- खेत पर एक ही शाकनाशी का प्रयोग बार-बार न करें। शाकनाशी-चक्र उपयोग में लाएं।
- अंतर्वर्ती/मिश्रित फसलों में शाकनाशी का चयन सावधानी से संस्तुति के आधार पर ही करें।
- तेज हवा या वर्षा की संभावना होने पर शाकनाशी का प्रयोग न करें।
- शाकनाशी छिड़काव करने वाले व्यक्ति को अपने अंगों को उचित वस्त्रों से ढक कर रखना चाहिए साथ ही मुँह/नाक पर मास्क एवं आखों पर चश्में का उपयोग भी करें। उपयोग के समय किसी प्रकार का खाद्य पदार्थ, पेय पदार्थ, तम्बाकू, बीड़ी/सिगरेट का सेवन न करें।
- शाकनाशी के खाली डिब्बों को नष्ट कर दें।
- छिड़काव के बाद स्प्रेयर को अच्छी तरह साफ कर लें तथा स्प्रे करने वाले व्यक्ति को अपने अंगो को साबुन से धो लेना चाहिए।
- शाकनाशी दवा यदि भण्डारण किये है तो उसे बच्चों और जानवरों की पहुँच से दूर रखें।

देश में प्रमुख विदेशी आक्रामक खरपतवार एवं उनका प्रभाव

योगिता घरडे[1], सुरभि होता[1], पी.के. सिंह[1] एवं पी.के. गुप्ता[2]
[1]भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

यह माना जाता है कि आक्रामक विदेशी प्रजातियाँ दुनिया भर में जैव विविधता के लिए सबसे बड़ा खतरा हैं। ये प्रजातियाँ मनुष्य के द्वारा जानबूझकर या किसी अन्य माध्यम के साथ अन्य स्थान पर पहुँच जाती हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कृषि, वानिकी और मत्स्य पालन क्षेत्रों में विदेशी प्रजातियों के किसी अन्य स्थान पर स्थापित होने के कई उदाहरण हैं। यह कई कारणों जैसे यात्रा के दौरान या खाद्यान्न के साथ और लकड़ी जैसे आयात के माध्यम से होता है। कुछ आक्रामक प्रजातियाँ उस स्थान की पारिस्थितिकी तंत्र की संरचना और कार्य को प्रभावित कर सकती हैं। भारत में आक्रामक प्रजातियाँ, विशेष रूप से खरपतवार, वानिकी और कृषि के लिए एक गंभीर समस्या रहे हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि भारत में दर्ज पौधों की लगभग 45000 प्रजातियों में से लगभग 1800 विदेशी हैं। इस प्रकार, ये प्रजातियाँ पर्यावरण के लिए चिंता का एक विषय बन गया है। कृषि क्षेत्र में विदेशी आक्रामक खरपतवारों के प्रबंधन पर अधिक ध्यान दिया जाता है क्योंकि इन प्रजातियों के द्वारा किसानो को फसलों में काफी हानि उठानी पड़ती है। विदेशी आक्रामक प्रजातियों से संबंधित अंतरक्षेत्रीय समस्याओं को जानने और उन्हें दूर करने के लिए पूर्व में कोई गंभीर प्रयास नहीं किये गए हैं। इस लेख में भारत की कुछ प्रमुख आक्रामक विदेशी प्रजातियों के बारे में तथा उनके प्रसार को रोकने के लिए सरकार द्वारा बनाये गए नियम एवं कानूनों पर चर्चा की गयी है।

लैंटाना कैमरा

लैंटाना कैमरा को 1807 में भारत में एक सजावटी पौधे के रूप में राष्ट्रीय वनस्पति उद्यान और 19वीं सदी की शुरुआत में कलकत्ता में एक सजावटी बाड़ के पौधे के रूप में लाया गया था। लेकिन बाद में यह पौधा पूरे देश में सड़कों के किनारे, रेलवे पटरियों, फसल क्षेत्रों के किनारों और खुले जंगलों में फैल गया। अब यह पूरी तरह से प्राकृतिक हो चुका है और पूरे भारत में पाया जाता है। यह भारतीय चरागाह भूमि के अलावा जंगलों और परती क्षेत्रों में लगभग 13.2 मिलियन हेक्टेयर पर फैला हुआ है। यह खरपतवार उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में व्यापक रूप से फैला हुआ है, जिसमें भारत के संरक्षित वन क्षेत्र भी शामिल हैं। यह दुधवा, कॉर्बेट और राजाजी राष्ट्रीय उद्यान जैसे खुले और संरक्षित क्षेत्रों में हिमालय की तलहटी के बड़े क्षेत्रों में फैल गया है। लैंटाना ने चराई और वनों की कटाई जैसी मानवीय गतिविधियों के कारण वन क्षेत्रों पर बहुत तेजी से आक्रमण किया है। यह आमतौर पर बंजर भूमि, वर्षावन किनारों, समुद्र तटों और आग या कटाई से उबरते जंगलों जैसे खुले क्षेत्रों में सबसे अच्छा बढ़ता है। सड़कों, रेलवे पटरियों और नहरों के किनारे जैसे बाधित क्षेत्र भी इस प्रजाति के लिए अनुकूल आवास हैं। यह पौधा समुद्र तल से 1800 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है और 750 से 5000 मिमी प्रति वर्ष वर्षा के बीच बहुत अच्छी तरह से पनप सकता है। यह समृद्ध और कम उर्वरता वाली जमीन दोनों प्रकार की मिट्टी में उगता है, जिसमें बजरी और लेटराइट तथा निचले क्षेत्र और पहाड़ियों पर 1800 मीटर तक की ऊँचाई शामिल है। यह सूखा प्रतिरोधी है, प्रकाश प्रिय है और मध्यम छाया सहन कर सकता है। यह 5°C से नीचे के तापमान परिवेश पर नहीं उगता है। लैंटाना घने जंगलों में नहीं पनपता है, लेकिन जहां प्राकृतिक जंगलों को कटाई के कारण डिस्टर्ब किया गया है वहाँ पर ये स्थापित हो जाता है। यह ऊँचे वन प्रजातियों के घने जंगलों के बीच छाया में जीवित नही रह सकता है। पौधा ठंड और कम तापमान, खारे मिट्टी, दलदली या कम वर्षा, खराब जल–धारण क्षमता वाली प्रवाल मिट्टी के प्रति संवेदनशील है। यह रुट सकर्स एवं सीडलिंग के माध्यम से तेजी से फैलता है और जुगाली करने वाले जानवरों के लिए विषैला होता है। इस खरपतवार से सबसे बुरी तरह प्रभावित क्षेत्रों में दक्कन के हिस्से और कुर्ग, वायनाड, नीलगिरि और पश्चिमी घाट की निचली पहाड़ियाँ शामिल हैं। इसने उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्सों और भारतीय हिमालयी क्षेत्र के उष्णकटिबंधीय और उप–उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों सहित पूर्वोत्तर राज्यों के कुछ हिस्सों पर भी आक्रमण किया है। तराई की तलहटी, शिवालिक और उत्तर भारत के मध्य–पर्वतीय क्षेत्र में, दक्षिण की ओर के क्षेत्रों में जंगल की कटाई और निरंतर चराई के परिणाम स्वरूप, इस प्रजाति ने सफलतापूर्वक अपने पैर जमा लिए हैं। यह विशेष रूप से सड़कों, फुटपाथों और मानव बस्तियों के आसपास की भूमि पर अपना फैलाव किया है।

लैंटाना कैमरा के नियंत्रण के लिए कई तरीके है जिनको प्रभावी तरीके से लागू करने की आवश्यकता है। इन तरीको में सबसे महत्वपूर्ण है सरकारी विभागों के साथ मिलकर रोडमैप तैयार करना, जिससे लैंटाना कैमरा के प्रवेश और प्रसार को कम किया जा सके। इसके साथ ही इसके नियंत्रण के लिए अन्य उपाय भी अपनाये जा सकते है जैसे कि प्रभावी भौतिक/रासायनिक नियंत्रण तकनीकों को लागू करना, खासकर तब जब उच्च मूल्य वाली जगहों पर लैंटाना कैमरा ने आक्रमण किया हो। भौतिक/रासायनिक नियंत्रण विधियों में शामिल हैं: यांत्रिक विधियां जैसे कि स्टिक रेकिंग, बुल डोजिंग, जुताई, ग्रबिंग, ब्रश कटर का उपयोग करके उसकी कटाई करना, हाथ से खींचना और फ्लेम वीडिंग आदि। उचित रसायन का उपयोग कर भी इसका नियंत्रण किया जा सकता है जैसे कि ग्लाइफोसेट का उपयोग अच्छा नियंत्रण प्रदान करता है। फर्नीचर उत्पादों, टोकरियों, मल्च, खाद, दवाओं और अन्य जैविक रूप से सक्रिय एजेंटों जैसे महत्व के उत्पादों में लैंटाना कैमारा का उपयोग भी किया जा सकता है।

गाजरघास (*पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस*)

पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस एल. एस्टेरसी परिवार का एक सदस्य है, जिसे कांग्रेस घास के रूप में भी जाना जाता है, इसे दुनिया की 100 सबसे आक्रामक प्रजातियों में से एक माना जाता है। 40 से अधिक देशों में, इसे खेत की फसलों का एक अप्रिय खरपतवार माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि यह विदेशी खरपतवार 1950 के दशक में संयुक्त राज्य अमेरिका से आयातित PL 480 गेहूं के साथ भारत आया था। आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका, यूयोपिया, भारत और पाकिस्तान जैसे कुछ देशों में पार्थेनियम का प्रसार और संक्रमण गंभीर है। भारत में यह लगभग सभी राज्यों में एक गंभीर समस्या है। और यह उसकी कुछ विशिष्ट विशेषताओं के कारण हुआ है जैसे व्यापक अनुकूलन क्षमता, प्राकृतिक शत्रुओं की कम संख्या, सूखा सहनशीलता, बीजों में लंबे समय तक जीव क्षमता का होना, बीजों का उच्च उत्पादन, छोटे आकार और हल्के वजन वाले बीज, बीजों का लंबे समय तक फैलाव इत्यादि। हवा, पानी, पक्षी और अन्य वाहक, मजबूत प्रतिस्पर्धा और एलिलोपैथी इसे फसल क्षेत्रों पर एक सफल आक्रमणकारी बनाती है। यह हानिकारक खरपतवार अक्सर खाली भूमि, कस्बों के आसपास विकसित आवासीय कॉलोनियों, रेलवे ट्रैक, सड़कों, जल निकासी और सिंचाई नहरों आदि पर देखा जाता है। यह खरपतवार बगीचों, बागानों और सब्जियों की फसलों में बहुतायत से उगता है। अपनी उच्च उर्वरता के कारण एक पौधा 10,000 से 15,000 जीवक्षम बीज पैदा कर सकता है और ये बीज बड़े क्षेत्रों को कवर करने के लिए फैल सकते हैं और अंकुरित हो सकते हैं। लंबे समय तक इस पौधे के संपर्क में रहने वाले व्यक्तियों में त्वचा की सूजन, एक्जिमा, अस्थमा, एलर्जी, हे फीवर, जलन और आंखों के आसपास छाले के लक्षण दिखाई देते हैं। *पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस* भी दस्त, सांस फूलना और दम घुटने का कारण बन सकता है। इसके संपर्क में आने से एलर्जिक ब्रोंकाइटिस होता है, हालाँकि, इसमें जीनोटॉक्सिक क्षमता नहीं दिखाई देती है। साथ ही इसके संपर्क से पशुधन में प्रणालीगत विषाक्तता भी होती है। इसे खाने वाले पशुओं में एलोपेसिआ, त्वचा रंजकता की हानि, सूजन और दस्त की सूचना मिली है। इस खरपतवार के सेवन से गाय, भैंस और भेड़ के दूध और मांस की गुणवत्ता खराब हो जाती है। भारत में लगभग 35 मिलियन हेक्टेयर भूमि इस घास के खतरे से प्रभावित हो चुकी है।

पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस के कई हानिकारक पहलू हैं और इसका कोई विशेष उपयोग नही है। इसका उन्मूलन सरकार के साथ ही साथ हम सभी के लिए एक चुनौती है मुख्य रूप से इसकी प्रसार और प्रजनन क्षमता। इसे नियंत्रित करने के लिए निम्न उपाय कारगर है:

- गाजरघास का प्रसार सभी वर्गो के सामुदायिक प्रयास से ही रोका जा सकता है। अत: आवश्यकता है सभी को जागरूक होने की ताकि सभी के प्रयासों से इसे घर बाहर, खेतो–खलियानों को इससे मुक्त किया जा सके ।
- गाजरघास को विस्थापित करने के लिए चकोड़ा, गेंदा जैसे पौधों की प्रजातियों के बीज का छिड़काव वर्षा ऋतु में करने से काफी हद तक गाजरघास को विस्थापित किया जा सकता है ।
- इसका नियंत्रण रासायनिक विधि से भी संभव है। अकृषित भूमि में गाजरघास के नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशी ग्लाइफोसेट (1.0 – 1.5%) का छिड़काव किया जा सकता है। तथा कृषित भूमि में मिश्रित वनस्पति में गाजरघास के नियंत्रण हेतु मेट्रिब्यूजिन (0.3 – 0. 5%) या 2, 4 –डी (1.0 – 1.5%) का छिड़काव उसमें फूल आने से पहले करें ।
- इस खरपतवार को नियंत्रित करने के लिए उपलब्ध सभी जैविक नियंत्रणों में से, *जायगोग्रामा बाइकोलोराटा* का उपयोग भारत में किया जाता है। हालाँकि, इसके धीमे प्रभाव के कारण इसे त्वरित नियंत्रण के लिए कम ही अपनाया जाता है।

महकुआ (*एजीरेटम कोनीज़ोइड्स*)

एजीरेटम कोनीज़ोइड्स एस्टेरेसी परिवार का सदस्य है और इसे कृषि क्षेत्रों में एक हानिकारक और खुली परती भूमि का महत्वपूर्ण खरपतवार माना जाता है। यह दक्षिण और मध्य अमेरिका का खरपतवार है। यह निमेटोड सहित कई रोगजनकों के लिए मेजबान के रूप में भी कार्य करता है और फसलों को प्रभावित करता है। भूमि पर उगने के तुरंत बाद यह स्थानीय वनस्पति को दबा देता है जिससे चारे की अपर्याप्तता हो जाती है। जंगलों पर इसके आक्रमण से कई आवश्यक औषधीय और सुगंधित पौधों को गंभीर खतरा है। इसकी पहचान भारत में 1882 से पहले की गई थी। इसके बारे में तथ्य है कि यह विभिन्न फिनोलिक्स और वाष्पशील तेलों के माध्यम से फसल प्रजातियों की वृद्धि और उपज को दबा देता है। इसके अलावा यह अपनी तीव्र तीखी गंध के कारण मानव स्वास्थ्य को भी प्रभावित करता है। मतली, एलर्जी और चक्कर आना मनुष्यों में इस खरपतवार के कारण होने वाली कुछ स्वास्थ्य समस्याएं हैं।

इसके प्रसार ने उत्तर–पश्चिम हिमालय, पूर्व हिमालय, मध्य भारत और पश्चिमी घाट सहित भारत के विभिन्न क्षेत्रों में स्वदेशी प्रजातियों के लिए विनाश का कारण बना दिया है। यह खरपतवार प्रमुख आक्रामक प्रजातियों में से एक बताई गई है, जो हिमाचल प्रदेश में 2400 मीटर की ऊंचाई तक बढ़ती है। वास्तव में, हिमाचल प्रदेश राज्य का लगभग 50% क्षेत्र इस अप्रिय खरपतवार से प्रभावित माना जाता है। यह जिम कॉर्बेट टाइगर रिज़र्व, तराई और भाबर क्षेत्रों और उत्तर प्रदेश के समसपुर पक्षी अभयारण्य के आर्द्रभूमि में जंगल के घास के मैदानों, खरपतवार–संक्रमित क्षेत्रों और निचले गीले घास के मैदानों में दस सबसे प्रमुख खरपतवारों में से एक है। भारत में यह उत्तर–पश्चिम हिमालय के साथ–साथ पश्चिम बंगाल के पूर्वी हिमालय क्षेत्र के ताड़ के बगीचों और दून घाटी की विभिन्न फसल भूमि और सबसे व्यापक रूप से वितरित खरपतवारों में से एक है। यह प्रजाति वीरापुली और कलामलाई वन अभ्यारण्य, उष्णकटिबंधीय आर्द्र सदाबहार वनों और तमिलनाडु के पश्चिमी घाट की अनामलाई पहाड़ियों में भी पायी गयी है। यह बंगाल की खाड़ी में लिटिल अंडमान द्वीप के उष्णकटिबंधीय जंगल में एक प्रभावी खरपतवार के रूप में पाया गया है। यह आगराखाल–हिंडोलाखाल, गढ़वाल हिमालय, उत्तरांचल और दून

घाटी, उत्तरांचल में मोथ्रोनवाला दलदल की दोनों ओर की ढलानों और आर्द्रभूमि में प्रमुख प्रजातियों में से एक पाया गया है। यह पौधा असम के तटीय और दलदली जंगलों में एक प्रमुख खरपतवार के रूप में भी पाया गया है। अरुणाचल प्रदेश में, यह पश्चिम सियांग में प्रमुख खरपतवारों में से एक है और उष्णकटिबंधीय जंगलों में डेंड्रोकैलामस हैमिल्टन की कैनोपी के नीचे सबसे प्रमुख खरपतवार है। इसके अलावा, उत्तर–पूर्व और दक्षिणी भारत और गंधमर्दन हिल्स रेंज, उड़ीसा के जंगलों में भी यह खरपतवार पाया गया है।

फसलीय क्षेत्र में इस खरपतवार के नियंत्रण के लिए विभिन्न विधियां जैसे सस्य विधि, यांत्रिक विधि एवं रासायनिक विधि का उपयोग किया जाता है ।

- सस्य विधि में शुद्ध एवं साफ बीज का प्रयोग, हाथ से निराई गुड़ाई, गहरी जुताई, स्टेल सीड बेड, सही किस्मों का चुनाव एवं बुवाई की विधि, उचित फसल चक्र आदि आते है ।
- यांत्रिक विधि में अलग–अलग वीडर्स का प्रयोग जैसे कि व्हील हैंड हो, कोनो वीडर आदि के प्रयोग से इसे भूमि से उखाड़ा जा सकता है ।
- रासायनिक विधि के द्वारा इस खरपतवार के नियंत्रण के लिए फसलीय क्षेत्रों में अंकुरण के पूर्व पेंडीमेथलीन, एट्राजिन, प्रेटीलाक्लोर, मेट्रिब्यूजिन, ब्यूटाक्लोर आदि का प्रयोग किया जा सकता है। वही दूसरी ओर अंकुरण के बाद छिड़काव के लिए 2, 4–डी, बिस्पायरिबैक सोडियम आदि का छिड़काव किया जा सकता है। गैर–फसलीय क्षेत्र में इस खरपतवार को ग्लाइफोसेट के प्रयोग से नियंत्रित किया जा सकता है ।

विलायती बबूल (*प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा*)

प्रोसोपिस को एक आक्रामक जीनस माना जाता है जिसमें 44 प्रजातियां शामिल हैं, जिनमें से *प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा* स्वार्ट्ज सबसे अधिक आक्रामक प्रजाति मानी जाती है, जिसका मूल स्थान उत्तर, दक्षिण, मध्य अमेरिका और कैरेबियन हैं। सर्वप्रथम 1877 में, रेत के टीलों के अतिक्रमण से बचाव के लिए कडप्पा जिले, आंध्र प्रदेश और सिंध (अब पाकिस्तान में) में *पी. जूलीफ्लोरा* के बीज बोए गए थे। परन्तु जिस दर से इसका उपयोग किया जा सकता था उससे कहीं अधिक तेजी से यह फैलने और बढ़ने लगा। शुरुआत में भारत के अधिक से अधिक शुष्क क्षेत्रों में इसके बीज बोए गए, जिनमें से कुछ अब पाकिस्तान में हैं। राजस्थान में सफलतापूर्वक लगने के बाद इसने इतना अच्छा प्रदर्शन किया कि जोधपुर राज्य के शासक ने इसे ''शाही पौधा'' नाम दिया। अब यह भारत के कई राज्यों में पाया जाता है: आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल, और हरियाणा, गुजरात और राजस्थान के लगभग सभी जिलों में। पश्चिमी राजस्थान के सभी 11 जिलों में, यह व्यापक रूप से फैल गया है, जिसमें पाली, जालौर, जोधपुर और नागौर जिलों में बहुत अधिक सघनता के साथ पाया गया है। पिछले 25 वर्षो में पूर्वी और दक्षिणी राजस्थान में इसका काफी प्रसार हुआ है। शुरुआत में सड़कों के किनारे पाया जाता था परन्तु अब यह चट्टानी इलाकों और खारी भूमि सहित कई क्षेत्रों में फैल गया है। इसमें कई ऐसे गुण उपस्थित है जो इसे विपरीत परिस्थितियों में पनपने के योग्य बनाते हैं । यह मनुष्यों, पशुधन और वन्यजीवों के साथ ही जैव विविधता के लिए भी गंभीर खतरा बन गया है। यह दुनिया के 100 सबसे प्रभावशाली आक्रमणकारियों में से एक बन गया है।

गुजरात में, वन विभाग ने भावनगर और कच्छ जिलों के तट पर बड़े पैमाने पर वनीकरण कार्यक्रम चलाया है, जिसे बड़ी सफलता मिली है। कच्छ में उच्च वनस्पति घनत्व का सामना करना पड़ता है, जहां इसने लवणीय भूमि सहित लगभग सभी आवासों को पूरी तरह से संक्रमित कर दिया है। कच्छ में, *पी. जूलीफ्लोरा* की अत्यधिक पौधों की आबादी ने *साल्वाडोरा पर्सिका, बबूल सेनेगल* और *पी. सिनेरिया* जैसी देशी प्रजातियों के विकास को रोक दिया है। कई जल निकासी लाइनें पूरी तरह से *पी. जूलीफ्लोरा* से ढकी हुई हैं, और बन्नी घास के मैदानों में घनी झाड़ियाँ पाई जाती हैं, जिनमें उच्च स्तर की लवणता का अनुभव होता है। कच्छ का यह असाधारण उपनिवेशीकरण इस प्रजाति की उच्च स्तर की लवणता को झेलने की क्षमता को साबित करता है। लगभग 30 वर्षो की अवधि (1962 से आगे) ने कच्छ को *पी. जूलीफ्लोरा* वुडलैंड में बदल दिया है।

राजस्थान से सटे हरियाणा के जिलों में, विशेष रूप से बंजर भूमि, सड़कों के किनारे और बजरी वाले क्षेत्रों में *पी. जूलीफ्लोरा* के पौधों का घनत्व अधिक है। उत्तर प्रदेश के मथुरा और आगरा जिलों की सभी लवणीय क्षारीय बंजर भूमि और अन्य सीमांत भूमि में भी उच्च घनत्व वाली झाड़ियाँ हैं। दिल्ली क्षेत्र में *पी. जूलीफ्लोरा* के व्यापक स्टैंड के साथ ऐसी ही स्थिति है।

सियाम वीड (*क्रोमोलिना ओडोरेटा*)

क्रोमोलिना ओडोरेटा, एस्टेरेसी परिवार से संबंधित एक उष्णकटिबंधीय अमेरिकी मूल का पौधा है जो उपोष्णकटिबंधीय और उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सबसे तेजी से फैला है। सर्वप्रथम 1845 में भारत के कोलकाता के वनस्पति उद्यान में एक सुंदर पौधे के रूप में इसे लाया गया

था, लेकिन समय के साथ इसमें आक्रामक खरपतवार की विशेषताएं विकसित हो गई। भौगोलिक स्थान विशेष, तापमान और वर्षा कुछ पर्यावरणीय पैमाने हैं जो भारत में इसकी वितरण सीमा निर्धारित करते हैं। इस प्रजाति में विभिन्न जलवायु के प्रति व्यापक सहनशीलता है। यह किसी भी प्रकार की जलवायु में सफलतापूर्वक स्थापित हो सकता है। और यह पांच महाद्वीपों (जैसे एशिया, उत्तरी और दक्षिण अमेरिका, और उत्तरी और दक्षिण अफ्रीका) में स्थापित हो चुका है। यह जल्दी से स्थापित हो सकती है और विभिन्न फसलों, वानिकी और देशी वनस्पति को नष्ट कर सकती है। यह अरुचिकर और हानिकारक है और अगर पालतू जानवर इसे खा लें तो मृत्यु हो सकती है। इस प्रकार ये मनुष्यों के साथ ही साथ जानवरों के लिए भी हानिकारक है। एक बार स्थापित होने के बाद, यह खरपतवार खुले क्षेत्रों में वहां की स्थानीय घास और झाड़ियों के साथ प्रबल तरीके से प्रतिस्पर्धा करता है। यह अक्सर सड़कों के किनारे, नदी के किनारे, खाली जगह, बेकार जमीन और उपेक्षित चरागाहों पर उगता है यह प्रजाति छाया के प्रति असहिष्णु है अर्थात अधिक छायादार स्थानों पर नहीं पनप पाती इसलिए यह ऐसे स्थानों पर नहीं हो पाती जहाँ बड़े पेड़ो की छाया हमेशा बनी रहती हो। यह अधिक ठंड/पाले के प्रति भी असहिष्णु है और सूखे क्षेत्रों (अर्थात् लगभग <900 मिमी औसत वार्षिक वर्षा) में कम पायी जाती है।

इस खरपतवार के नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशी का प्रयोग किया जा सकता है। कुछ प्रमुख खरपतवारनाशी है: ग्लाइफोसेट एवं पैराक्वाट। यांत्रिक विधि भी इस खरपतवार के नियंत्रण के लिए प्रभावी विधि है परन्तु यह विधि महंगी हो सकती है, लेकिन पर्यावरण को होने वाले लाभ इस तकनीक लागत से अधिक हो सकते हैं। स्थानीय जनता भी बड़े पैमाने पर उन्मूलन प्रयासों में शामिल हो सकते हैं। खरपतवार के जैविक नियंत्रण के लिए इसके जैविक शत्रु जैसे कि *सेसिडोचेरस कॉनेक्सा* और *एकैलिटस एडोरैटस* जैसे जैविक नियंत्रण एजेंटों को छोड़ा जा सकता है जो इस खरपतवार के विकास को नियंत्रित करने में मदद कर सकते है।

आक्रामक खरपतवारों का नियंत्रण

इन आक्रामक खरपतवारों के नियंत्रण के लिए वैसे तो कई विधियां उपलब्ध है। जिसमे यांत्रिक नियंत्रण विधि बहुत ही लक्ष्य–विशिष्ट होती है और इसमें अधिक श्रम की भी आवश्यकता होती है। वही दूसरी ओर, रासायनिक नियंत्रण थोड़े समय के लिए खरपतवार नियंत्रण का बहुत ही प्रभावी तरीका है। अगर हम जैविक नियंत्रण की बात करें तो यह विधि अत्यंत ही काम लागत वाली, स्थाई और पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित है। साथ ही पर्यावरण अनुकूल एवं कीटनाशक का उपयोग प्रतिबंधित होने के कारण यह संरक्षित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इन आक्रामक खरपतवारों के नियंत्रण के लिए उसके प्राकृतिक शत्रु को छोड़ना जैविक नियंत्रण के अंतर्गत आता है। जैविक नियंत्रण को सफल बनाने के लिए सामूहिक प्रयास आवश्यक है ।

आक्रामक खरपतवारों के नए स्थानों में पहुंचने एवं स्थापित होने में दो देशों के बीच व्यापार को महत्वपूर्ण कारक माना गया है। भारत में पौधों की सुरक्षा केंद्र और राज्य सरकार दोनों की संयुक्त जिम्मेदारी है। भारत में कीट प्रबंधन के लिए एक बहु–एजेंसी, बहुविभागीय, बहु–विषयक और बहु–कार्यक्रम दृष्टिकोण है, जिसमें आक्रामक खरपतवारों का प्रबंधन भी शामिल है। भारत में इन खरपतवारों के प्रबंधन में समन्वय के लिए कोई एक राष्ट्रीय–स्तरीय एजेंसी नहीं है। भारत के पास क्षेत्रीय नीति का अभाव है, हालाँकि उसे क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर इसकी आवश्यकता है। प्रारंभिक स्तर पर नर्सरी में आने और जाने वाले पौधों की संक्रमण के लक्षण के लिए शुरुआती जाँच की जानी चाहिए। इसके साथ ही उपयुक्त और पर्यावरण–अनुकूल नियंत्रण उपायों पर सघन एवं विस्तृत अनुसंधान की आवश्यकता है। अत: इस कड़ी में, देश में विदेशी प्रजातियों के प्रवेश को रोकने के लिए किए गए प्रयासों को सफल बनाने के लिए विदेशी जलीय जीवों के आयात के लिए रणनीतिक राष्ट्रीय योजनाओं और दिशा निर्देशों का एक सेट विकसित किया गया है। अत: इन आक्रामक खरपतवारों के प्रबंधन में एक राष्ट्रीय रणनीति का विकास पहला कदम होना चाहिए।

कानूनी और संस्थागत आवश्यकताएँ

आक्रामक प्रजातियों के खिलाफ दीर्घकालिक सफलता के लिए देश की जैव सुरक्षा खतरे के प्रति कानूनी और संस्थागत दृष्टिकोण आवश्यक है। राज्यों के बीच और देश के भीतर नए क्षेत्रों में जंगली और पालतू जानवरों और पौधों के अनाधिकृत प्रवेश की संबंधित सरकारी विभागों द्वारा समीक्षा और निगरानी की जानी चाहिए। खरपतवारों की स्थिति और गतिविधि और पारिस्थितिकी तंत्र पर उनके प्रभावों का तेजी से आँकलन करने के लिए तकनीक विकसित की जानी चाहिए। भारत सरकार ने अंतर्राष्ट्रीय पौधा संरक्षण सम्मेलन और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत मानकों और विश्व व्यापार संगठन के एसपीएस समझौते के सिद्धांतों के साथ भारत के नियामक ढांचे को सुसंगत बनाने के लिए एक नए (प्लांट क्वारेंटाइन ऑर्डर, 2003) की अधिसूचना को मंजूरी दे दी है। अंतर्राष्ट्रीय मानकों में सुधार के लिए अन्य सहायक और प्रबंधकीय कदम भी उठाए जा रहे हैं, देश की संगरोध गतिविधि और फाइटो–सेनिटरी बॉर्डर कंट्रोल्स के संपूर्ण पहलू, जिसमें आयात और निर्यात निरीक्षण, कीटों और वैक्टरों के लिए ऑन–फील्ड निगरानी, उपचार मानक और प्रक्रियाएं और प्रमाणन पद्धति शामिल हैं। निर्यात प्रमाणन प्रक्रिया और मानकों में सुधार के प्रयास भी जारी हैं। भारत में पादप संगरोध के लिए 2003 का नया आदेश आयात के लिए कीट जोखिम विश्लेषण को एक अनिवार्य शर्त के रूप में रखा गया है और आयातित सामग्रियों के साथ विदेशी खरपतवार के बीजो के आयात पर प्रतिबंध लगाता है। पौधे की अनुपचारित सामग्री की पैकेजिंग का आयात प्रतिबंधित है। अब फूलों के बीजों सहित बीजों और मशरूम स्पॉन कल्चर के आयात पर परमिट की आवश्यकता लागू की गई है। 144 कृषि वस्तुओं के आयात के लिए भी घोषणाएँ निर्दिष्ट की गई हैं। अब ऐसे 130 प्रवेश बिंदु हैं, जबकि पहले यह केवल 59 थे। नया आदेश प्रमाणन शुल्क और निरीक्षण शुल्क की संरचना को भी तर्कसंगत बनाता है।

अरहर की फसल में खरपतवार प्रबंधन

पी.के सिंह, वी.के. चौधरी, एस.के. पारे एवं जे.एस. मिश्र
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

अरहर खरीफ ऋतु की एक प्रमुख दलहनी फसल है, लेकिन लम्बी अवधि की होने के कारण यह दिसम्बर तक जाकर तैयार होती है। अरहर में कतारों के बीच चौड़ाई अधिक होने के कारण खरपतवार ज्यादा उगते है। प्रारंभिक अवस्था में (बुवाई के 50–60 दिन तक) अरहर की वृद्धि एवं विकास बहुत धीमी गति से होता है, जिसके कारण खरपतवारों को बढ़ने और पनपने का अधिक मौका मिलता है तथा वर्षा के कारण भी खरपतवार उगते रहते हैं। अरहर की क्रांतिक अवस्था 20–60 दिनों तक होती है इसमें खरपतवार स्पर्धा के कारण 20–40 प्रतिशत तक उपज की हानि होती है, साथ ही साथ भारी मात्रा में पोषक तत्वों का अवशोषण भी होता है। खरपतवारों द्वारा 28–30 किग्रा. नत्रजन, 20–25 किग्रा. फास्फोरस तथा 10–15 किग्रा. पोटाश (पोषक तत्वों) का प्रति हेक्टेयर अवशोषण कर लिया जाता है।

अत: प्रोटीन के प्रमुख स्त्रोतों में से एक अरहर के भरपूर उत्पादन के लिए समय पर उचित खरपतवार प्रबंधन करना अति आवश्यक है।

अरहर के प्रमुख खरपतवार

कनकाऊवा (*कॉमेलिना बेंघालेंसिस*)

मुर्गकेश (*सेलोसिया अर्जेन्टीया*)

भुंईआंवला (*फाईलैंथस निरूरी*)

फिंगरग्रास (*क्लोरीस बारबटा*)

बड़ी दुधी (*यूफोरबिया हिरटा*)

सँवा (*इकाईनोक्लोआ प्रजाति*)

क्रेबग्रास (*डिजिटेरिया लोंगिफ्लोरा*)

मोंथा (*साइपरस रोटंडस*)

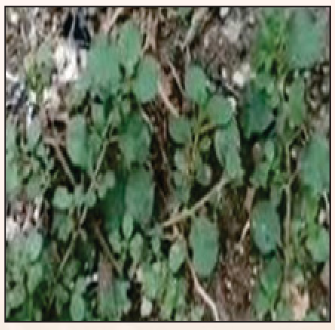

पत्थरचट्टा (*ट्रायनथेमा पोर्टुलाकैस्ट्रम*)

खरपतवार प्रबंधन की प्रमुख विधियां

(क) शुद्ध और साफ बीज का प्रयोग :

फसल बुवाई के समय शुद्ध और साफ बीज का प्रयोग करके कृषक अपने खेत में नये खरपतवार की स्थापना होने एवं उसके प्रसार को रोक सकते हैं।

(ख) सस्य विधि :

यदि गर्मियों में खेतों की गहरी जुताई कर कुछ समय के लिए छोड़ दिया जाए तो खरपतवारों के बीज एवं कन्द जो जुताई के समय जमीन के ऊपर आ जाते हैं और तेज धूप के कारण सूर्यीकृत होकर अपनी अंकुरण क्षमता खोकर निष्क्रिय हो जाते हैं। यह विधि वहां पर अपनाई जा सकती है जहां गर्मी में कोई फसल न ली जाती हो।

(ग) हाथ से निराई–गुड़ाई/यांत्रिक विधि :

यह खरपतवार प्रबंधन की सरल, प्रभाव पूर्ण और उत्तम विधि है। इसमें बुवाई के 25 और 45 दिन पर 2 बार निराई करना काफी लाभप्रद पाया गया है। लेकिन इसके लिए उपयुक्त संख्या में मानव श्रम की आवश्यकता होती है परन्तु समय पर इनकी उपलब्धता न हो पाना तथा खर्च ज्यादा आना वर्तमान में चिंता का विषय है।

यदि अरहर की फसल कतारों में बोई गयी है तो बाजार में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के निदाई यंत्र जैसे–व्हील हो, ट्वीन व्हील हो, वीडर एवं पावर वीडर इत्यादि का प्रयोग बुवाई के 25 और 45 दिन पर करके खरपतवारों को प्रबंधित किया जा सकता है। इसमें समय, श्रम एवं खर्च भी कम लगता है।

(घ) अन्तर्वर्ती फसल लगाकर/फसलचक्र अपनाकर :

चूंकि अरहर की दो कतारों के बीच पर्याप्त दूरी होती है फलस्वरूप खाली स्थान के कारण खरीफ ऋतु में खरपतवारों का प्रकोप कुछ ज्यादा ही रहता है। यदि कृषक अरहर के साथ कुछ अन्य फसलें (ज्वार, बाजरा, उर्द, मूंग अथवा कपास इत्यादि) में से किसी को अन्तर्वर्ती फसल के रूप में उगाये तो अपेक्षाकृत खरपतवारों का प्रकोप कम हो जाता है।

(ङ) रासायनिक विधि :

वर्तमान परिवेश में श्रमिकों की अनुपलब्धता, ज्यादा पारिश्रमिक और पर्याप्त समय की कमी के कारण रासायनिक विधि द्वारा खरपतवारों का प्रबंधन करना कम खर्चीला, व्यवहारिक और ज्यादा लाभदायक साबित हो रहा है, बशर्ते कृषक संस्तुत किये गये शाकनाशी की सही मात्रा का सही समय पर उचित तरीके से उपयोग करें। अरहर की फसल में खरपतवार प्रबंधन के लिए संस्तुत प्रमुख शाकनाशियों का विवरण इस प्रकार है:

शाकनाशी	सक्रिय तत्व मात्रा (ग्राम या मिली./हे.)	व्यापारिक मात्रा (ग्राम या मिली./हे.)	प्रयोग समय बुवाई/ रोपाई के दिन बाद	नियंत्रित खरपतवार
पेन्डीमिथालिन (30 ई.सी)	700–1000	2500–3300	बुवाई से पहले या बुवाई के 3 दिन के अंदर	सभी प्रकार के घास एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण।
क्यूजालोफाप ईथाइल	40–50	800–1000	15–20 दिन	घासकुल के खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण।
पेन्डीमिथालिन	1000	3000	0–3 दिन पर	घास एवं चौड़ी पत्ती
प्रोपाक्विजाफॉप + इमेजाथापायर	125	2000	20 दिन पर	घास एवं चौड़ी पत्ती
इमेजाथापायर + इमाजामोक्स	70	100	20 दिन पर	घास एवं चौड़ी पत्ती
इमेजाथापायर	100	1000	20 दिन पर	घास एवं चौड़ी पत्ती

सोनकस ओलेरेसियस एल. बदलते जलवायु परिदृश्य में खाद्य और पोषण सुरक्षा के लिए एक वैकल्पिक विकल्प

सहदेव इंदलदास कुवरदादरा, दसारी श्रीकांत एवं दीपक पवार
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

परिचय

सोनकस ओलेरेसियस एल. जिसे आमतौर पर "पीली दूधी" के नाम से भी जाना जाता है, यह एक बारहमासी पौधा है जो खेतों, बागों, मैदानों, और अन्य खाली जगहों पर आमतौर पर खरपतवार के रूप में पाया जाता है। इस पौधे की विविधता और अनेकता के कारण, यह जल्दी से फैलने वाला, एक विक्षारी पौधा है जिसकी बुनाई और फैलाव बड़ी तेजी से होता है। इसके बड़े, हरे पत्ते और पीले या गुलाबी रंग के फूल होते हैं। इसे कई स्थानों पर जानवरों का चारा माना जाता है, यह पौधा उच्चायुक्ति और गर्म जलवायु को पसंद करता है।

खाद्य और पोषण सुरक्षा का मतलब है कि सभी लोगों के पास हर समय पर्याप्त, सुरक्षित, और पौष्टिक भोजन उपलब्ध हो ताकि वे एक स्वस्थ और सक्रिय जीवन जी सकें। इसमें चार मुख्य घटक शामिल होते हैं: खाद्य उपलब्धता, खाद्य पहुंच, खाद्य उपयोग और स्थिरता। वर्ष 2022 तक, लगभग 735 मिलियन लोग अल्पपोषित थे और 2.4 बिलियन लोग खाद्य असुरक्षा का सामना कर रहे थे। यह दर्शाता है कि कई लोग पर्याप्त और पौष्टिक भोजन प्राप्त करने में असमर्थ हैं। संयुक्त राष्ट्र के सतत् विकास लक्ष्यों में से दूसरा लक्ष्य (एस.डी.जी. 2) ''शून्य भूख" है। इस लक्ष्य का उद्देश्य 2030 तक भूखमरी को समाप्त करना, खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करना, पोषण में सुधार करना और स्थायी कृषि को बढ़ावा देना है। इसके लिए हमें अपने खाद्य टोकरी और आहार को विविधतापूर्ण बनाना होगा और कई संभावित अप्रयुक्त खाद्य पौधों, जैसे ''पीली दूधी" को शामिल करना होगा ताकि खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके और 2030 तक सतत विकास लक्ष्य 2 को पूरा किया जा सके।

वानस्पतिक विवरण

सोनकस की कई प्रजातियाँ भारत और विश्व भर में पाई जाती हैं। भारत में पायी जाने वाली कुछ मुख्य प्रजातियाँ इस प्रकार है– *सोनकस ओलेरेसियस*, *सोनकस अस्पेर* और *सोनकस अर्वेंसिस* शामिल हैं।

पौधे की ऊंचाई: साधारणत: 1 से 3 फीट तक की होती है।

पत्तियाँ: पत्तियाँ हल्के हरे रंग की होती हैं, जो किनारे में धारीदार होती हैं (चित्र 1)। ये पत्तियाँ ध्रुवीय या त्रिकोणीय होती हैं।

फूल: फूल छोटे और गोल होते हैं, जो पीले या सफेद रंग के होते हैं।

बीज: बीज धारीदार होते हैं, जिनकी ऊंचाई लगभग 3 से 4 मिमी होती है।

यह पौधा एस्टरेसी परिवार का बहोत ही लचीला पौधा है, जो लगभग हर जगह मिल जाते है। इनका वर्गीकरणिक परिचय नीचे (तालिका 1) में दिया गया है।

चित्र 1 *सोनकस ओलेरेसियस* पौधा (स्त्रोत: आल्केट्रॉन)

तालिका–1 वर्गीकरणिक परिचय

जगत	प्लांटे
विभाजन	आवृतबीजी पौधे
श्रेणी	द्विबीजपत्री
वर्ग	अष्टराल
परिवार	एस्टेरेसी
प्रजाति	ओलेरेसियस
गण	सोनकस

पोषण प्रोफाइल

सोनकस ओलेरेसियस का पोषण प्रोफाइल अत्यंत समृद्ध है, जिसमे विटामिन्स, प्रथिन, विभिन्न खनिज पदार्थ शामिल है जो इसे एक महत्वपूर्ण आहार पूरक बनाता है:

विटामिन्स: विटामिन्स बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि ये हमारे शारीरिक स्वास्थ्य और विकास के लिए आवश्यक होते हैं। विटामिन्स विभिन्न कार्यों को संभालते हैं, जैसे कि शरीर के ऊर्जा स्तर को बनाए रखना, अनुकूल शारीरिक विकास को संचालित करना, इम्यून सिस्टम को मजबूत बनाना, हड्डियों और दाँतों को मजबूत करना, रक्तचालन को सुधारना, और मानसिक स्वास्थ्य को संतुलित रखना। विटामिन्स की कमी से अनेक रोग और समस्याएं हो सकती हैं, इसलिए विटामिन्स का संतुलित मात्रा में सेवन करना बहुत महत्वपूर्ण है। विभिन्न प्रकार के विटामिन्स जो सोनकस ओलेरेसियस में पाए जाते है उनका विवरण इस प्रकर है–

- **विटामिन ए:** दृष्टि, प्रतिरक्षा कार्य और त्वचा के स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण।
- **विटामिन सी:** एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करता है और प्रतिरक्षा स्वास्थ्य और त्वचा की मरम्मत में सहायक है।

- **विटामिन के:** रक्त का थक्का जमाने और हड्डियों के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक।
- **विटामिन्स बी:** विशेष रूप से फोलेट (बी9), जो डीएनए संश्लेषण और मरम्मत के लिए महत्वपूर्ण है।

खनिज पदार्थ:

कैल्शियम: हड्डियों के स्वास्थ्य और मांसपेशियों के कार्य के लिए आवश्यक।

आयरन: हीमोग्लोबिन के निर्माण और रक्त में ऑक्सीजन के परिवहन के लिए आवश्यक।

मैग्नीशियम: मांसपेशियों और नसों के कार्य और ऊर्जा उत्पादन का समर्थन करता है।

पोटेशियम: रक्तचाप और तरल संतुलन को नियंत्रित करने में सहायक।

फाइबर:

आहार फाइबर: पाचन में सहायक और एक स्वस्थ पाचन तंत्र बनाए रखने में मदद करता है।

एंटीऑक्सीडेंट्स: फ्लेवोनोइड्स और फिनोलिक यौगिक: ऑक्सीडेटिव तनाव और सूजन से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

प्रोटीन:

प्लांट बेस्ड प्रोटीन: मांसपेशियों की मरम्मत और सामान्य विकास में सहायक।

खाने में उपयोग

सोनकस ओलेरेसियस की पत्तियां और फूल खाद्य होते हैं और इन्हें पारंपरिक रूप से औषधीय गुणों के लिए भी उपयोग किया जाता है। यह पौधा मिट्टी के लिए भी फायदेमंद होता है क्योंकि यह मिट्टी की गुणवत्ता को सुधारने में मदद करता है। इसके अलावा, यह पौधा पालतू जानवरों और कीड़ों के लिए भी खाद्य स्रोत प्रदान करता है, जिससे यह पारिस्थितिक तंत्र का महत्वपूर्ण हिस्सा बनता है। सोनकस ओलेरेसियस का रसोई में उपयोग बहुत ही विविध है:

सलाद: इसकी कोमल पत्तियों का उपयोग ताजे सलाद में किया जा सकता है, जो मिश्रित सब्जियों में हल्का कड़वा लेकिन पौष्टिक तत्व जोड़ता है।

पके हुए साग: पत्तियों और कोमल तनों को पालक या केल की तरह भाप में पकाया या सूप में डाला जा सकता है।

हर्बल चाय: पत्तियों और फूलों को सुखाकर चाय बनाई जा सकती है, जो पारंपरिक रूप से औषधीय गुणों के लिए जानी जाती है।

स्मूदी: ताजे पत्तों को हरी स्मूदी में मिलाया जा सकता है, जिससे पोषण की मात्रा बढ़ जाती है।

पेस्टो: पत्तियों का उपयोग एक अनोखा, पौष्टिक पेस्टो बनाने के लिए किया जा सकता है।

खाद्य सुरक्षा के लिए स्थायित्व और उपलब्धता:

सोनकस ओलेरेसियस को आसानी से उगाया जा सकता है। यह पौधा सूखे में भी अच्छी तरह से उग सकता है और इसके लिए विशेष ध्यान देने की आवश्यकता नही होती है। यह कम खर्चीला खाद्य स्रोत होता है। इसका उत्पादन आसान है और यह विभिन्न खाद्य पदार्थों में मिश्रित किया जा सकता है, जिससे खाद्य और पोषण सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सकता है।

अनुकूलता: विभिन्न मिट्टी के प्रकारों और जलवायु में अच्छी तरह से उगता है, जो इसे एक मजबूत पौधा बनाता है।

कम रखरखाव: इसे न्यूनतम देखभाल की आवश्यकता होती है, जिससे यह छोटे किसानों और घरेलू बागवानों के लिए सुलभ है।

वर्ष भर उपलब्धता: कई क्षेत्रों में इसे पूरे साल काटा जा सकता है, जिससे यह एक सतत् खाद्य स्रोत बनता है।

फोरेजिंग और खेती: इसे जंगल से संग्रहित या खेती किया जा सकता है, जिससे इसे स्रोत करने में लचीलापन मिलता है।

औषधीय उपयोग

पोषण लाभों के अलावा, सोनकस ओलेरेसियस का उपयोग पारंपरिक औषधि में भी किया जाता है:

सूजनरोधी: सूजन और संबंधित स्थितियों के उपचार में उपयोग किया जाता है।

पाचन सहायक: पाचन में मदद करता है और जठरांत्र संबंधी समस्याओं का इलाज करता है।

मूत्रवर्धक: शरीर से अतिरिक्त तरल और विषाक्त पदार्थों को निकालने में मदद करता है।

घाव भरना: त्वचा की स्थितियों और घावों के इलाज के लिए बाहरी रूप से लगाया जाता है।

चुनौतियाँ

कड़वाहट: पुरानी पत्तियां कड़वी हो सकती हैं, जिससे कुछ लोग इसे खाना पसंद नहीं करते। युवा पत्तियों को काटना या खाना पकाने के तरीके जैसे उबालने से कड़वाहट को कम किया जा सकता है।

सही पहचान: हानिकारक पौधों के साथ भ्रम से बचने के लिए सही पहचान आवश्यक है।

आक्रामकता: यदि ठीक से प्रबंधित नहीं किया गया तो आक्रामक हो सकता है। सतत कटाई और खेती की प्रथाओं का पालन करना महत्वपूर्ण है।

सोनकस ओलेरेसियस पौधा खाद्य और पोषण सुरक्षा के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण और उत्तम विकल्प प्रस्तुत करता है। इस पौधे के पत्ते, फूल और बीज पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं, जो विभिन्न पोषण संभावनाओं को पूरा करने में मदद करते हैं। इसका उत्पादन सरल है और यह अनाजी भूमि में भी उगाया जा सकता है। इसके अलावा, यह एक सस्ता और उपलब्ध विकल्प होता है, जिससे विभिन्न समुदायों को खाद्य सुरक्षा के लिए संतुष्ट किया जा सकता है। इस तरह, *सोनकस ओलेरेसियस* का उपयोग हमें खाद्य और पोषण सुरक्षा के लिए एक सकारात्मक और सहायक उपाय प्रदान कर सकता है।

खरपतवार नियंत्रण-भौतिक एवं कृषिगत विधियाँ

पवन कुमार पारा[1], पंकज शुक्ला[1] एवं किरण शर्मा[2]
[1]भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

किसी दिए गए क्षेत्र में किसी भी खरपतवार नियंत्रण कार्यक्रम को डिजाइन करने के लिए, किसी को उस क्षेत्र में खरपतवारों की प्रकृति और निवास स्थान को जानना चाहिए, वे पर्यावरणीय परिवर्तनों पर कैसे प्रतिक्रिया करते हैं और वे खरपतवारों पर कैसे प्रतिक्रिया करते हैं। खरपतवार नियंत्रण की विधि का चयन करने से पहले, बीजों की संख्या, बीजों के फैलाव की प्रकृति, बीजों की सुप्तावस्था, दबे हुए बीजों की दीर्घायु और प्रतिकूल परिस्थितियों में जीवित रहने की क्षमता, खरपतवार के जीवन काल, मिट्टी की बनावट, नमी के बारे में जानकारी होनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण के सिद्धांत हैं- (क) रोकथाम (ख) उन्मूलन (ग) नियंत्रण (घ) प्रबंधन

1. खरपतवार नियंत्रण के निवारक उपाय –

इसमें खरपतवारों के आगमन, स्थापना और प्रसार को रोकने के लिए किए गए सभी उपाय शामिल हैं। ऐसे क्षेत्र स्थानीय, क्षेत्रीय या राष्ट्रीय हो सकते हैं। यदि खरपतवार संक्रमण को कम करने के लिए पर्याप्त निवारक उपाय नहीं किए गए तो कोई भी खरपतवार नियंत्रण कार्यक्रम सफल नहीं होता है। यह एक दीर्घकालिक योजना है ताकि खरपतवारों को अधिक प्रभावी ढंग और आर्थिक रूप से नियंत्रित या प्रबंधित किया जा सके। निम्नलिखित निवारक नियंत्रण उपायों को अपनाने का सुझाव दिया जाता है।

1. बुआई के लिए खरपतवार के बीजों से प्रभावित फसल के बीजो का उपयोग करने से बचें।
2. खेत के जानवरों को खरपतवार के बीज वाली अन्य सामग्री खिलाने से बचें।
3. खाद के गड्ढों में खरपतवार डालने से बचें।
4. कृषि मशीनरी को एक खेत से दूसरे खेत में ले जाने से पहले अच्छी तरह साफ कर लें। यह बीज ड्रिल के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है
5. बजरी, रेत और खरपतवार–संक्रमित मिट्टी के प्रयोग से बचें
6. खरपतवार के अंकुर, कंद, प्रकंद आदि की उपस्थिति के लिए नर्सरी स्टॉक का निरीक्षण करें।
7. सिंचाई नालों, बाड़–रेखाओं और बिना फसल वाले क्षेत्रों को साफ रखें
8. सतर्कता बरतें किसी भी अजीब दिखने वाले खरपतवार के अंकुर के लिए अपने खेत का बार–बार निरीक्षण करें। खरपतवार के ऐसे टुकड़ों को गहरी खुदाई करके उसकी जड़ों सहित जलाकर नष्ट कर दें। रसायन का प्रयोग कर उस स्थान को जीवाणुरहित करें।
9. हवाई अड्डों और शिपयार्डो के माध्यम से किसी देश में खरपतवार के बीज और अन्य प्रजनकों के प्रवेश को रोकने के लिए संगरोध नियम लगभग सभी देशों में उपलब्ध हैं उनका पालन करें।

खरपतवार मुक्त फसल के बीज–

इसे पूर्व में सावधानियों का पालन करके प्राप्त किया जा सकता है।

- आकार, रंग, वजन, बनावट और विद्युत गुणों जैसे भौतिक अंतरों का उपयोग करके फसल के बीजों को खरपतवार के बीजों के मिश्रण से अलग करना।
- एयर–स्क्रीन क्लीनर और विशिष्ट गुरुत्व विभाजक का उपयोग करना, जो बीज के आकार, सतह क्षेत्र और विशिष्ट गुरुत्व आधार पर अंतर करता है।
- बीज प्रमाणीकरण के माध्यम से हम प्रमाणित बीज प्राप्त कर सकते हैं और सुरक्षित रूप से उपयोग कर सकते हैं क्योंकि प्रमाणित बीजों में कोई दूषित खरपतवार के बीज नहीं होते हैं
- खरपतवार नियम, खरपतवार प्रजातियों के प्रसार को कम करने और उच्च गुणवत्ता वाले बीजों के उपयोग में सहायक होते हैं। वे किसानों को गलत लेबल वाले या दूषित बीजों के उपयोग से बचाने और हानिकारक खरपतवारों के बीजों को देश में प्रवेश करने से कानूनी रूप से प्रतिबंधित करने में मदद करते हैं।
- संगरोध कानून उस क्षेत्र को अलग करने को लागू होते हैं जहां एक गंभीर खरपतवार समस्या बन गया है।
- असंक्रमित क्षेत्र में खरपतवार की आवाजाही को स्थापित करना और रोकना।
- उभरने से पहले शाकनाशी का उपयोग भी रोकथाम में सहायक होता है क्योंकि शाकनाशी खरपतवारों को अंकुरित नही होने देते है।

2. उन्मूलन–

यह अनुमान लगाता है कि किसी दी गई खरपतवार की प्रजाति, उसके बीज और वानस्पतिक भाग को किसी दिए गए क्षेत्र से नष्ट कर दिया गया है या पूरी तरह से हटा दिया गया है और वह खरपतवार तब तक फिर से दिखाई नहीं देगा जब तक कि उस क्षेत्र में दोबारा न लाया जाए। कठिनाई और उच्च लागत के कारण, उन्मूलन का प्रयास आमतौर पर केवल छोटे क्षेत्रों जैसे कि कुछ हेक्टेयर या कुछ हजार वर्ग मीटर या उससे कम में किया जाता है। उन्मूलन का उपयोग अक्सर ग्रीन हाउस, सजावटी पौधों की क्यारियों और कंटेनरों जैसे उच्च मूल्य वाले क्षेत्रों में किया जाता है। यह वांछनीय और किफायती हो सकता है जब खरपतवार की प्रजाति फसल के लिए बेहद हानिकारक और नष्ट न होने वाली हो।

3. नियंत्रण–

इसमें वे प्रक्रियाएं शामिल हैं जिनसे खरपतवार का संक्रमण कम हो जाता है लेकिन जरूरी नहीं कि खत्म हो जाए। नियंत्रण विधियों में, खरपतवार शायद ही कभी मारे जाते हैं लेकिन उनकी वृद्धि गंभीर रूप से

प्रतिबंधित हो जाती है, सामान्य तौर पर, प्राप्त खरपतवार नियंत्रण की क्षमता खरपतवारों के गुणों और उपयोग की जाने वाली नियंत्रण विधि की प्रभावशीलता पर निर्भर करती है।

4. खरपतवार प्रबंधन–

खरपतवार नियंत्रण का उद्देश्य केवल किसी प्रकार के भौतिक या रासायनिक तरीकों से मौजूद खरपतवारों को खत्म करना है, जबकि खरपतवार प्रबंधन एक प्रणालीगत दृष्टिकोण है जिसके तहत खरपतवारों के आक्रमण को कम करने और फसल के पौधे देने के लिए पूरी भूमि उपयोग की योजना पहले से बनाई जाती है। खरपतवारो और फसल के बीच प्रतिस्पर्धा के कारण खरपतवारों की वृद्धि में कमी आती है। खरपतवार नियंत्रण विधियों को कृषिगत, भौतिक, रासायनिक और जैविक में बांटा गया है। खरपतवार नियंत्रण की प्रत्येक विधि के अपने फायदे और नुकसान हैं। सभी खरपतवार विधियों में कोई भी एक विधि सफल नहीं होती है। कई बार इन विधियों का संयोजन एकल विधि की तुलना में प्रभावी होते है।

यांत्रिक खरपतवार नियंत्रण–

जब से मनुष्य ने फसलें उगाना शुरू किया तब से खरपतवार नियंत्रण के यांत्रिक या भौतिक तरीकों का उपयोग किया जा रहा है। यांत्रिक तरीकों में जुताई, गुड़ाई, हाथ से निराई करना, खुदाई करना, हँसिया चलाना, घास काटना, जलाना, बाढ़, मल्चिंग आदि शामिल हैं।

1. जुताई

जुताई से मिट्टी से खरपतवार निकल जाते हैं जिससे वह नष्ट हो जाती है। यह जड़ और तने की छंटाई के माध्यम से पौधों को कमजोर कर सकता है, जिससे उनकी प्रतिस्पर्धात्मकता या पुनर्योजी क्षमता कम हो सकती है। जुताई से खरपतवार भी दब जाते हैं। जुताई के कार्य में जुताई, चीरा लगाना, हैरोइंग और समतल करना शामिल है, जिसका उपयोग मिट्टी को ऊपर नीचे और सूर्य के प्रकाश के संपर्क में आने वाले बीजों के माध्यम से खरपतवारों के अंकुरण को बढ़ावा देने के लिए किया जाता है, जिन्हें बाद में प्रभावी ढंग से नष्ट किया जा सकता है। बारहमासी पौधों के मामले में, ऊपरी और भूमिगत विकास दोनों ही जुताई से घायल और नष्ट हो जाते हैं।

2. गुड़ाई करना

कुदाल सदियों से निराई–गुड़ाई का सबसे उपयुक्त और व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाने वाला उपकरण रहा है। हालाँकि, प्रभावी ढंग से और सस्ते में परिणाम प्राप्त करने के लिए यह अभी भी एक बहुत उपयोगी क्रिया है। यह कतार वाली फसलों में कल्टीवेटर की पूर्ति करता है। निराई–गुड़ाई विशेष रूप से वार्षिक और द्विवार्षिक पौधों पर अधिक प्रभावी होती है क्योंकि खरपतवार की वृद्धि को पूरी तरह से नष्ट किया जा सकता है। बारहमासी पौधों के मामले में, इसने भूमिगत पौधों के हिस्सों पर बहुत कम प्रभाव डालते हुए ऊपरी विकास को नष्ट करने में सहायक होते है। जिसके परिणामस्वरूप खरपतवार का पुन: विकास हो जाता है।

3. हाथ से निराई करना

यह भौतिक रूप से या हाथ से खरपतवार को खींचकर या खुरपी नामक उपकरण द्वारा निकाला जाता है, जो दरांती जैसा दिखता है। यह संभवत: खरपतवारों को नियंत्रित करने का सबसे पुराना तरीका है और यह अभी भी फसली और गैर–फसली भूमि में खरपतवारों को खत्म करने का एक व्यावहारिक और कुशल तरीका है। यह वार्षिक, द्विवार्षिक पौधों के विरुद्ध बहुत प्रभावी है और केवल बारहमासी पौधों के ऊपरी हिस्से को नियंत्रित करता है।

4. खोदना

बारहमासी खरपतवारों के मामले में मिट्टी की गहरी परत से खरपतवारों के भूमिगत प्रसार वाले हिस्सों को हटाने के लिए खुदाई बहुत उपयोगी है।

5. सिकलिंग और घास काटना

बीज उत्पादन को रोकने और भूमिगत भागों का पोक्षण रोकने के लिए खरपतवारों की ऊपरी वृद्धि को हटाने के लिए हंसिया की मदद से हाथ से सिकलिंग भी की जाती है। यह ढलान वाले क्षेत्रों में लोकप्रिय है जहां मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए केवल लंबे खरपतवार उगने पर मिट्टी को पकड़कर रखने के लिए जड़ प्रणाली को छोड़ दिया जाता है। घास काटना एक मशीन संचालित अभ्यास है जो ज्यादातर सड़कों के किनारे और लॉन में किया जाता है।

6.जलना

जलाना या आग लगाना अक्सर खरपतवार को नियंत्रित करने का एक किफायती और व्यावहारिक साधन है। इसका उपयोग (ए) वनस्पति को नष्ट करने के लिए (बी) परिपक्व हो चुके खरपतवारों के सूखे शीर्षो को नष्ट करने के लिए किया जाता है (सी) उन स्थितियों में हरी खरपतवार की वृद्धि को मारने के लिए जहां खेती और अन्य सामान्य तरीके अव्यावहारिक हैं।

8. बाढ़

लंबे समय तक पानी में डूबे रहने के प्रति संवेदनशील खरपतवार प्रजातियों के खिलाफ बाढ़ सफल होती है। बाढ़ पौधों की वृद्धि के लिए ऑक्सीजन की उपलब्धता को कम करके पौधों को मार देती है। बाढ़ की सफलता लंबे समय तक खरपतवारों के पूरी तरह जलमग्न रहने पर निर्भर करती है।

यांत्रिक विधि के गुण

1. सबसे पुराना, प्रभावी और किफायती तरीका है।
2. बड़े क्षेत्र को कम समय में कवर किया जा सकता है।
3. पर्यावरण के लिए सुरक्षित तरीका है।
4. इसमें कोई कौशल शामिल नहीं है।
5. पौधों के बीच में निराई–गुड़ाई संभव है।
6. गहरी जड़ों वाले खरपतवारों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सकता है।

यांत्रिक विधि के दोष

1. श्रम उपभोग करना।
2. फसल को नुकसान पहुंचने की संभावना।
3. आदर्श एवं विशिष्ट स्थिति की आवश्यकता होती है

यांत्रिक निराई यंत्र–

शुष्क भूमि निराई यंत्र

इसका उपयोग कतार वाली फसलों में उथली जड़ों वाले खरपतवार को हटाने के लिए किया जाता है। इसके आसान संचालन के लिए एर्गोनॉमिक रूप से डिजाइन किया गया। शुष्क भूमि और उद्यान भूमि की फसलों के लिए उपयोगी और आदर्श है मिट्टी में नमी की मात्रा 8 से 10 प्रतिशत होनी चाहिए। भुजा के अंतिम छोर पर 120 मिमी व्यास का स्टार व्हील लगा हुआ है। एक कटिंग ब्लेड को स्टार व्हील के पीछे 200 मिमी की भुजा पर फिट किया जाता है, स्टार व्हील उपकरण की आसान गति को सुविधाजनक बनाता है। उथली जड़ों वाले खरपतवार को हटाने के लिए ब्लेड की ऑपरेटिंग चौड़ाई 120 मिमी होनी चाहिए।

1. सबसे पुराना, प्रभावी और किफायती तरीका है।
2. बड़े क्षेत्र को कम समय में कवर किया जा सकता है।
3. पर्यावरण के लिए सुरक्षित तरीका है।
4. इसमें कोई कौशल शामिल नहीं है।
5. पौधों के बीच में निराई–गुड़ाई संभव है।
6. गहरी जड़ों वाले खरपतवारों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सकता है।

यांत्रिक विधि के दोष

1. श्रम उपभोग करना।
2. फसल को नुकसान पहुंचने की संभावना।
3. आदर्श एवं विशिष्ट स्थिति की आवश्यकता होती है

यांत्रिक निराई यंत्र–

शुष्क भूमि निराई यंत्र

इसका उपयोग कतार वाली फसलों में उथली जड़ों वाले खरपतवार को हटाने के लिए किया जाता है। इसके आसान संचालन के लिए एर्गोनॉमिक रूप से डिजाइन किया गया। शुष्क भूमि और उद्यान भूमि की फसलों के लिए उपयोगी और आदर्श है मिट्टी में नमी की मात्रा 8 से 10 प्रतिशत होनी चाहिए। भुजा के अंतिम छोर पर 120 मिमी व्यास का स्टार व्हील लगा हुआ है। एक कटिंग ब्लेड को स्टार व्हील के पीछे 200 मिमी की भुजा पर फिट किया जाता है, स्टार व्हील उपकरण की आसान गति को सुविधाजनक बनाता है। उथली जड़ों वाले खरपतवार को हटाने के लिए ब्लेड की ऑपरेटिंग चौड़ाई 120 मिमी होनी चाहिए।

पावर रोटरी वीडर

गन्ना, टैपिओका, कपास, टमाटर और ऐसी दालें जिनकी पंक्तियों की दूरी 45 सेमी से अधिक हो आदि फसलों में खरपतवारों के यांत्रिक नियंत्रण के लिए रोटरी वीडर में डिस्क की तीन पंक्तियाँ होती हैं, जिनमें प्रत्येक डिस्क में वैकल्पिक रूप से विपरीत दिशाओं में 6 घुमावदार ब्लेड लगे होते हैं। घूमते समय ये ब्लेड मिट्टी को काटने और मल्चिंग करने में सक्षम बनाते हैं। रोटरी टिलर की कवरेज की चौड़ाई 500 मिमी है फसल वाले खेत में खरपतवार को नष्ट और मिट्टी को भूरभूरा करने के लिए समायोजित किया जा सकता है।

ट्रैक्टर से चलने वाला निराई-गुड़ाई सह मिट्टी निकालने का उपकरण

एक ही पास में कतार वाली फसलों के बीच निराई-गुड़ाई और अंतर-कृषि संचालन के लिए एक इंटर कल्टीवेटर सह अर्थिंग अप उपकरण विकसित किया गया और इसे एक मानक ट्रैक्टर चालित रिजर में फिट किया गया। फसलों की खड़ी पंक्तियों के बीच निराई-गुड़ाई के कार्य को पूरा करने के लिए रिजर फ्रेम में तीन प्रकार के ब्लेड लगाए जाते हैं। स्वीप ब्लेड के पीछे तीन रिजर बॉटम लगाए गए हैं, जो ढीली मिट्टी पर काम करते हैं और मेड़ और खांचे बनाकर मिट्टी डालने में सहायता करते हैं। इनकी निराई-गुड़ाई की दक्षता 61 प्रतिशत है।

ट्रैक्टर चालित मल्टी रो रोटरी वीडर

एक ही पास में गन्ना, कपास, मक्का आदि जैसी पंक्ति वाली फसलों के बीच निराई और अंतर-कृषि संचालन के लिए मल्टी पंक्ति रोटरी वीडर में काटने वाले ब्लेड का एक सेट होता है, जो मिट्टी में प्रवेश करता है, फसल पंक्तियों में खरपतवार को हटा देता है। काटने वाले ब्लेड का उपयोग मिट्टी को ऊपर उठाने और अभिसरण करने के लिए एक झुके हुए विमान के रूप में भी किया गया है। घूमने वाले ब्लेडों का उपयोग खरपतवारों को काटने और मिट्टी को भूरभूरा करने के लिए किया जाता है। इनकी निराई-गुड़ाई की दक्षता 71 प्रतिशत है।

कोनो वीडर

फसल की पंक्तियों के बीच निराई-गुड़ाई के लिए कोनो वीडर में दो शंक्वाकार रोटर होते हैं जो विपरीत दिशा में एक साथ लगे होते हैं। रोटर पर बारी-बारी से लगे चिकने और दाँतेदार ब्लेड खरपतवार को उखाड़ते और दबाते हैं क्योंकि रोटर मिट्टी के शीर्ष 3 सेमी में आगे और पीछे की गति पैदा करते हैं, कोनो वीडर पुश पुल मूवमेंट के बिना एक ही फॉरवर्ड पास में संतोषजनक ढंग से निराई कर सकता है। इसे एकल ऑपरेटर द्वारा संचालित करना आसान है। यह कोनो वीडर निराई-गुड़ाई करने वाली मशीन पलेवा वाली मिट्टी में नहीं डूबती है।

कृषिगत खरपतवार नियंत्रण

फसल के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ बनाने के लिए जुताई, रोपण, उर्वरक अनुप्रयोग, सिंचाई आदि जैसी कई विधियों को नियोजित किया जाता है। अगर इन विधियों का सही ढंग से उपयोग किया जाए तो खरपतवारों को नियंत्रित करने में मदद मिलती है। कृषिगत तरीके, अकेले ही खरपतवारों को नियंत्रित नहीं कर सकते, लेकिन खरपतवारों की आबादी को कम करने में मदद करते हैं। इसलिए, इन्हें अन्य तरीकों के साथ संयोजन में उपयोग किया जाना चाहिए। कृषिगत तरीकों में, जुताई, उर्वरक प्रयोग। और सिंचाई महत्वपूर्ण है. इसके अलावा किस्म का चयन, बुआई का समय, फसल प्रणाली, खेत की साफ-सफाई आदि पहलू भी खरपतवार नियंत्रण में उपयोगी होते हैं।

1. खेत की तैयारी

खेत को खरपतवार मुक्त रखना होगा. खरपतवारों को फलने-फूलने नहीं देना चाहिए। इससे खरपतवार के बीज की आबादी को बढ़ने से रोकने में मदद मिलती है।

2. ग्रीष्मकालीन जुताई

ग्रीष्मकालीन जुताई या ऑफ-सीजन जुताई फसल की खेती में बारहमासी खरपतवार की आबादी की वृद्धि को रोकने के लिए प्रभावी कृषिगत तरीकों में से एक है। प्रारंभिक जुताई फसल काटने के बाद ढेले बनने को प्रोत्साहित करता, ये ढेलें, जिनमें खरपतवार के प्रजनक होते हैं, सूखने पर वही सूख जाते हैं। बाद में जुताई के कार्यों में ढेलों को छोटी-छोटी इकाइयों में तोड़ देना चाहिए ताकि सिकुड़े हुए खर-पतवार को तेज धूप में उजागर और नष्ट किया जा सके।

3. इष्टतम पौधों की आबादी का रख-रखाव

पर्याप्त पौधों की आबादी के अभाव में भारी खरपतवार संक्रमण का खतरा होता है, जिसे बाद में नियंत्रित करना मुश्किल हो जाता है। इसलिए खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम उचित और समान फसल पौधो की स्टैंड प्राप्त करने के लिए उचित बीज का चयन, बुआई की सही विधि, मिट्टी जनित कीटों और बीमारियों से बीज की पर्याप्त बीज दर सुरक्षा आदि जैसी प्रथाएं बहुत महत्वपूर्ण हैं।

4. फसल चक्र

यदि एक ही फसल साल-दर-साल उगाई जाए तो एक निश्चित खरपतवार प्रजाति या प्रजातियों के समूह के होने की संभावना अधिक होती है। कई मामलों में, फसल चक्रण से कम से कम कठिन खरपतवार समस्याओं को कम किया जा सकता है। निचली भूमि वाले चावल को

फसल चक्र में शामिल करके मौथा जैसे अप्रिय खरपतवारों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सकता है।

5. अंतरफसलों को उगाना

अंतरफसली, एकल फसल की तुलना में खरपतवारों को बेहतर ढंग से दबाती है और इस प्रकार फसलों को खरपतवार प्रबंधन के उपकरण के रूप में उपयोग करने का अवसर प्रदान करती है। कई छोटी अवधि की दालें जैसे मूंग और सोयाबीन मुख्य फसल की उपज में कमी किए बिना खरपतवारों को प्रभावी ढंग से नष्ट कर देती हैं।

6. मल्च

मिट्टी की सतह पर बनी सामग्री का एक सुरक्षात्मक आवरण है। मल्चिंग का पौधे के प्रकाश संश्लेषक भागों से प्रकाश को बाहर निकालकर खरपतवार नियंत्रण पर समान प्रभाव पड़ता है यह वार्षिक खरपतवारों और कुछ बारहमासी खरपतवारों जैसे *सिनोडोन डेक्टाइलॉन* के खिलाफ बहुत प्रभावी है। मल्चिंग सूखी या हरी फसल के अवशेषों, प्लास्टिक शीट या पॉलिथीन फिल्म द्वारा की जाती है। मल्चिंग प्रभावी होने के लिए गीली घास इतनी मोटी होनी चाहिए कि प्रकाश संचरण को रोक सके और प्रकाश संश्लेषण को समाप्त कर सके।

7. सौरीकरण

यह खरपतवारों को सुखाने के लिए सौर ऊर्जा के उपयोग की एक और विधि है। इस विधि में, पहले से भीगे हुए परती खेत को पतली पारदर्शी प्लास्टिक शीट से ढककर मिट्टी का तापमान 5–10 डिग्री तक बढ़ा दिया जाता है। प्लास्टिक शीट मिट्टी से लंबी तरंग विकिरण को रोकती है और नमी के वाष्पीकरण में बाधा डालकर ऊर्जा के नुकसान को रोकती है।

8. बीजशाला

बीज क्यारी वह होती है जहां फसल बोने से पहले प्रारंभिक एक या दो खरपतवार नष्ट कर दिए जाते हैं। यह एक अच्छी तरह से तैयार खेत को सिंचाई या बारिश से भिगोने और खरपतवारों को अंकुरित होने देने से प्राप्त होता है। इस स्तर पर खरपतवार अंकुरों के घने झुंड को नष्ट करने के लिए उथली जुताई या पैराक्वाट जैसे गैर–अवशिष्ट शाकनाशी का उपयोग किया जा सकता है। इसके तुरंत बाद बुआई की जा सकती है। यह तकनीक फसल को लगभग खरपतवार रहित वातावरण में अंकुरित करने मे मदद करती है।

9. अंधी जुताई

किसी फसल को बोने के बाद पौधे निकलने से पहले मिट्टी की जुताई को अंधी जुताई कहा जाता है। ड्रिल बुआई वाली फसलों में खरपतवार की तीव्रता को कम करने के लिए इसका बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है, जहां बुआई के तुरंत बाद बारिश या सिंचाई के कारण मिट्टी की परत बनने से फसल के अंकुर निकलने में बाधा आती है।

10. फसल प्रबंधन प्रथाएँ

अच्छी फसल प्रबंधन प्रथाएँ जो खरपतवार नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं

- जोरदार और तेजी से बढ़ने वाली फसल की किस्में खरपतवारों से बेहतर प्रतिस्पर्धी होती हैं।
- उर्वरकों का उचित स्थान फसल पौधों को पोषक तत्वों की अधिक उपलब्धता सुनिश्चित करता है।
- खरपतवारों पर अच्छी बढ़त पाने के लिए बेहतर सिंचाई पद्धतियाँ अपनाएँ।
- उचित फसल चक्र कार्यक्रम अपनाए।
- प्रति इकाई क्षेत्र में पौधों की संख्या अधिक होने से खरपतवार की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

तिल की फसल में खरपतवार नियंत्रण

निशा महान, लोकनाथ सिंह, विनोद कुमार पाण्डेय एवं बरुन कुमार सिंह
ब्रह्मानंद महाविद्यालय राठ, हमीरपुर (यू.पी.)

तिल के उत्पादन के साक्ष्य 1600 ई.वी. में टिगरिस और यूफ्रेट्स की घाटियों से मिले हैं अत: तिल खाद्य तेल के लिए उगाया जाने वाला सबसे पुराना पौधा है। तिल एक वर्षीय पौधा है जिसकी ऊंचाई 20 से 60 इंच तक रहती है। तिल के बीज में 50 से 55 प्रतिशत तेल तथा 25 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है। भारत में तिल का उत्पादन सर्वाधिक कर्नाटक राज्य में किया जाता है।

तिल के तेल में लगभग 47 प्रतिशत ओलिक एसिड तथा 39 प्रतिशत लिनोलिक एसिड पाया जाता है। तिल के बीज का प्रयोग मसाले के रूप में विभिन्न प्रकार की सब्जियों तथा अचार व विभिन्न प्रकार की मिठाइयां बनाने में किया जाता है। तिल के तेल का प्रयोग सब्जी, पकवान, पेंट, साबुन, सौंदर्य प्रसाधन, इत्र, कीटनाशकों और फार्मास्यूटिकल्स में भी किया जाता है। तिल में पाए जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट- सेसमोल के कारण तिल की सेल्फ लाइफ लंबी होती है।

तिल की फसल में खरपतवारों से होने वाली हानियां-

खरीफ ऋतु में उच्च तापमान व अधिक नमी के कारण रबी ऋतु की अपेक्षा अधिक खरपतवार उगते हैं। तिल खरीफ ऋतु की फसल होने के कारण तिल में खरीफ ऋतु में उगने वाले सभी प्रकार के खरपतवार उगते हैं। तिल की फसल को बुवाई के 15 से 45 दिन तक खरपतवार मुक्त रखना चाहिए इस समय पर फसल में खरपतवार अधिक उगने से फसल की उपज में बुरा असर पड़ता है क्योंकि खरपतवार भूमि में निहित पोषक तत्वों तथा नमी का बड़ा हिस्सा अवशोषित कर लेते हैं और साथ ही साथ फसल को आवश्यक प्रकाश एवं स्थान से भी वंचित रखते हैं। खरपरवार विभिन्न रोगों के जीवाणुओं एवं कीट व्याधियों को आश्रय देते हैं जिससे तिल की उपज में 17 से 41 प्रतिशत तक की गिरावट आ जाती है। खरपतवारों के बीज फसल की कटाई के समय फसल के बीज के साथ मिलकर फसल की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं जिससे फसल का बाजार मूल्य कम मिलता है।

तिल में उगने वाले खरपतवार- तिल की फसल में विभिन्न प्रकार के खरपतवार उगते हैं-

संकरी पत्ती वाले खरपतवार

- पत्थरचटा (*ट्रायेन्थमा पोरयूलाकासड्रम*)
- कनकवा (*कामेलिना बेघालेनसिस*)
- महकुआ (*एजीरेटम कोनीज्वाडिस*)
- वन मकोय (*फाइजेलिस मिनीमा*)
- सफेद मुर्ग (*सिलोसिया अर्जेन्सिया*)
- हजारदाना (*फाइलेन्थस निरुरी*)

चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार

- सांवक (*इकानोक्लोआ कोलोना*)
- कोदों (*इल्यूसिन इंडिका*)
- बनरा (*सिटैरिया ग्लाऊका*)
- दूब घास (*साइनोंडोन डेक्टीलोन*)

मोथाकुल परिवार के खरपतवार

मोथा (*साइपेरस रोटन्ड्स, साइपेरस इरिया* आदि)

खरपतवार नियंत्रण की विधियां-

निवारक विधि- बुवाई के लिए साफ-सुथरे एवं प्रमाणित बीज का ही प्रयोग करना चाहिए।

- बुवाई से पहले (खेत की तैयारी के समय) पूर्णता सड़ी हुई गोबर या कंपोस्ट की खाद का प्रयोग करना चाहिए।
- सिंचाई और जल निकास नालियों को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए।
- खेत की तैयारी व बुवाई में प्रयोग होने वाले यंत्रों की प्रयोग करने से पूर्व अच्छी तरह से साफ- सफाई कर लेनी चाहिए।

यांत्रिक विधि- तिल की फसल खरीफ ऋतु की फसल होने के कारण खरपतवारों का प्रकोप अधिक बना रहता है। तिल की फसल में फसल-खरपतवार प्रतियोगिता का क्रांतिक समय बुवाई के 15 से 45 दिन

तक रहता है इसलिए तिल की फसल की पहली निराई–गुड़ाई बुवाई के 15 से 20 दिन बाद तथा दूसरी निराई–गुड़ाई बुवाई के 30 से 35 दिन बाद करके खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। यह विधि छोटे खेतों के लिए उपयोगी होती है ज्यादा रकबा में इस विधि से खरपतवार नियंत्रण करने पर धन व समय अधिक खर्च होता है।

रासायनिक विधि– रासायनिक विधि में खरपतवार नियंत्रण के लिए विभिन्न प्रकार के खरपतवार नाशक रसायनों का प्रयोग फसल व भूमि में किया जाता है। बड़े क्षेत्रफल में इस विधि से खरपतवार नियंत्रण करने पर प्रति हेक्टेयर लागत कम आती है तथा समय की बचत हो जाती है। इस विधि से खरपतवार नियंत्रण में खरपतवारनाशियों की उचित मात्रा, उचित प्रयोग विधि तथा उपयुक्त समय का विशेष ध्यान रखना पड़ता है इन बिंदुओं का ध्यान न रखने पर फसल को लाभ की वजह हानि भी हो सकती है। तिल की बुवाई के बाद एलाक्लोर की 1.5 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि पर छिड़काव करना चाहिए।

तिल की मिश्रित फसल में रासायनिक खरपतवार नियंत्रण, अरहर के साथ तिल को मिश्रित फसल के रूप में उगाने पर फ्लूक्लोरालिन की 1 से 1.5 किलोग्राम सक्रिय मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के पहले भूमि में छिड़काव करके मिला देनी चाहिए या पेंडीमेंथलिन की 1 से 1.5 किलोग्राम सक्रिय मात्रा को बुवाई के बाद तथा अंकुरण से पूर्व भूमि में छिड़काव करना चाहिए।

रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण करते समय खरपतवारनाशियों की उपयुक्त मात्रा का प्रयोग करना अति आवश्यक है। खरपतवारनाशियों की गणना के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर द्वारा डी.डब्ल्यू.आर. हर्ब कैल तथा वीड मैनेजर जैसे मोबाइल एप विकसित किए गए हैं इन एप्स को गूगल प्ले स्टोर से मुफ्त में डाउनलोड करके फसल तथा रकबा से संबंधित आवश्यक जानकारी भरने के बाद खरपतवारनशियों की मात्रा तथा आवश्यक पानी की मात्रा की सही जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

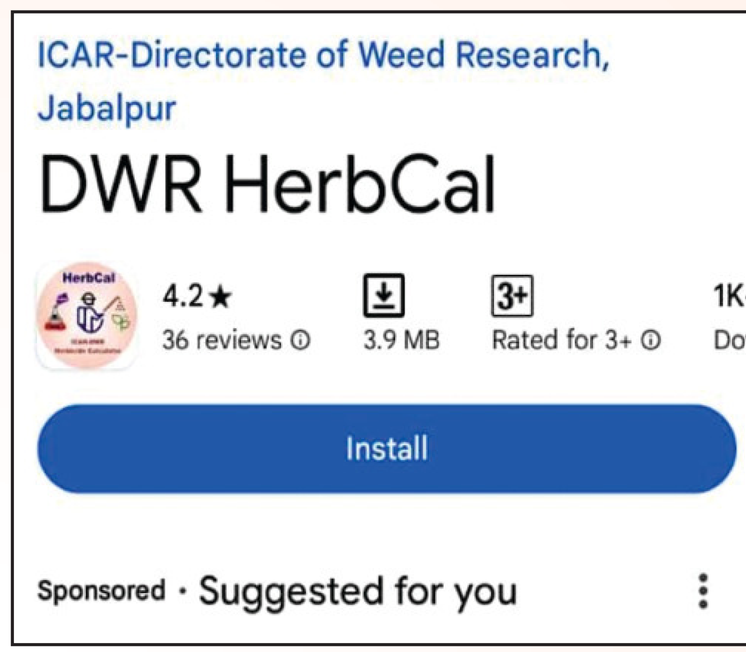

भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है। हिन्दी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है।

– नरेन्द्र मोदी

भूमि आंवला (*फाइलेन्थस निरुरी*) खरपतवार के औषधीय गुण व उपयोग

लालचन्द कुमावत[1], ए.पी. सिह[2], जे.चौधरी[1], अशोक कुमार सामोता[1] एवं सिमरन जास्ट[3]
[1]महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान
[2]कृषि विज्ञान और ग्रामीण विकास स्कूल नागालैंड विश्वविद्यालय, मेदि्जफेमा कैंपस, नागालैंड
[3]चौधरी चरण सिह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा

परिचय :-

भूमि आंवला (*फाइलेन्थस निरुरी*) एक खरपतवार है जो एक उष्णकटिबंधीय पौधा है और आमतौर पर तटीय क्षेत्रों में पाया जाता है, जिसे सामान्य नाम गेल ऑफ द विंड, स्टोनब्रेकर या सीड–अंडर–लीफ व हजारदाना से जाना जाता है। यह फाइलैन्थेसी परिवार के फाइलैन्थस वंश से है। भूमि आंवला (*फाइलेन्थस निरुरी*) को 'डुकोंग अनाक' और संस्कृत में 'भूमि अमलकी' के नाम से भी जाना जाता है। संपूर्ण पौधा विभिन्न औषधीय गुणों से युक्त होता है।

भूमि आंवला एक छोटी, वार्षिक चमकदार जड़ी–बूटी है, जो आमतौर पर बरसात के मौसम में खेतों, बगीचे के लॉन, सड़कों के किनारे और अन्य गैर–फसल वाले घास वाले क्षेत्रों में पाई जाती है, फूल छोटे और सफेद होते हैं। जुलाई–अगस्त के दौरान फूल आते है। यह चवनप्राश और दशमूला का एक घटक है और इसे कसैला, ठंडा और मूत्रवर्धक माना जाता है। पुरानी पेचिश, पीला बुखार/पीलिया के लिए कोमल अंकुरों के आसव की सिफारिश की जाती है। जननांग–मूत्र पथ की अन्य परेशानियाँ, पुल्टिस अल्सर, घाव और सूजन में उपयोगी है भूमि आंवला लिवर विकारों के प्रबंधन में मदद करता है और अपनी हेपेटोप्रोटेक्टिव, एंटीऑक्सीडेंट और एंटीवायरल गतिविधियों के कारण लिवर को होने वाले किसी भी नुकसान को ठीक करता है। यह गैस्ट्रिक एसिड उत्पादन को कम करके अल्सर को रोकने के साथ–साथ अत्यधिक गैस्ट्रिक एसिड से होने वाले नुकसान से पेट की परत की रक्षा करने में भी मदद करता है। भूमि आंवला अपने मूत्रवर्धक गुण के कारण गुर्दे की पथरी के खतरे को भी कम कर सकता है। यह गुर्दे की पथरी के निर्माण के लिए जिम्मेदार लवणों (मुख्य रूप से ऑक्सालेट क्रिस्टल) को हटाने को बढ़ावा देकर ऐसा करता है।

आयुर्वेद के अनुसार, भूमि आंवला अपने पित्त संतुलन गुण के कारण अपच और एसिडिटी के लिए अच्छा माना जाता है। यह मधुमेह रोगियों के लिए भी फायदेमंद हो सकता है क्योंकि यह अपने तिक्त (कड़वे) गुण के कारण रक्त शर्करा के स्तर को प्रबंधित करने में मदद करता है। भूमि आंवला की 1–2 गोलियां या कैप्सूल दिन में दो बार लेने से इसके रक्त शुद्ध करने वाले गुण के कारण त्वचा संबंधी विकारों से छुटकारा मिलता है। भूमि आंवला के पाउडर को पानी के साथ लेने से बालों का झड़ना रोकने के साथ–साथ बालों के पुनर्विकास को बढ़ावा देने में भी मदद मिल सकती है।

पादप आकारिकी

भूमि आंवला (*फाइलेन्थस निरुरी*) को आमतौर पर ''हजारदाना'' के रूप में जाना जाता है, यह एक वार्षिक खरपतवार है, जो 2 –3 फीट की ऊंचाई तक बढ़ता है और आधार पर छोटी पत्तियों के साथ ऊपर की ओर बाल रहित शाखाएं होती हैं। पत्तों को फूलों और फलों से सजाया जाता है। भूमि आंवला की पहचान तने से उगने वाली बिना डंठल वाली छोटी हरी अण्डाकार आकार की पत्तियों से होती है। पत्तियाँ तने के दोनों तरफ वैकल्पिक रूप से और बारीकी से व्यवस्थित होती हैं जिनमें दो छोटे डंठल होते हैं। *फाइलेन्थस निरुरी* पर अक्सर लाल रंग के साथ जोड़े गए पीले रंग के छोटे, एकलिंगी फूल मौजूद होते हैं। नर फूल 1 से 3 सेसाइल पुंकेसर वाले तथा मादा फूल एकान्तिक प्रकृति वाले होते हैं। फल 2 से 3 मिलीमीटर व्यास के चिकने और छोटे कैप्सूल के रूप में होते हैं। तना मध्यम कठोर होता है।

भूमि आंवला के फायदे

1. लीवर विकार

भूमि आंवला पीलिया, लीवर में सूजन और कमजोर लीवर कार्यप्रणाली जैसी लीवर की समस्याओं के समाधान के लिए सबसे अच्छी जड़ी–बूटी है। भूमि आंवला न केवल लीवर के विषहरण में मदद करता है, बल्कि पित्त के गुणों के कारण पोषण में भी मदद करता है।

2. अपच और अम्लता

यह पित्त संतुलन के अपने गुणों के कारण अपच और अम्लता को कम करता है जो पाचन में सुधार करने में मदद करता है।

3. उच्च शर्करा स्तर

भूमि आंवला अपने कड़वा और कसैले रस गुणों के कारण उच्च शर्करा स्तर को नियंत्रित व कम करता है जो मेटाबोस्लिम में सुधार करने और रक्त में उच्च शर्करा स्तर को नियंत्रित करने में मदद करता है।

4. रक्तस्राव विकार

इसकी सीता (ठंडी) शक्ति और कसैले गुण के कारण यह नाक से रक्तस्राव, मासिक धर्म में भारी रक्तस्राव को कम करने के लिए अच्छा है जो पित्त को संतुलित करने और अत्यधिक रक्त प्रवाह को नियंत्रित करने में मदद करता है।

5. त्वचा रोग

यह रक्त शोधक के रूप में कार्य करता है और तिक्त (कड़वा) रस और पित्त संतुलन प्रकृति के कारण आंतरिक रूप से लेने पर त्वचा संबंधी विकारों को कम करता है।

6. खांसी और सर्दी

भूमि आंवला में कफ को संतुलित करने का गुण होता है जिसके परिणामस्वरूप यह खांसी, अस्थमा, सांस फूलना और हिचकी को कम करता है।

7. बुखार

भूमि आंवला अपने तिक्त (कड़वा) और पित्त संतुलन गुणों के कारण बुखार (टाइफाइड संक्रमण से जुड़े) को भी कम करता है जो उपापाच्य और पोषण संबंधी विकार में मदद करता है और शरीर से विषाक्त पदार्थों को निकालता है।

पादप के उपयोगी भाग:-

भूमि आंवला के पूरे पौधे का उपयोग आम तौर पर मौखिक सेवन के लिए आंतरिक दवा के रूप में किया जाता है। इसका लेप विभिन्न त्वचा रोगों पर भी लगाया जाता है।

1.पत्तियाँ 2. तना 3.फल 4.फूल 5.जड़

भूमि आंवला के बाजार उत्पाद :-

भूमि आंवला का उपयोग जूस, काढ़ा, पाउडर, कैप्सूल जैसे कई रूपों में किया जा सकता है।

निष्कर्ष

भूमि आंवला के बीजों, पत्तों, और मूल का उपयोग विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं के उपचार के लिए किया जाता है। इसके रूप में, यह गैस्ट्रोइंटेस्टिनल स्वास्थ्य, पेशाब के रोग, लीवर के रोग, पेट के कीटाणुओं के इलाज, डायबिटीज़, मुख्य रूप से त्वचा समस्याओं (जैसे कि दाद, खुजली और सोरायसिस) के लिए उपयोग होता है। भूमी आंवला के बीजों और पत्तों में विभिन्न औषधीय गुण होते हैं, जैसे कि फ्लावोनॉइड, टैनिन, फेनोलिक संयोजक, एल्कलॉयड, विटामिन सी, और विटामिन आदि। इन तत्वों के कारण, भूमी आंवला में जीवाणुरोधी, एंटीवायरल, एंटीबैक्टीरियल, और एंटीऑक्सीडेंट गुण होते हैं। आयुर्वेदिक औषधियों में भूमि आंवला का उपयोग करने के विभिन्न तरीके हो सकते हैं, जैसे कि काढ़ा, स्वरस, गोलियाँ, रस और पाउडर।

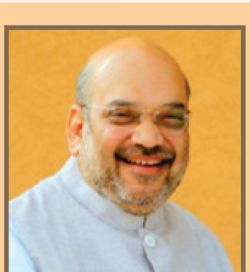

भारतीय सभ्यता की अविरल धारा प्रमुख रूप से हिन्दी भाषा से ही जीवंत तथा सुरक्षित रह पाई है।

– अमित शाह

भारतीय कृषि पारिस्थितिकी में खरपतवारों की भूमिका तथा लाभकारी दृष्टिकोण

आर.के. सिंह, सौरव चौरसिया
कृषि विज्ञान केन्द्र, अमिहित, जौनपुर
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

किसान उन्नत किस्म के बीज, उपयुक्त उर्वरक, नियमित सिंचाई तथा पादप सुरक्षा के विभिन्न उपायों जैसे उत्पादन साधनों को वैज्ञानिक विधि से अपनाकर अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के अपने लक्ष्य में अब भी पूर्णतया सफल नहीं हो पा रहे हैं। इसका एकमात्र कारण है कि वे उन्नतशील साधनों को अपनाने के साथ–साथ खरपतवारों के नियंत्रण पर पूर्ण ध्यान नहीं देते हैं। यदि किसान को अपनी फसल से भरपूर उपज प्राप्त करनी है तो अपनी फसल के हानिकारक खरपतवारों पर नियंत्रण पाने के महत्व को समझकर उनको नष्ट करना होगा। खरपतवारों की उपस्थिति फसल की उपज को 37 प्रतिशत तक कम करते हैं।

यह प्रमाणित है कि खरपतवारों की उपस्थिति फसल की उपज को कम करने में सहायक है। किसान जो अपनी पूर्ण शक्ति व साधन फसल की अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए लगाता है। ये अनैच्छिक पौधे इस उद्देश्य को पूरा नहीं होने देते। खरपतवार फसल के पोषक तत्व, नमी, प्रकाश, स्थान आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करके फसल की वृद्धि, उपज एवं गुणों में कमी कर देते है। खरपतवारों से हुई हानि किसी अन्य कारणों से जैसे कीड़े, मकोड़े, रोग, व्याधि आदि से हुई हानि की अपेक्षा अधिक होती है। एक अनुमान के आधार पर हमारे देश में विभिन्न व्याधियों से प्रतिवर्ष लगभग 1.42 हजार करोड़ रूपये की हानि होती है जिसका लगभग एक तिहाई से ज्यादा खरपतवारों द्वारा होता है।

आमतौर पर विभिन्न फसलों की पैदावार में खरपतवारों द्वारा 10 से 85 प्रतिशत तक की कमी आंकी गई है। लेकिन कभी–कभी यह कमी 99 प्रतिशत तक हो जाती है। खरपतवार फसलों के लिए भूमि में निहित पोषक तत्व एवं भूमि का एक बड़ा हिस्सा शोषित कर लेते हैं तथा साथ ही साथ फसल को आवश्यक प्रकाश एवं स्थान से भी वंचित रखते है। फलस्वरूप पौधे की विकास गति धीमी पड़ जाती है एवं उत्पादन स्तर गिर जाता है। किसी स्थान पर खरपतवारों की उपस्थिति वहां की जलवायु, भूमि, संरचना, भूमि में नमी की मात्रा, खेतों में बोई गई पिछली फसल आदि पर निर्भर करती है। इसलिए एक ही फसल में अलग–अलग स्थानों पर अलग–अलग प्रकार के खरपतवार पाये जाते हैं।

खरपतवारों का प्रबंधन

खरपतवार के प्रबंधन में ध्यान देने योग्य बात यह है कि खरपतवारों का नियंत्रण सही समय पर करें। खरपतवारों का प्रबंधन निम्नलिखित तरीकों से किया जाता है।

प्रबंधन रणनीतियाँ

खरपतवारों का प्रभावी प्रबंधन करने में निम्नलिखित रणनीतियाँ शामिल हैं–

(क) सस्य विधि (उचित फसल चक्र, सिंचाई और उर्वरक)

(ख) भौतिक विधि (हाथ से उखाड़ना, मल्चिंग)

(ग) रासायनिक विधि (शाकनाशियों का प्रयोग)

(घ) जैविक विधि (प्राकृतिक शत्रुओं या प्रतिस्पर्धियों का उपयोग करके खरपतवारों की रोकथाम करते हैं।)

(ङ) एकीकृत खरपतवार प्रबंधन (आई.डब्ल्यू.एम.) दृष्टिकोण।

(क) सस्य विधियाँ

1. **फसल चक्रः** खरपतवार चक्र को तोड़ने के लिए खेत में उगाई जाने वाली फसल के प्रकार को बदल दिया जाता है।
2. **अंतरफसलः** खरपतवारों को दूर करने के लिए एक साथ कई फसलें लगायी जाती हैं।
3. **मल्चिंगः** खरपतवार की वृद्धि को दबाने के लिए जैविक सामग्री की एक परत बिछाई जाती है, जो भूमि के उपर अधिक छाया प्रदान करके खरपतवारों के जमाव को रोकते है।
4. **कवर फसलः** खरपतवार की वृद्धि को रोकने के लिए ऑफ–सीजन में भी फसलें लगाई जाती हैं।
5. **हाथ से निराई–गुड़ाईः** हाथ से अथवा हस्त चालित औजारों से खरपतवार निकाले जाते हैं।
6. **फ्लेम वीडिंगः** सीधे गर्मी लगाकर खरपतवारों को मारने के लिए लौ का उपयोग किया जाता है।
7. **सौर्यीकरणः** खरपतवार को मारने के लिए सूरज की गर्मी को एक स्पष्ट प्लास्टिक (तिरपाल) के नीचे रोकना।
8. **जैविक नियंत्रणः** खरपतवारों की वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए उनके प्राकृतिक शत्रुओं, जैसे कीड़े या बीमारियाँ का उपयोग किया जाता है।
9. **सहवर्ती रोपणः** खरपतवारों को दूर करने या दबाने के लिए कुछ फसलों को एक साथ लगाया जाता है।
10. **एले क्रापिंगः** खरपतवार की वृद्धि को कम करने के लिए पेड़ों या अन्य स्थायी फसलों की पंक्तियों के बीच फसलें लगायी जाती है।

(ख) भौतिक विधियाँ

1. **हाथ से उखाड़नाः** हाथ से खरपतवार निकालना, विशेष रूप से छोटे क्षेत्रों के लिए प्रभावी है।
2. **निराई–गुड़ाईः** मिट्टी की सतह पर खरपतवार को काटने या हटाने के लिए मानव चालित उपकरण का उपयोग किया जाता है।
3. **जुताईः** खरपतवार उखाड़ने और हटाने के लिए जुताई या गहरी पलटाई की जाती है।
4. **मल्चिंगः** खरपतवार की वृद्धि को रोकने के लिए भूमि की उपरी सतह पर कार्बनिक/जैविक पदार्थों का भौतिक अवरोध लगाया जाता है।
5. **लौ निराईः** खरपतवार को मारने के लिए प्रोपेन टॉर्च या अन्य लौ स्रोत का उपयोग किया जाता है।
6. **भाप से निराई–गुड़ाईः** खरपतवारों को मारने के लिए भाप लगाया जाता है।

7. **भौतिक बाधाएँ:** खरपतवार की वृद्धि को रोकने के लिए लैंडस्केप फैब्रिक या प्लास्टिक शीटिंग जैसी सामग्रियों का उपयोग किया जाता है।
8. **निराई–गुड़ाई के कांटे:** मिट्टी से खरपतवार हटाने के लिए कांटों वाले मानव चालित उपकरण का उपयोग किया जाता है।
9. **रोटोटिलिंग:** खरपतवार निकालने के लिए मशीनों का उपयोग किया जाता है।

(ग) रासायनिक विधियाँ

1. **शाकनाशी:** खरपतवारों को मारने या नियंत्रित करने के लिए रसायनों का प्रयोग किया जाता है।
2. **चयनात्मक शाकनाशी:** फसलों को हानि रहित रखते हुए विशिष्ट खरपतवारों को ही नियंत्रित करता है, जैसे– प्रेटिलाक्लोर, पेंडिमिथैलीन इत्यादि।
3. **गैर–चयनात्मक शाकनाशी:** खरपतवार नियंत्रण के लिए उपयोग की जाने वाली शाकनाशी जो सभी प्रकार की वनस्पतियों को नष्ट कर देता है, जैसे–ग्लाइफोसेट, पैराक्वाट इत्यादि।
4. **पूर्व–उभरती शाकनाशी:** खरपतवारों के अंकुरण से पहले लगाया जाता है, जिससे खरपतवार विकास को रोका जा सके जैसे– पेंडिमिथैलीन, मेट्रीब्यूजिन इत्यादि।
5. **जमाव के बाद शाकनाशी:** खरपतवार उगने के बाद उन्हें मारनेया नियंत्रित करने के लिये प्रयोग किया जाता है, जैसे– 2,4–डी., पैराक्वाट, इत्यादि।
6. **संपर्क शाकनाशी:** शाकनाशी के संपर्क मे आने पर खरपतवार को नष्ट कर देता है। जैसे– आक्सीफ्लोरफेन, ब्रोमोक्सीनिल इत्यादि।
7. **प्रणालीगत शाकनाशी:** खरपतवारों द्वारा अवशोषित होकर उन्हें भीतर से मार देता है, जैसे– ग्लाइफोसेट, सिल्वैक्स इत्यादि।
8. **हार्मोन–प्रकार के शाकनाशी:** पौधों के हार्मोन की नकल करके, खरपतवार की वृद्धि को बाधित करते हैं जिससे खरपतवार मर जाते हैं, जैसे– 2,4–डी., बेन्जोइक एसिड, इत्यादि।
9. **अवरोधक शाकनाशी:** एंजाइम उत्पादन को अवरुद्ध कर देता है जिस कारण खरपतवार की वृद्धि रुक जाती हैजैसे– लैक्टोफेन, मेट्रीब्यूजिन इत्यादि।
10. **अवशिष्ट शाकनाशी:** मिट्टी में सक्रिय रहकर लंबे समय तक खरपतवारों को नियंत्रित करता है जैसे– सल्फोनाइल यूरिया इत्यादि।

(घ) जैविक विधियाँ

1. **बायोकंट्रोल एजेंट:** खरपतवारों की वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए उनके प्राकृतिक शत्रुओं जैसे कीड़ों या बीमारियों का उपयोग किया जाता है। जैसे– जाइगोग्रामा कीट का उपयोग पारथेनियम को नियंत्रित करनें में किया जाता है।
2. **कीट:** खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए कीड़ों का उपयोग करना, जैसे जलकुंभी को नियंत्रित करने के लिए *नियोकेटिना आइकोर्नी* का उपयोग कियाजाता है।
3. **निमैटोड:** सूक्ष्म निमैटोड जो खरपतवार की जड़ों पर हमला करते हैं और उन्हें मार देते हैं। जैसे– *हिर्शमैनिएला स्पिनिकाउडाटा* निमेटोड का उपयोग धान की फसल में खरपतवार नियंत्रित करनें में किया जाता है।
4. **फफूंद रोगजनक:** खरपतवारों को संक्रमित और नियंत्रित करने के लिए कवक का उपयोग किया जाता है। जैसे– राइजोक्टिनिया फफूंद
5. **बैक्टीरिया:** खरपतवारों को मारने वाले विषाक्त पदार्थो का उत्पादन करने के लिए बैक्टीरिया का उपयोग किया जाता है। जैसे– राइजोबैक्टीरिया
6. **खरपतवार बीज शिकारी:** पक्षियों एवं जानवरों को खरपतवार के बीज खाने के लिए प्रोत्साहित करना जिससे बीज बैंकों कम हो।
7. **आवरण फसलें:** ऐसी फसलें लगाना जो खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा करती हैं, जिससे खरपतवारों की वृद्धि कम हो जाती है। जैसे– मक्का, ज्वार, बरसीम इत्यादि।
8. **एलेलोपैथी:** खरपतवार की वृद्धि को दबाने के लिए ऐसे पौधों का उपयोग करना जो रसायन छोड़ते हैं। जैसे–सूरजमुखी, ज्वार, राई इत्यादि।
9. **जैविक गीली घास:** खरपतवारों को दबाने के लिए जीवित पौधों को गीली घास के रूप में उपयोग किया जाता है। जैसे– सनई, ढैंचा इत्यादि।
10. **माइकोरिजल कवक:** लाभकारी कवक जो फसलों को खरपतवारों से मुकाबला करने में मदद करते हैं। जैसे– अर्बुस्कुलर माइकोरिजल कवक।

(ड़) एकीकृत खरपतवार प्रबंधन (आई.डब्ल्यू.एम.) दृष्टिकोण

आई.डब्ल्यू.एम. खरपतवार प्रबंधन के लिए एक समग्र दृष्टिकोण है जो आर्थिक, स्वास्थ्य और पर्यावरणीय जोखिमों को कम करने के लिए भौतिक, सस्य, जैविक और रासायनिक नियंत्रणों को जोड़ता है। आई.डब्ल्यू.एम. दृष्टिकोण निम्नलिखित सिद्धांतों पर विचार करता है:

1. **पहचान:** खरपतवार प्रजातियों और उनके जीवन चक्र की सटीक पहचान करें।
2. **निगरानी:** खरपतवार की उपस्थिति और घनत्व का पता लगाने के लिए नियमित रूप से खेतों और फसलों की निगरानी करें।
3. **सीमा स्तर:** खरपतवार नियंत्रण कार्रवाई के लिए सीमा स्तर स्थापित करें।
4. **नियंत्रण विधियाँ:** प्रभावकारिता, सुरक्षा और पर्यावरणीय प्रभाव के आधार पर नियंत्रण विधियों का संयोजन चुनें।
5. **मूल्यांकन:** नियंत्रण विधियों की प्रभावशीलता का लगातार मूल्यांकन करें और आवश्यकतानुसार रणनीति को समायोजित करें।
6. **प्रतिरोध प्रबंधन:** नियंत्रण विधियों के लिए खरपतवार प्रतिरोध के विकास में देरी करने के लिए रणनीतियों को लागू करें।
7. **पर्यावरणीय विचार:** गैर–लक्षित जीवों, परागणकों और पर्यावरण को नुकसान कम से कम करें।
8. **आर्थिक विचार:** लागत को कम करने और फसल की पैदावार को अधिकतम करने के लिए नियंत्रण विधियों को अनुकूलित करें।
9. **सांस्कृतिक नियंत्रण:** खरपतवार की स्थापना और फैलाव को रोकने के लिए कृषि पद्धतियों को संशोधित करें।
10. **जैविक नियंत्रण:** खरपतवारों की आबादी को नियंत्रित करने के लिए प्राकृतिक शत्रुओं और लाभकारी जीवों को प्रोत्साहित करें।
11. **रासायनिक नियंत्रण:** न्यूनतम पर्यावरणीय प्रभाव वाले उत्पादों का चयन करते हुए, विवेकपूर्ण ढंग से और केवल आवश्यक होने पर ही जड़ी–बूटियों का उपयोग करें।
12. **रिकॉर्ड रखना:** खरपतवार प्रबंधन गतिविधियों और उनकी प्रभावशीलता का सटीक रिकॉर्ड बनाकर रखें।

आई.डब्ल्यू.एम. रणनीतियों में शामिल हो सकते हैं–

- फसल चक्र और योजना
- मृदा प्रबंधन और तैयारी
- हाथ से निराई और यांत्रिक नियंत्रण
- फसल और मल्चिंग को ढककर रखें
- जैविक नियंत्रण एजेंट
- शाकनाशी उपयोग और प्रतिरोध प्रबंधन
- निगरानी और रिकॉर्ड रखना

आई.डब्ल्यू.एम. दृष्टिकोण अपनाकर, किसान और बागवान रासायनिक उपयोग को कम कर सकते हैं, पारिस्थितिक संतुलन को बढ़ावा दे सकते हैं और टिकाऊ फसल उत्पादन सुनिश्चित कर सकते हैं।

विकासवादी शस्त्र दौड़:

खरपतवार और फसलों के बीच का संबंध एक सतत विकासवादी लड़ाई है। जैसे–जैसे किसान नई शाकनाशी और खेती की तकनीक विकसित करते हैं, खरपतवार अनुकूलन और प्रतिरोध विकसित करते हैं। इसी बिल्ली–और–चूहे के खेल से ''सुपरवीड्स'' का विकास हुआ है, जो अपने पूर्ववर्तियों की तुलना में अधिक आक्रामक और लचीले हैं।

खरपतवारों का लाभकारी दृष्टिकोण

खरपतवार बस एक पौधा है जो वहां उगता है जहां इसकी आवश्यकता नहीं होती है, जो अक्सर पानी, पोषक तत्वों और सूरज की रोशनी के लिए खेती किए गए पौधों के साथ प्रतिस्पर्धा करता है और अक्सर तेजी से विकास, बीज उत्पादन और अनुकूलनशीलता की विशेषता रखते हैं। सामान्य उदाहरणों में डेंडिलियन, थीस्ल और पिगवीड शामिल हैं। लेकिन यह परिभाषा कुछ हद तक परिपूर्ण नही है, क्योंकि एक संदर्भ में खरपतवार माने जाने वाले कई पौधों की खेती दूसरे संदर्भ में सोच समझकर भी की जाती है।

खरपतवार और फसलें समान संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। इस प्रतिस्पर्धा के कारण फसल की पैदावार कम हो सकती है, उत्पाद की गुणवत्ता कम हो सकती है और कीटनाशकों का उपयोग बढ़ सकता है। हालाँकि, यह प्रतिद्वंद्विता विकास को भी प्रेरित करती है, जिससे फसलों को अनुकूलन करने और अधिक लचीला बनने के लिए मजबूर होना पड़ता है। कुछ खरपतवार, जैसे कि सिंहपर्णी, में भी मूसला जड़ें होती हैं जो मिट्टी की गहरी परतों से पोषक तत्व खींचती हैं, जिससे वे आस–पास की फसलों के लिए उपलब्ध हो जाते हैं। खरपतवारों को अक्सर अवांछित आक्रमणकारियों के रूप में देखा जाता है। ये लंबे समय से बागवानों, किसानों और भूस्वामियों के लिए अभिशाप रहे हैं। वास्तव में, वे गुमनाम नायक हैं, जो पर्यावरण, मानव स्वास्थ्य और यहां तक कि अर्थव्यवस्था को कई लाभ प्रदान करते हैं। खरपतवार पारिस्थितिक तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। उनकी जटिलताओं को समझकर और टिकाऊ प्रबंधन रणनीतियों को अपनाकर, कुछ स्थानों पर हम वांछित फसलों पर उनके प्रभाव को कम कर सकते हैं और प्राकृतिक दुनिया में उनके योगदान की सराहना भी कर सकते हैं।

खरपतवार के सकारात्मक तथ्य:

स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने में खरपतवार महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जैसे–

- मिट्टी को अपनी जड़ों से पकड़कर रखते हुए मिट्टी के कटाव को रोकते हैं।
- प्राकृतिक गीली घास के रूप में कार्य करें, मिट्टी के तापमान में उतार–चढ़ाव को रोकते हैं।
- मधुमक्खियों, तितलियों और पक्षियों जैसे वन्यजीवों के लिए आवास और भोजन प्रदान करते हैं।
- देशी पौधों और जानवरों के साथ मिलकर जैव विविधता का समर्थन करते हैं।
- पोषक तत्वों के चक्रण, कार्बनिक पदार्थों को विघटित करने और पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण की सुविधा प्रदान करते हैं।
- परागण में सहायक होते हैं।
- दवा और खाद्य स्रोत।

खरपतवार के औषधीय गुण : पारंपरिक चिकित्सा में सदियों से कई खरपतवारों का उपयोग किया जाता रहा है, और आधुनिक शोध ने उनकी क्षमता की पुष्टि की है। जो कुछ उदाहरणों में शामिल हैं –

- डेंडिलियन (टाराक्सैकम ऑफिसिनेल), एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर और सूजन–रोधी गुणों से भरपूर।
- स्टिंगिंग नेटल (अर्टिका डायोइका), गठिया से लेकर एलर्जी तक की बीमारियों के इलाज के लिए उपयोग किया जाता है।
- प्लांटैन (प्लांटैगो मेजर), जीवाणुरोधी और सूजन–रोधी गुणों के साथ।

खरपतवार का आर्थिक लाभ : खरपतवार अर्थव्यवस्था में भी योगदान दे सकते हैं–

- कुछ खरपतवार, जैसे सिंहपर्णी और चिकोरी, की खेती उनकी जड़ों के लिए की जाती है, जिनका उपयोग कॉफी के विकल्प के रूप में किया जाता है।
- अन्य, जैसे दूध थीस्ल और आटिचोक, का उपयोग हर्बल सप्लीमेंट और चाय में किया जाता है।
- खरपतवार प्राकृतिक कीट नियंत्रण के रूप में काम कर सकते हैं, जिससे सिंथेटिक कीटनाशकों की आवश्यकता कम हो जाती है।

कृषि पारिस्थितिकी में खरपतवारों की भूमिका : एग्रोइकोलॉजी, टिकाऊ कृषि पारिस्थितिकी तंत्र को डिजाइन करने की प्रथा, पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में खरपतवार के महत्व को पहचानती है। खरपतवार की उपस्थिति को स्वीकार करके और उन्हें फसल प्रबंधन रणनीतियों में शामिल करके, किसान यह कर सकते हैं:

- रासायनिक उपयोग कम करें और जैव विविधता को बढ़ावा दें।
- मिट्टी के स्वास्थ्य और संरचना को बढ़ाएं।
- अधिक लचीला और अनुकूलनीय पारिस्थितिकी तंत्र बनाएं।

बिन बुलाए मेहमानों को गले लगाना : निष्कर्षत: खरपतवार केवल अवांछित आक्रमणकारी नहीं हैं वे कृषि परिदृश्य का एक अभिन्न अंग हैं। खरपतवार और फसलों के बीच के जटिल संबंध को समझकर हम यह कर सकते हैं:

- टिकाऊ और प्रभावी खरपतवार प्रबंधन रणनीतियाँ विकसित करें
- खरपतवार की उपस्थिति के लाभों का भी जहां संभव है उपयोग करें
- अधिक लचीला और विविध पारिस्थितिकी तंत्र बनाएं

आइए हम खरपतवारों के प्रति अपने दृष्टिकोण पर पुनर्विचार करें और प्रकृति में उनके मूल्य को पहचानें। इन बिन बुलाए मेहमानों के साथ काम करके, हम एक अधिक सामंजस्यपूर्ण और टिकाऊ कृषि भविष्य बना सकते हैं।

बागों में खरपतवार प्रबंधन

विनीता राजपूत, सुनील कुमार एवं नरेंद्र कुमार

कृषि विज्ञान केंद्र, सिरसा

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत का फलों और सब्जियों के उत्पादन के क्षेत्र में विश्व में दूसरा स्थान है। फसल विविधिकरण के अंतर्गत बहुत से किसान बागवानी फसलों को अपना रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर फलों व सब्जियों की बढ़ती माँग, बाजार का वैश्वीकरण, और बेहतर आमदनी इसका प्रमुख कारण है। वैज्ञानिकों द्वारा विकसित आधुनिक तकनीकों और मशीनीकरण ने भी बागवानी फसलों का उत्पादन बढ़ाने में अपना योगदान दिया है। वर्ष 2011–12 में बागवानी फसलों का उत्पादन 257 मिलियन टन था जोकि लगभग अनाज वाली फसलों (259 मिलियन टन) के बराबर था। इसके बाद बागवानी फसलों का उत्पादन लगातार बढ़ता रहा है और वर्ष 2022–23 में 351.92 मिलियन टन अनुमानित किया गया है। इस प्रकार बागवानी फसलों के उत्पादन ने कुल अनाज के उत्पादन (329.69 मिलियन टन) को पार कर लिया है। भारत सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं और अनुदान राशि की मदद से किसानों ने फलों, सब्जियों और फूलों की खेती कर अपनी आय में वृद्धि भी की है। बागवानी फसलों में विशेषकर फलों की खेती में शुरुआती अवस्था से खरपतवार की समस्या बनी रहती है। पौधा रोपण से पहले जमीन को तैयार करने, आस पास की घास–झाड़ियाँ हटाने से लेकर पौधे के थाले की सफाई, इस सब में खरपतवार प्रबंधन का खास महत्व है। बाग में पौधों के बीच की दूरी (लगभग 5–6 मीटर) अधिक होती है जिस कारण खरपतवार को उगने और बढ़ने के लिए पर्याप्त स्थान मिल जाता है। पौधरोपण के समय डाली जाने वाली गोबर की खाद के साथ खरपतवार के बीज भी खेत में आ जाते हैं जिनको बाद में पूरी तरह नष्ट करना संभव नहीं होता। बागों में बीच के खाली स्थान का प्रबंधन यदि सही प्रकार से ना हो तो इसका फल उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और उत्पादन क्षमता 30–70 प्रतिशत तक घट सकती है। खरपतवार के कारण उत्पादन के साथ फलों की गुणवत्ता भी कम होती है।

बागों में पाए जाने वाले मुख्य खरपतवार

पतली पत्तियों या घास कुल वाले– दूब घास, मोथा, पीतपापड़ा, जंगली जई, जंगली गाजर, पोआ घास, गाजर घास इत्यादि।

चौड़ी पत्तियों वाले– साठी, खरबाथू, जंगली चौलाई, हजारमणी, नोनिया, छुईमुई (लाजवंती), जंगली पालक, धतूरा, हिरनखुरी, पीली कंटीली, मकोई इत्यादि।

साठी से प्रभावित अमरूद का पौधा

खरबाथू

मोथा से प्रभावित बाग

बागों में खरपतवार के हानिकारक प्रभाव

- खरपतवार पौधों के साथ पानी, प्रकाश, हवा और जगह के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। इस कारण बाग में दिए जाने वाला खाद व पानी पूर्ण रूप से पौधों को नहीं मिल पाता है और उपज भी कम होती है।
- खरपतवार बाग में गुड़ाई, सिंचाई, कटाई–छँटाई और तुड़ाई आदि कार्यों में कठिनाई पैदा करते हैं।
- पौधारोपण के शुरुआती सालों में खरपतवार पौधे को सम्पूर्ण रूप से बढ़ने नहीं देते हैं।
- लता और बेल वाले खरपतवार पौधे के ऊपर चढ़कर पत्तों व फलों पर पड़ने वाले प्रकाश को अवरोधित कर देते हैं। अधिकांश तौर पर देखा

जाता है कि *कुकुमिस ट्राईगोनस* (छिब्बर) और *कॉनवॉलवुलस एरोएंसिस* (करारी) के ज्यादा प्रकोप होने से नए पौधे मरने लगते हैं।

- दूब और मोथा जैसी घास जमीन में गाँठे बनाती हैं, जिससे इनको खरपतवारनाशक से नष्ट करना कठिन होता है और साल दर साल समस्या पैदा करती रहती हैं। यह बहुत से हानिकारक कीटों और बीमारियों के लिए होस्ट का काम करती हैं जिससे कीटों व बीमारियों का जीवन–चक्र तोड़ना और भी कठिन हो जाता है।
- कई तरह की घास (जैसे- जंगली चौलाई) एक साल में इतने बीज बनाती है कि अगले 6–7 सालों तक बाग में इनका प्रकोप बना रहता है।
- बाग में घास के नियंत्रण के लिए बार–बार रासायनिक खरपतवारनाशक का प्रयोग करना पड़ता है जिससे बाग की जैव–विविधता पर नकारात्मक असर होता है और ट्रैक्टर द्वारा बार–बार जुताई से मिट्टी की सतह पक्की होने लगती है।

इसीलिए खरपतवार नियंत्रण के ऐसे तरीके अपनाने चाहिए जिससे मिट्टी के स्वास्थ्य के साथ पर्यावरण का भी ख्याल रखा जा सके।

बागों में खरपतवार प्रबंधन के उपाय

- पौधरोपण से पहले खेत में गहरी जुताई करनी चाहिए। आस–पास के अवांछित घास और झाड़ियों को हटा दें। पैराक्वाट या ग्लायफोसेट का स्प्रे करके भी सभी प्रकार के खरपतवार को नष्ट किया जा सकता है।
- पौधे लगाने से पहले मई–जून में खोदे गए गड्ढों का मृदा सौरीकरण अवश्य करें, इससे खरपतवार के बीज तेज धूप से नष्ट हो जाते हैं।
- गर्मियों में एक बार बाग में गहरी जुताई अवश्य करें।
- बाग में हमेशा भलि–भांति गली हुई गोबर की खाद का ही प्रयोग करें।
- खुरपी या रेक की सहायता से पौधे के थाले (बेसिन) की घास निकालें।
- दो–तीन माह में पौधों की लाइनों के बीच रोटावेटर चलाना चाहिए। इससे खरपतवार जड़ से खत्म होंगे और मिट्टी में पनपने वाले पौधों को नुकसान पहुँचाने वाले कीट भी नष्ट हो जाएंगे।
- खरपतवार को हमेशा फूल और बीज बनने से पहले निकालने का प्रयास करें।
- पौधों के बीच खाली जगह में कवर फसलों का प्रयोग करें। कवर फसल लगाने से मिट्टी का कटाव कम होता है और मिट्टी की उर्वरता शक्ति बढ़ती है। कवर फसलों के लिए दालों व फली वाली फसलों का प्रयोग किया जा सकता है।
- बाग में अन्त:फसलों को उगाकर खरपतवार पर नियंत्रण किया जा सकता है। अन्त:फसलें अतिरिक्त आमदनी का साधन होती हैं, इसमे मुख्य तौर पर मूंग, चना, मटर, मेथी, पालक, कद्दूवर्गीय सब्जियां, आदि को उगा सकते हैं। अन्त:फसलों के चुनाव के समय ध्यान रखने योग्य बात यह है कि यह फसलें बाग में पौधे से खाद और पानी के लिए प्रतिस्पर्धा न करें, और किसी प्रकार के हानिकारक कीट व बीमारियों का आश्रय न बनें।
- खरपतवार नियंत्रण के लिए मल्चिन्ग का प्रयोग सबसे कारगार उपाय है। इसके लिए ऑर्गैनिक (सूखी घास, पराली, लकड़ी का बुरादा, राख आदि) व इन–ऑर्गैनिक (प्लास्टिक फिल्म, वोवन व नॉन–वोवन फैब्रिक आदि) का प्रयोग किया जा सकता है। मल्चिन्ग से मिट्टी में नमी की मात्रा को लंबे समय तक बनाए रखने में सहायता मिलती है। ऑर्गैनिक मल्च बाद में गलकर मिट्टी में मिल जाती हैं और मिट्टी को पोषण प्रदान करती हैं।
- रासायनिक विधि द्वारा भी बाग में खरपतवार प्रबंधन किया जा सकता है। हालाँकि इसका प्रयोग करते समय सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है। फलदार वृक्षों के पत्ते और डालियाँ रसायन के संपर्क में नहीं आने चाहिए, नहीं तो पौधा जल सकता है। वार्षिक खरपतवार को रोकने के लिए फ्लूक्लोरेलीन (500–1000 ग्राम/हे.) पौधरोपण से पहले मिट्टी में मिलाएं या घास उगने से पहले पेंडिमिथलींन (500–1000 मिली/हे.) का छिड़काव थाले (बेसिन) के आस–पास करें। मेट्रिब्यूजिन (500–1000 ग्राम/हे.) के प्रयोग से चौड़ीपत्ती और संकरी पत्ती वाले खरपतवारों को रोका जा सकता है। 2,4–डी (1000–2000 ग्राम/हे.) का छिड़काव तने के आस–पास करने से चौड़ीपत्ती वाले खरपतवार नष्ट होते हैं। हालाँकि यही सिफारिश की जाती है कि बाग में खरपतवारनाशी रसायनों का कम से कम प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार बाग में लाभदायक कीटों और हानिकारक कीटों के बीच संतुलन बना रहता है, जो पर्यावरण के लिए भी लाभकारी है।

बथुआ (*चिनोपोडियम एलबम*): पोषक तत्वों से भरपूर एक अद्भुत साग

अमनदीप रंजन, सुभाष कुमार सौरभ एवं शिवानी मीना
भाकृअनुप- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली

परिचय

चिनोपोडियम एलबम, जिसे हिंदी में बथुआ कहा जाता है, एक महत्वपूर्ण औषधीय और खाद्य पौधा है। यह पौधा विशेष रूप से एशिया और यूरोप के विभिन्न हिस्सों में पाया जाता है। बथुआ अपने पौष्टिक गुणों और औषधीय उपयोगों के लिए जाना जाता है। बथुआ विश्वव्यापी, उल्लेखनीय आॢथक महत्व की वार्षिक खरपतवार प्रजाति है। उच्च प्रजनन क्षमता, बीज प्रसुप्ति, मिट्टी के बीज बैंक में उच्च दृढ़ता, पर्यावरणीय परिस्थितियों की एक विस्तृत श्रृंखला के तहत अंकुरित होने और बढ़ने की क्षमता और अजैविक तनाव सहनशीलता सहित इसकी अनूठी जैविक विशेषताएं, इस प्रजाति को विविध फसल प्रणालियों पर आक्रमण करने में मदद करती हैं। यह पोषक तत्वों को बहुत कुशलता से अवशोषित करता है। यह प्रकृति में एलीलोपैथिक (पादप से निकलने वाले ऐसे रसायन जो दूसरे पादप की वृद्धि को प्रभावित करते हैं) है और इस प्रकार, स्थानीय वनस्पति और/या फसल पौधों के अंकुरण और विकास को रोकता है। यह खरपतवार प्रजाति कई कृषि और बागवानी फसलों को संक्रमित करती है और फसल की पैदावार में 90 प्रतिशत से अधिक की हानि हो सकती है। बथुआ अधिक संख्या में फसलों को संक्रमित करता है, और यह कई फसल कीटों के वैकल्पिक मेजबान के रूप में भी कार्य करता है। इन खरपतवार प्रजातियों को नियंत्रित करने के लिए फसल प्रणाली और खरपतवार संक्रमण के स्तर के आधार पर सफलता की अलग–अलग मात्रा के साथ विभिन्न सस्य और यांत्रिक तरीकों का उपयोग किया गया है। इसी तरह, एलेलोपैथी और जैविक नियंत्रण ने भी बथुआ को नियंत्रित करने में कुछ संभावनाएं दिखाई है। इन प्रजातियों को नियंत्रित करने के लिए कई शाकनाशी का सफलतापूर्वक उपयोग किया गया है, लेकिन बथुआ में व्यापक पैमाने पर शाकनाशी प्रतिरोध के विकास ने रासायनिक नियंत्रण की प्रभावशीलता को सीमित कर दिया है। हालाँकि, बारी–बारी से वैकल्पिक शाकनाशियों का उपयोग और रसायनों और जैविक रूप से आधारित नियंत्रण विधियों का एकीकरण का स्थायी नियंत्रण प्रदान कर सकता है।

बथुआ साग

वर्णन

बथुआ एक वार्षिक शाकीय पौधा है जो 1 से 3 फीट तक ऊँचा होता है। इसके पत्ते त्रिकोणीय या अंडाकार होते हैं और पत्तियों के किनारे आमतौर पर कटे हुए होते हैं। फूल छोटे और हरे होते हैं, जो गुच्छों में पाए जाते हैं। बथुआ की खेती करना सरल है और यह विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है। इसे सूखी और धूप वाली जगहों पर उगाना बेहतर होता है। नियमित पानी देने से इसकी वृद्धि अच्छी होती है।

बथुआ के विस्तृत उपयोग:

बथुआ का उपयोग पोषण और औषधीय गुणों के कारण बहुत महत्वपूर्ण है। इसे अपने दैनिक आहार में शामिल करने से हम इसके अद्वितीय लाभों का आनंद ले सकते हैं और अपने स्वास्थ्य को बेहतर बना सकते हैं। इसके विभिन्न उपयोग और स्वास्थ्य लाभ इसे एक बहुमूल्य पौधा बनाते हैं।

पोषण में उपयोग:

- **सब्जी:** बथुआ के ताजे पत्तों को तोड़कर और धोकर सब्जी के रूप में पकाया जाता है। इसे आलू, टमाटर और मसालों के साथ मिलाकर स्वादिष्ट सब्जी तैयार की जा सकती है। इसका स्वाद हल्का और मनमोहक होता है, जो भोजन में एक नई ताजगी लाता है।
- **रायता:** बथुआ के पत्तों को उबालकर और पीसकर दही में मिलाया जाता है। इसे नमक, जीरा पाउडर और काला नमक डालकर रायता तैयार किया जाता है, जो पेट के लिए बहुत फायदेमंद होता है और भोजन के स्वाद को बढ़ाता है।
- **पराठा:** बथुआ के पत्तों को पीसकर आटे में मिलाया जाता है और फिर इसे परांठा के रूप में तवा पर सेंका जाता है। बथुआ परांठा स्वास्थ्यवर्धक और पौष्टिक होता है, जिसे सुबह के नाश्ते या भोजन में लिया जा सकता है।
- **सूप:** बथुआ के पत्तों को सूप में मिलाकर इसका सेवन किया जा सकता है। यह विशेष रूप से ठंड के मौसम में शरीर को गर्म रखने में मदद करता है और रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है।

औषधीय उपयोग:

- **पाचन में सुधार:** बथुआ में उच्च मात्रा में फाइबर होता है, जो पाचन तंत्र को सुचारू रूप से कार्य करने में मदद करता है। इसे नियमित रूप से खाने से कब्ज, गैस और अपच जैसी समस्याओं से राहत मिलती है।
- **रक्त शोधन:** बथुआ का रस रक्त को शुद्ध करने में मदद करता है। यह त्वचा के विकारों को दूर करने में सहायक है और त्वचा को चमकदार

और स्वस्थ बनाता है। बथुआ का रस एक गिलास पानी में मिलाकर पीने से रक्त में मौजूद विषाक्त पदार्थों को निकालने में मदद मिलती है।

- **हड्डियों को मजबूत बनाना:** बथुआ में कैल्शियम की मात्रा अधिक होती है, जो हड्डियों को मजबूत बनाने में सहायक है। यह विशेष रूप से बच्चों और वृद्ध लोगों के लिए लाभकारी है।
- **रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाना:** बथुआ में विटामिन सी और एंटीऑक्सीडेंट्स होते हैं, जो शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं। यह संक्रमण और बीमारियों से बचाव में सहायक है।
- **त्वचा की देखभाल:** बथुआ का पेस्ट त्वचा पर लगाने से मुंहासे, चकत्ते और अन्य त्वचा समस्याओं से राहत मिलती है। यह त्वचा को मुलायम और स्वस्थ बनाता है।
- **ज्वर में राहत:** बथुआ का काढ़ा ज्वर में लाभकारी होता है। इसे पानी में उबालकर और छानकर पीने से बुखार में राहत मिलती है।

अन्य उपयोग:

- **मिट्टी की उर्वरता बढ़ाना:** बथुआ का पौधा मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने में मदद करता है। इसे हरी खाद के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, जो मिट्टी में पोषक तत्वों की मात्रा को बढ़ाता है।
- **पशु चारा:** बथुआ का उपयोग पशुओं के चारे के रूप में भी किया जाता है। यह गाय, भैंस, बकरी आदि के लिए पौष्टिक और स्वास्थ्यवर्धक चारा होता है।

बथुआ के हानिकारक प्रभाव:

बथुआ एक पौष्टिक और औषधीय पौधा है, लेकिन इसके अत्यधिक सेवन या गलत उपयोग से कुछ हानिकारक प्रभाव हो सकते हैं। इसके सेवन में सावधानी बरतना आवश्यक है।

- **ऑक्सालेट की अधिकता:** बथुआ के पत्तों में ऑक्सालेट्स की उच्च मात्रा होती है। ऑक्सालेट्स का अत्यधिक सेवन गुर्दे की पथरी (किडनी स्टोन) का कारण बन सकता है। जिन्हें पहले से ही गुर्दे की समस्या है, उन्हें बथुआ का सेवन सीमित मात्रा में करना चाहिए।
- **एलर्जी प्रतिक्रियाएं:** कुछ लोगों को बथुआ से एलर्जी हो सकती है। यह एलर्जी त्वचा पर चकत्ते, खुजली, और सूजन के रूप में प्रकट हो सकती है। एलर्जी के लक्षण महसूस होने पर बथुआ का सेवन तुरंत बंद कर देना चाहिए।
- **पाचन समस्याएं:** बथुआ का अत्यधिक सेवन गैस, अपच और पेट दर्द का कारण बन सकता है। इसे संतुलित मात्रा में ही सेवन करना चाहिए ताकि पाचन तंत्र पर दबाव न पड़े।
- **फोटोसेंसिटिविटी (प्रकाश संवेदनशीलता):** कुछ मामलों में, बथुआ का सेवन त्वचा को सूर्य के प्रकाश के प्रति संवेदनशील बना सकता है। इससे त्वचा पर जलन, लालिमा और धूप से झुलसने जैसी समस्याएं हो सकती हैं।
- **गर्भवती महिलाओं के लिए जोखिम:** गर्भवती महिलाओं को बथुआ का सेवन बहुत सावधानी से करना चाहिए। अत्यधिक मात्रा में इसका सेवन गर्भपात का जोखिम बढ़ा सकता है। गर्भवती महिलाओं को डॉक्टर की सलाह के बिना बथुआ का सेवन नहल करना चाहिए।
- **नाइट्रेट की उच्च मात्रा:** बथुआ में नाइट्रेट्स की मात्रा भी हो सकती है, जो विशेष रूप से बच्चों के लिए हानिकारक हो सकती है। नाइट्रेट्स का उच्च सेवन बच्चों में मेटहेमोग्लोबिनेमिया (ब्लू बेबी सिंड्रोम) का कारण बन सकता है।
- **पौधे पर कीटनाशकों का अवशेष:** बाजार में मिलने वाले बथुआ के पत्तों पर कीटनाशकों के अवशेष हो सकते हैं। इन्हें अच्छी तरह से धोना महत्वपूर्ण है ताकि कीटनाशकों के संभावित हानिकारक प्रभावों से बचा जा सके।
- **अत्यधिक सेवन से विषाक्तता:** बथुआ का अत्यधिक सेवन विषाक्तता का कारण बन सकता है, जिससे सिरदर्द, मतली, उल्टी, और दस्त जैसी समस्याएं हो सकती हैं।

सावधानियां और सुझाव

- **संयमित सेवन:** बथुआ का सेवन संयमित मात्रा में करें और इसे आहार में संतुलित रूप से शामिल करें।
- **अच्छी तरह धोएं:** बथुआ के पत्तों को उपयोग से पहले अच्छी तरह धोएं ताकि मिट्टी, कीटनाशक और अन्य संदूषक हट जाएं।
- **स्वास्थ्य स्थिति का ध्यान रखें:** यदि आपको गुर्दे की समस्या, एलर्जी या अन्य स्वास्थ्य समस्याएं हैं, तो बथुआ का सेवन करने से पहले अपने चिकित्सक से परामर्श लें।

निष्कर्ष :

बथुआ एक बहुमूल्य पौधा है, जो न केवल पोषण से भरपूर है बल्कि अनेक औषधीय गुणों से भी युक्त है। इसका सेवन विभिन्न तरीकों से किया जा सकता है और यह हमारे स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी है। हमारे आहार में बथुआ को शामिल कर हम इसके अद्वितीय गुणों का लाभ उठा सकते हैं।

मूंग की फसल में खरपतवार नियंत्रण

मनीष राज[1], पवन कुमार[1], राजेश कुमार[1], कविता सोलंकी[2], संजय कुमार[3] एवं आर.के. सोहने[3]
[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, सबौर, भागलपुर, बिहार
[2]डॉ. राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार
[3]बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर, बिहार

परिचय

भारत में चना, अरहर और उड़द के बाद मूंग चौथी सबसे व्यापक रूप से उत्पादित दलहनी फसल है। इसे बरसात और गर्मी दोनों मौसमों में उगाया जा सकता है। कम अवधि वाली मूंग की फसल पारंपरिक धान–गेहूं फसल प्रणाली के लिए एक उपयुक्त फसल है जो की किसानों को अतिरिक्त आय प्रदान करने में सहायक है। मूंग दलहनी फसल होने के कारण यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण (20–80 किग्रा प्रति हेक्टेयर) में प्रमुख भूमिका निभाती है। मूंग की फसल मिट्टी की उर्वरा शक्ति तथा अन्य पोषक तत्व की उपलब्धता बढ़ाने मे भी सहायक है। खरपतवार और फसल के बीच में उपलब्ध संसाधनों जैसे पोषक तत्वों, पानी, प्रकाश और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा बनी रहती है, जिससे फसल की उपज पर प्रभाव पड़ता है। कुल कृषि उत्पादन मे सर्वाधिक नुकसान खरपतवारों के कारण होता है जो की कुल नुकसान का 30–35 प्रतिशत है। खरपतवार न केवल अनाज की उपज को कम करते हैं, बल्कि बीज की गुणवत्ता को भी प्रभावित करते है।

मूंग में पाये जाने वाले महत्वपूर्ण खरपतवार

मूंग एक बहु–मौसमी फसल है। दक्षिण भारत में इसे तीनों मौसमों में उगाया जा सकता है लेकिन उत्तर भारत में इसे मुख्य रूप से ख़रीफ़ और गर्मी के मौसम में उगाया जा सकता है। मूंग की फसल में मुख्यतः दो प्रकार के खरपतवार पाए जाते है। 1. सकरी पत्ती वाले खरपतवार 2. चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार

खरीफ मौसम में फसलों में सकरी पत्ती वाले खरपतवार जैसे: *इकाइनोक्लोआ कोलोना* (सांवा), *डायकैथियम एनुलैटम* (मार्वल घास), *पास्पेलिडीयम फ्लेविडम* (येलो वाटरक्राउन घास), *डाईनेब्रा रेट्रोफ्लेक्सा* (वाईपर घास), *इलुसिन इंडिका* (इंडियन गूस ग्रास), *डिजीटेरिया सैन्ग्युनेलिस* (क्रेब ग्रास) आदि एवं चौड़ी पत्ती वाले *अल्टरनेनथेरा सेसिलिस* (रेशमकांटा), *युफोर्बिया जेनीकुलाटा* (दूधी), *कान्वोल्वुलस असिस* (हिरनखुरी), *फाईसेलिस मिनिमा* (ग्राउंड चेरी) तथा *साइप्रस रोटंडस* (मोथा) आदि वर्ग के खरपतवार बहुतायत में उगते है। फसल व खरपतवार की प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवस्था मूंग में प्रथम 30 से 35 दिनों तक रहती है।

खरपतवार नियंत्रण

फसल प्रबंधन में खरपतवार नियंत्रण एक प्रमुख प्रक्रिया है। प्रारंभिक अवस्था में फसल की धीमी विकास गति के कारण खरपतवार प्रचुर मात्रा में उगते है तथा फसल के पानी और पोषक तत्व के अवशोषण में हस्तक्षेप करते हैं। बुआई के 25 से 30 दिन तक खरपतवार फसल को अत्यधिक नुकसान पहुंचाते हैं यदि खेत में खरपतवार अधिक हैं तो बुवाई के 20–25 दिन के बाद निराई कर दें। दूसरी निंराई बुआई के 45 दिन के बाद करें। जिन खेतों में खरपतवार गम्भीर समस्या हों वहाँ खरपतवारनाशी रसायन का छिड़काव करने से खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। खरपतवार नाशक दवाओ के छिड़काव के लिये हमेशा फ्लैट फेन नोजल का ही उपयोग करे। यदि 20–25 दिनों की फसल में नियंत्रण के उपाय किये गये हो तो अच्छे परिणाम हो सकते हैं। निंदाई/गुड़ाई के अलावा रासायनिक खरपतवारनाशी का उपयोग जरूरी होगा परंतु ध्यान रहे बरसात के पानी का रूख देखकर ही इसका उपयोग करें। अन्यथा प्रयास विफल होंगे। मूंग में खरपतवार प्रबंधन रासायनिक और गैर–रासायनिक दोनों तरीकों से किया जा सकता है। उपयोग की जाने वाली विधियाँ खरपतवार संक्रमण, फसल अवस्था और उपलब्ध संसाधनों पर निर्भर करती हैं।

गैर–रसायनिक खरपतवार नियंत्रण

मूंग के बेहतर उत्पादन के लिए खरपतवार मुक्त वातावरण प्राप्त करने के लिए दो निराई–गुड़ाई करना आवश्यक है। पहली बुआई के 20–25 दिन बाद तथा दूसरी, पहली के 20 दिन बाद की जानी चाहिए, परंतु खरपतवार नियंत्रण की इस विधि में समय तथा पूंजी दोनो ज्यादा लगते है।

रसायनिक खरपतवार नियंत्रण

पेंडीमेथालिन : सिंचित स्थिति में 3.3 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से या शुष्क स्थिति में 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से पेंडीमेथालिन का अंकुरण से पहले और बुआई के 72 घंटे के अंदर फ्लैट फैन नोजल/नैपसेक/रॉकर स्प्रेयर का उपयोग करके एक हेक्टेयर में 500 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें। इसके बाद, बुआई के 25–30 वे दिन एक हाथ से निराई करने से पूरी फसल अवधि के दौरान खरपतवार मुक्त वातावरण मिलता है। इससे चौड़ी पत्तियों वाले खरपतवार नष्ट हो जायेंगे।

क्विज़ालोफॉप इथाइलः मूंग बुआई के 15–20 दिन पर क्विज़ालोफॉप इथाइल 50 ग्राम एआई/हेक्टेयर 500 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें। इसका उपयोग चौड़ी पत्ती वाली फसलों में संकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है।

इमाजेथापायरः मूंग बुआई के 15–20 दिन पर इमाजेथापायर 50 ग्राम एआई/हेक्टेयर 500 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें। घास और चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार दोनों को नियंत्रित करता है।

मक्का में एकीकृत खरपतवार प्रबंधन

नीलकमल मिश्रा[1] एवं आलोक सिन्हा[2]
कृषि विज्ञान संस्थान, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत में मक्का (*जिया मेज* एल.) चावल और गेहूं के बाद तीसरी सबसे महत्वपूर्ण अनाज की फसल है। यह 9.26 मिलियन हेक्टेयर में फैला है, जिसका उत्पादन 23 मिलियन टन है और औसत उत्पादकता 3070 किलोग्राम/हेक्टेयर है। भारत में मक्का की औसत उत्पादकता अमेरिका (9 टन/हेक्टेयर) की तुलना में कम है। इसका कारण असंतुलित उर्वरक और खराब खरपतवार नियंत्रण पद्धतियाँ हैं। बताया गया है कि बिना खरपतवार वाले मक्का की उपज में 35-99% तक की कमी हो सकती है, इसलिए भारत में मक्का की उच्च उत्पादकता प्राप्त करने के लिए खरपतवार नियंत्रण दक्षता बढ़ाने के लिए उपयुक्त खरपतवार नियंत्रण उपायों को अपनाना आवश्यक है।

मक्का उत्पादन की दृष्टि से विश्व की दूसरी सबसे महत्वपूर्ण अनाज की फसल है। इसकी आनुवंशिक उपज क्षमता सबसे अधिक है और इसलिए इसे 'अनाज की रानी' के नाम से जाना जाता है। भारत दुनिया के शीर्ष दस मक्का उत्पादक देशों में से एक है, जो कुल वैश्विक मक्का उत्पादन में 2.41% का योगदान देता है। प्रमुख मक्का उत्पादक राज्य कर्नाटक (13.69%), मध्य प्रदेश (13.52%), तमिलनाडु (9.22%), तेलंगाना (7.46%), राजस्थान (7.19%) और महाराष्ट्र (7.08%) हैं। वर्तमान में मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में सबसे अधिक क्षेत्रफल (1.37 एमएचए) और कर्नाटक में उत्पादन (3.73 टन/हेक्टेयर) है जबकि मक्के की सबसे अधिक उत्पादकता (6651 किलोग्राम/हेक्टेयर) तमिलनाडु में दर्ज की गई है। देश के सभी राज्यों में अनाज, चारा, हरे भुट्टे सहित विभिन्न प्रयोजनों के लिए मक्के की खेती साल भर की जाती है, जबकि स्वीटकॉर्न, बेबी कॉर्न और पॉप कॉर्न की खेती उप-शहरी क्षेत्रों में की जाती है। मनुष्यों के लिए मुख्य भोजन और जानवरों के लिए गुणवत्तापूर्ण चारे के अलावा, यह हजारों औद्योगिक उत्पादों के लिए एक बुनियादी कच्चे माल के रूप में कार्य करता है जिसमें स्टार्च, तेल, प्रोटीन, मादक पेय, खाद्य मिठास, दवा, कश्वस्मेटिक, फिल्म, कपड़ा शामिल हैं। गोंद पैकेज और कागज उद्योग आदि। भारत में मक्के का उपयोग विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों और गतिविधियों में किया जा रहा है। भारत में मक्के का सबसे बड़ा उपयोगकर्ता पोल्ट्री उद्योग है, जिसका 47% हिस्सा औद्योगिक खपत स्टार्च (14%) के रूप में होता है। अन्य उपयोगों में प्रत्यक्ष उपभोग (13%), पशुधन चारा (13%) और प्रसंस्कृत भोजन (7%) शामिल हैं।

मक्के की उत्पादकता कई जैविक और अजैविक कारकों से प्रभावित होती है। जैविक कारकों में से, खरपतवार फसल उत्पादन में एक महत्वपूर्ण बाधा उत्पन्न करते हैं, जिससे उपज और उत्पादन की गुणवत्ता में काफी कमी आती है। खरपतवार पोषक तत्वों, पानी, प्रकाश और स्थान जैसे आवश्यक संसाधनों के लिए फसल के पौधों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप फसल की उपज कम हो जाती है। इसके अलावा, खरपतवार संक्रमण के प्रतिकूल आर्थिक प्रभाव होते हैं और स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र में पर्यावरण और स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं में योगदान करते हैं। व्यापक पंक्ति रिक्ति पर बोई गई मक्के की फसल और प्रारंभिक चरण (2-4 सप्ताह) के दौरान धीमी वृद्धि के कारण बढ़ते खरपतवारों से पोषक तत्वों, पानी और प्रकाश के लिए गंभीर प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। खरीफ सीजन के दौरान, जो कुल मक्के की खेती का 80% हिस्सा है, लगातार बारिश से बनी अनुकूल परिस्थितियों के कारण, फसल को बुआई से लेकर कटाई तक पूरे विकास चक्र में व्यापक खरपतवार संक्रमण का सामना करना पड़ता है (**तालिका 1**)।

खरपतवार नियंत्रण उपायों की उपेक्षा करने से मक्के की फसल की उपज में भारी हानि (35-99%) हो सकती है। इसलिए, अधिक उपज और मुनाफा प्राप्त करने के लिए मक्के की फसल की वृद्धि की महत्वपूर्ण अवधि (15-45 डीएएस) के दौरान प्रभावी खरपतवार नियंत्रण उपायों की आवश्यकता होती है, क्योंकि यह अवधि विशेष रूप से खरपतवारों के कारण उपज के नुकसान के लिए अतिसंवेदनशील होती है। हालाँकि खरपतवार नियंत्रण के लिए शाकनाशी का उपयोग एक लागत प्रभावी और कुशल तरीका है, लेकिन इसका पर्यावरण, मानव स्वास्थ्य और पालतू और जंगली जानवरों की भलाई पर संभावित नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसलिए, एकीकृत खरपतवार प्रबंधन जिसका उद्देश्य प्रभावशीलता को अधिकतम करना, खरपतवार प्रतिरोध को कम करना और फसल उत्पादन में दीर्घकालिक स्थिरता को बढ़ावा देना है, खरपतवारों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने के लिए एक महत्वपूर्ण रणनीति है।

तालिका 1. मक्के में खरपतवार वनस्पतियों की प्रधानता

संकीर्ण पत्ती वाले खरपतवार	*चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार*	*सेज*
एलुसीन इंडिका	*ट्रायएंथेमा पोर्टुलाकैस्ट्रम*	*साइपरस रोटंडस*
डिजिटेरिया सेंगुइनालिस	*ट्रायनथेमा मानोगाइना*	*साइपरस एस्कुलेंटस*
डैक्टाइलाक्टेनियम एजिपटियम	*अमरैन्थस रेट्रोफ्लेक्सस*	*साइपरस इरिया*
इचिनोक्लोआ कोलोना	*डिगेरा अर्वेन्सिस*	
इचिनोक्लोआ कूसगैली	*ट्रिबुलस टेरेस्ट्रिस*	
सेटेरिया वर्टिसिलाटा	*फिलैंथस निरूरी, सेलोसिया अर्जेन्टिया*	
साइनोडॉन्ट डैक्टिलॉन	*एग्रेटम कोनजोइड्स*	

मक्के में एकीकृत खरपतवार प्रबंधन

टिकाऊ मक्का उत्पादन के साथ पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना लंबे समय तक वांछनीय खरपतवार नियंत्रण प्राप्त करने के लिए, एक बहु–विषयक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन (IWM) खरपतवार नियंत्रण उपायों की एक विस्तृत श्रृंखला का उपयोग करता है। किफायती खरपतवार नियंत्रण प्राप्त करने के लिए सस्य, यांत्रिक, जैविक और रासायनिक तरीके, स्तर बनाए रखकर फसल में खरपतवार के हस्तक्षेप को कम करना।

रोकथाम

रोकथाम IWM का पहला दृष्टिकोण है जहां खरपतवार के बीजों को खेत में फैलने और बढ़ने से रोका जाता है। यह इसके द्वारा किया जा सकता है:

- मक्के के बीज के साथ–साथ खरपतवार की वृद्धि से बचने के लिए स्वच्छ एवं प्रमाणित बीजों का उपयोग करें।
- मिट्टी में खरपतवार बीज बैंक की वृद्धि को रोकने के लिए अच्छी तरह से विघटित FYM/खाद का उपयोग करें।
- खेत के रास्ते और आसपास के क्षेत्र की सिंचाई और नहरों को खरपतवार मुक्त रखें।
- सभी कृषि उपकरणों का उपयोग साफ–सुथरा होना चाहिए और मवेशियों को एक खेत से दूसरे खेत में चरने से बचना चाहिए।

उपचारात्मक विधियाँ

IWM में दूसरा दृष्टिकोण उपचारात्मक है जहां खरपतवारों को आगे बढ़ने से हटाने, दबाने या मारने पर जोर दिया जाता है। इसे नीचे वर्णित विभिन्न तरीकों से किया जा सकता है।

यांत्रिक विधि

मैकेनिकल वीडिंग कृषि क्षेत्रों में खरपतवारों को भौतिक रूप से खत्म करने या बाधित करने के लिए यांत्रिक उपकरणों और उपकरणों का उपयोग करने की प्रक्रिया है। इस दृष्टिकोण में हैंड कुदाल/खुरपी, कल्टीवेटर, हैरो, रोटरी कुदाल, या विशेष रूप से निराई के लिए डिज़ाइन की गई विशेष मशीनरी जैसे उपकरणों का उपयोग शामिल है। इन उपकरणों का उपयोग खेती वाले पौधों को किसी भी संभावित नुकसान को कम करने के उद्देश्य से, मुख्य रूप से फसल पंक्तियों के बीच की जगहों में खरपतवार को लक्षित करने और उखाड़ने के लिए किया जाता है। मक्का में आम तौर पर हाथ से निराई–गुड़ाई और अंतर–पंक्ति खेती का उपयोग किया जाता है।

- **हाथ से निराई करना:** 20–30 दिन या 30–45 दिन पर दो हाथ से निराई करने से खरपतवार की संख्या प्रभावी रूप से कम हो जाती है। हालाँकि, वेजेज में भारी वृद्धि के कारण मैन्युअल निराई अलाभकारी है जिसमें बहुत कठिन काम भी शामिल है।
- **अंतर–पंक्ति खेती:** मक्के की फसल के घुटने तक की अवस्था में (बुवाई के लगभग 30 दिन बाद), फसल के अंतर–पंक्ति स्थानों में कल्टीवेटर या ब्लेड हैरो के उपयोग से खरपतवार नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है। मक्के की फसल की घुटने तक की अवस्था के बाद यांत्रिक हस्तक्षेप से बचना चाहिए, क्योंकि इससे पत्तियों को नुकसान हो सकता है।
- यांत्रिक निराई वास्तव में जड़ वातन का लाभ प्रदान करती है, लेकिन ख़रीफ़ सीज़न के दौरान लगातार वर्षा एक महत्वपूर्ण चुनौती पेश करती है क्योंकि यह मिट्टी को संतृप्त करती है, और कभी–कभी खेत में अंतर–कृषि संचालन में देरी करती है।

सस्य पद्धति

खरपतवार नियंत्रण की सस्य पद्धति में खरपतवारों को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने के लिए डिज़ाइन की गई कृषि संबंधी प्रथाओं की एक श्रृंखला शामिल है। इन प्रथाओं में फलियां शामिल करना, फसल चक्र, उर्वरक और सिंचाई प्रबंधन, इष्टतम बुवाई का समय, बासी बीज बिस्तर तकनीक आदि शामिल हैं।

मक्के में यांत्रिक अंतर-संस्कृति क्रियाओं द्वारा खरपतवार नियंत्रण

- **फलियों का समावेश:** सोयाबीन, मूंग, मूंगफली, लोबिया जैसी फसल को मक्के के साथ इंटरनॉप के रूप में बोने से मक्के में खरपतवार का घनत्व काफी कम हो जाता है। इसके अलावा, फलियां भी फायदेमंद होती हैं क्योंकि यह संबंधित फसल में नाइट्रोजन जोड़ती या स्थानांतरित करती हैं।
- **उर्वरक प्रयोग:** प्लेसमेंट या उर्वरक मक्के की फसल की जोरदार वृद्धि को बढ़ावा देता है जो खरपतवारों से मुकाबला कर सकती है।

कुछ खरपतवार, जैसे लैम्ब्सक्वार्टर, पिगवीड और क्वैक घास, घुलनशील नाइट्रोजन (छ) की उपस्थिति में बढ़ी हुई वृद्धि और प्रतिस्पर्धात्मकता प्रदर्शित करते हैं, खासकर जब फसल को रोपण के दौरान आसानी से उपलब्ध रूप में अपने सभी एन उर्वरक प्राप्त होते हैं। हालाँकि, वैकल्पिक प्रथाओं जैसे विलंबित या विभाजित–खुराक एन अनुप्रयोगों को अपनाकर, या अधिमानतः फसल की अधिकांश एन आवश्यकताओं के लिए धीमी गति से जारी नाइट्रोजन स्रोतों और समृद्ध मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों पर निर्भर होकर, इन खरपतवारों को संभावित रूप से उनकी प्रतिस्पर्धी शक्ति में वश में किया जा सकता है।

- **सिंचाई प्रबंधनः** स्प्रिंकलर या बाढ़ सिंचाई के विपरीत, जहां पानी और पोषक तत्व पूरे खेत में समान रूप से वितरित होते हैं, ड्रिप सिंचाई फसल के जड़ क्षेत्र के पास पानी और पोषक तत्व की आपूर्ति करती है। नतीजतन, पंक्तियों के बीच की मिट्टी को न्यूनतम नमी और पोषक तत्व प्राप्त होते हैं, जिससे खरपतवार प्रसार के लिए प्रतिकूल वातावरण बनता है। यह प्रतिबंधित आपूर्ति प्रभावी रूप से खरपतवार की वृद्धि को रोकती है और फसल पंक्तियों के बीच एक खरपतवार मुक्त क्षेत्र बनाए रखने में मदद करती है। उपसतह ड्रिप सिंचाई, जो मिट्टी की सतह के गीलेपन को कम करती है, खरपतवार के अंकुरण और विकास को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मिट्टी की सतह पर नमी की उपलब्धता को सीमित करके, यह सिंचाई विधि खरपतवार की स्थापना को काफी कम कर देती है।

- **फसल चक्रणः** फसल चक्रण एक एकीकृत खरपतवार प्रबंधन प्रणाली का एक अभिन्न अंग है, जो फसल से जुड़े खरपतवारों को खत्म करने के लिए एक कुशल रणनीति प्रदान करता है। इस दृष्टिकोण को शामिल करके, किसान विभिन्न प्रकार की कार्रवाई के साथ जड़ी–बूटियों के उपयोग को वैकल्पिक कर सकते हैं, जिससे शाकनाशी प्रतिरोध की शुरुआत को रोका या विलंबित किया जा सकता है।

- **इष्टतम बुआई का समयः** जून के दूसरे पखवाड़े में 20 किलोग्राम/हेक्टेयर की इष्टतम बीज दर के साथ मक्का की बुआई करने से खरपतवारों पर बढ़त मिलती है।

- **बासी बीज बिस्तर तकनीकः** यहां, मक्के की बुआई से पहले, खरपतवारों के अंकुरण और विकास को प्रोत्साहित करने के लिए हल्की सिंचाई की जाती है। इसके बाद, खरपतवारों की प्रारंभिक निकासी या तो यांत्रिक रूप से उथली जुताई के माध्यम से या रासायनिक तरीकों से हटा दी जाती है। बासी बीज बिस्तर तकनीक को नियोजित करके, किसान खरपतवार बीज बैंक को प्रभावी ढंग से कम कर सकते हैं, जिससे फसल को प्रतिस्पर्धात्मक लाभ मिल सकता है और बढ़ते मौसम के दौरान खरपतवार नियंत्रण उपायों की आवश्यकता कम हो सकती है।

- **मल्चिंगः** मल्चिंग एक महत्वपूर्ण तकनीक है जिसका उपयोग मिट्टी और नमी संरक्षण के लिए बड़े पैमाने पर बगीचों और कृषि प्रणालियों में किया जाता है। इसके अतिरिक्त, मल्चिंग खरपतवार नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, क्योंकि यह सूर्य के प्रकाश तक उनकी पहुंच को सीमित करके खरपतवार के अंकुरण और विकास को बाधित करती है। प्लास्टिक मल्च और फसल अवशेष मल्च दोनों ही खरपतवार वृद्धि के लिए प्रतिकूल परिस्थितियाँ बनाकर, खरपतवार प्रतिस्पर्धा को कम करके और स्वस्थ फसल विकास को बढ़ावा देकर प्रभावी खरपतवार दमन प्रदान करते हैं।

जैविक विधि

इसमें खरपतवारों को दबाने या नियंत्रित करने के लिए जीवित जीवों का उपयोग शामिल है। बायोहर्बिसाइड्स, फाइटोपैथोजेनिक सूक्ष्मजीवों या माइक्रोबियल/पौधे से प्राप्त फाइटोटॉक्सिन से बने होते हैं जो प्रभावी जैविक खरपतवार नियंत्रण प्रदान करते हैं और रासायनिक जड़ी–बूटियों के समान तरीकों का उपयोग करके लागू किया जा सकता है। ऐसे सूक्ष्मजीवों को जैव–एजेंट के रूप में जाना जाता है जो भोजन के रूप में खरपतवार को प्राथमिकता देते हैं। जैविक विधियां महंगी हैं और मक्के में वांछनीय शिकारी की जांच के लिए बहुत अधिक निवेश की आवश्यकता होती है (**तालिका 2**)।

तालिका 2. बायोहर्बिसाइड सॉरोज और लक्ष्य खरपतवार प्रजातियाँ

स्त्रोत	लक्ष्य खरपतवार	फाइटोटॉक्सिक प्रभाव
अचिलिया सैंटोलिना एल.	*मेडिकैगो पॉलीमोर्फा* एल.	विकास और चयापचय प्रक्रिया के परिवर्तन को रोकता है
ब्रैसिका नेपस एल.	*सोरघम हेलपेंस* एल.	अंकुरण एवं जड़ की लंबाई को दबायें
सिम्बोपोगोन नार्डस एल.	*डिजिटेरिया हॉरिजॉन्टलिस, सेन्क्रस इचिनाटस* एल.	अंकुरण और पौधे विकास को रोकता है और क्लारोफिल और प्रोटीन सामग्री को कम करता है
पार्थेनियम हिस्टोफोरस एल.	*इचिनोक्लाआ कोलोना* एल. *यूफोरबिया हिरता* एल., *एजिराटुम कोनजोइड्स* एल.	बीज अंकुरण, वृद्धि और विकास

कवक		
एस्कोकाइटा एग्रोपाइरीना	*चेनोपोडियम एल्बम एल., सिरसियम अर्वेन्से एल. स्कोप., मर्कुरियलिस एनुआ एल., सोनचुस ओलेरेसियस एल., सेटेरिया विर्डिस एल.*	जड़ की वृद्धि कम होना
फुसैरियम फुजिकुरोई	*कुकुमिस सैटिवस एल., सोरघम*	क्लोरोसिस, नेक्रोसिस और पौधों की ऊंचाई और जड़ की लंबाई में कमी
जीवाणु		
स्यूडोमोनास एरूगिनोसा	*अमरैन्थस हाइब्रिडस, सोलनस लाइकोपर्सिकम, इचिनोक्लोआ क्रूसगल्ली, पेनिसेटस पुरपुरियस*	बाधित बीज अंकुरण, वृद्धि और रोगाणु गतिविधि

रासायनिक विधि

रासायनिक खरपतवार प्रबंधन में शाकनाशियों का उपयोग शामिल है, जो अवांछित खरपतवारों को नियंत्रित करने या खत्म करने के लिए विकसित रासायनिक पदार्थ हैं। शाकनाशी का उपयोग कुशल, आसानी से उपलब्ध और कम लागत वाला है। मक्के की फसल में उपयोग के लिए आमतौर पर अनुशंसित शाकनाशी **तालिका 3** में सूचीबद्ध हैं।

तालिका 3. प्रभावी खरपतवार नियंत्रण के लिए मक्के में शाकनाशी की सिफारिशें

शाकनाशी का नाम	खुराक (किलो/ग्राम ए.आई.)	आवेदन का समय
एट्राजिन 50% डब्लूपी	1.0–1.5 किग्रा/हेक्टेयर	1–2 डीएएस पर पूर्व उद्भव : व्यापक स्पेक्ट्रम शाकनाशी लेकिन मूल रूप से एक व्यापक पत्ती नाशक, मक्का में उभरने के 2 सप्ताह के भीतर प्रारंभिक पोस्टमर्जेंस अनुप्रयोग
पाइरोक्सासल्फोन 85% डब्लूपी	127 ग्राम/हेक्टेयर	1–2 डीएएस पर पूर्व उद्भव : के नियंत्रण का व्यापक स्पेक्ट्रम छोटे बीज वाले चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार और घास
पेंडीमेथालिन 30% ईसी	1.0–1.5 लीटर/हेक्टेयर	1–2 डीएएस पर पूर्व–उद्भव : व्यापक स्पेक्ट्रम पर मूल रूप से एक घास नाशक शाकनाशी
एट्राजिन+पेंडिमेथालिन	0.75+0.75 किग्रा/हेक्टेयर	1–2 डीएएस पर पूर्व–टैंक मिश्रण अनुप्रयोग खरपतवारों के व्यापक स्पेक्ट्रम को नियंत्रित करता है
टोप्रामेजोन 33.6% एससी	25 ग्राम/हेक्टेयर	25–30 डीएएस: चौड़ी पत्ती वाले कठोर खरपतवारों और घासों का उद्भव के बाद नियंत्रण
टेम्बोट्रियोन 42% एससी	112 ग्राम/हेक्टेयर	5–30 डीएएस: चौड़ी पत्ती और घास वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए व्यापक स्पेक्ट्रम पोस्टमर्जेंस शाकनाशी
हेलोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 75% डब्लूजी	36 ग्राम/हेक्टेयर	25–30 डीएएस: उद्भव के बाद सेज और अन्य खरपतवारों का नियंत्रण
मेसोट्रियोन 2.27% + एट्राजिन 22.7% एससी	1400 मिली/एकड़	25–30 डीएएस: पूर्व मिश्रण शाकनाशी अनुप्रयोग घास के खरपतवार और चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार को नियंत्रित करता है

शाकनाशी प्रयोग के दौरान सावधानियों का ध्यान रखना आवश्यक है:

पर्यावरण, गैर–लक्षित जीवों और मानव स्वास्थ्य पर संभावित नकारात्मक प्रभावों को कम करने के लिए अनुशंसित खुराक, आवेदन समय और सुरक्षा सावधानियों का पालन करते हुए जड़ी–बूटियों का विवेकपूर्ण तरीके से उपयोग करना महत्वपूर्ण है।

- निर्जलीकरण से बचें; शाकनाशी स्प्रे शुरू करने से पहले पर्याप्त मात्रा में पीने का पानी पीना चाहिए।
- आवेदन की खुराक और पानी की मात्रा के लिए शाकनाशियों पर लेबल निर्देशों का पालन किया जाना चाहिए।
- एक्सपायरी उत्पादों का उपयोग न करें।
- शाकनाशी स्प्रे के लिए फ्लैट फैन नोजल प्रकार के स्प्रेयर का चयन करना चाहिए।
- शाकनाशी का छिड़काव शांत मौसम (हवा नहीं) में दोपहर के समय करना चाहिए। बादल और बरसात के मौसम में छिड़काव से बचें।
- शाकनाशी के प्रतिकूल प्रभाव से बचने के लिए सुरक्षात्मक गियर जैसे टोपी, दस्ताने, संरक्षक चश्मा और रबर के जूते पहनने की आवश्यकता है।
- मिट्टी में पर्याप्त नमी होने पर अंकुरण पूर्व शाकनाशी का प्रयोग करें।
- शाकनाशी प्रयोग के बाद मिट्टी को परेशान न करें।
- यदि दलहनी फसल को अंतरफसल के रूप में उगाना है तो एट्राजीन का प्रयोग न करें। मक्का में बुआई के 1–3 दिन के भीतर 0.75 किलोग्राम/ हेक्टेयर की दर से पेंडीमेथालिन का छिड़काव करें।

सारांश

मक्के की फसल में खरपतवारों की मौजूदगी से आवश्यक विकास संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा के कारण उपज में काफी कमी आती है। इष्टतम फसल उपज प्राप्त करने के लिए खरपतवारों से प्रतिस्पर्धा को कम करना सर्वोपरि है। फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा की महत्वपूर्ण अवधि के दौरान एकीकृत खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं का उचित तरीके से पालन करने की आवश्यकता है। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं को अपनाने से अधिक आशाजनक भविष्य के लिए टिकाऊ खेती के तरीकों पर ध्यान केंद्रित करते हुए जड़ी–बूटियों के उपयोग को कम किया जा सकता है।

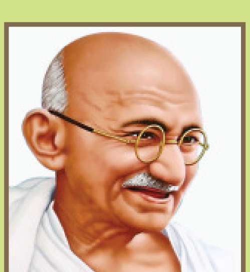

राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना
देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।

– महात्मा गांधी

फलीदार पौधे आधारित फसल प्रणाली : एक पर्यावरण अनुकूलित खरपतवार प्रबंधन का आयाम

जीतेन्द्र कुमार सोनी एवं वैभव चौधरी
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

खरपतवार कृषि में एक गंभीर समस्या है, जो फसलों की वृद्धि, उत्पादन और गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव डालते है। खरपतवार फसलों के लिए आवश्यक संसाधनों जैसे प्रकाश, पानी, और पोषकतत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे फसल की उचित वृद्धि, उत्पादन और गुणवत्ता प्रभावित होती है। इसके अलावा, खरपतवार कीट और बीमारियों को आश्रय देते हैं, जो फसलों के स्वास्थ्य और उत्पादकता को प्रभावित करती हैं। एक अनुमान के अनुसार, खरपतवार से वैश्विक स्तर पर लगभग 37 प्रतिशत फसल हानि होती है। यह विकसित देशों में 5 से 10 प्रतिशत तक होती है, जबकि विकासशील देशों में यह 20 से 30 प्रतिशत तक बढ़ सकती है। भारत में खरपतवार के कारण फसल उत्पादन में लगभग 31.5 प्रतिशत की कमी होती है। खरपतवारों के नियंत्रण के लिए विभिन्न आयाम है, जैसे भौतिक, यांत्रिक, सस्य, रासायनिक और जैविक। समय के साथ, रासायनिक विधि जिसमे शाकनाशियों का उपयोग किसानो के लिए एक आसान एवं कम लागत वाला विकल्प है। लेकिन शाकनाशियों के लगातार एवं अनियमित उपयोग से पर्यावरण प्रदूषण, शाकनाशी प्रतिरोधक्ता, स्वास्थ्य खतरों और मृदा स्वास्थ्य मे गिरावट जैसी जटिल समस्याएँ पैदा हो रहीं हैं। इन समस्याओं का समाधान खरपतवार प्रबंधन के अन्य आयामों से काफी हद तक किया जा सकता है, लेकिन इसमें खेती में लागत के बढ़ने के आसार ज्यादा होते है। अतः फलीदार पौधे आधारित फसल प्रणाली के माध्यम से खरपतवारों का पर्यावरण अनुकूलित प्रबंधन किया जा सकता है, जोकि एक सतत खरपतवार प्रबंधन विधि है। इसके साथ ही ये एकीकृत खरपतवार प्रबंधन में एक महत्वपूर्ण विकल्प साबित हो सकता है।

फलीदार पौधे आधारित फसल प्रणाली क्या है?

फसल प्रणाली में फलीदार फसलों की भूमिका स्थायी खरपतवार प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण है। ये 'फैबेसी' परिवार से आते है एवं प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। खेती में वार्षिक फलीदार फसलों में दलहनी एवं कुछ तिलहनी फसलें शामिल हैं जैसे कि मूंग, उड़द, लोबिया, चना, सोयाबीन, मूंगफली और मसूर इत्यादि। ये पौधे राइजोबियम नामक बैक्टीरिया के साथ सहजीवी संबंध बनाते हैं, जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन को पौधों के उपयोग के लिए उपलब्ध नाइट्रोजन यौगिकों में परिवर्तित करते हैं। इससे मिट्टी की पोषकता बढ़ती है, एवं उसके स्वास्थ्य को बनाए रखते हैं साथ ही ये सूक्ष्मजीव और जीव विविधता को बढ़ावा देते हैं। जिससे नाइट्रोजन उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है और ग्रीनहाउस गैस का उत्सर्जन भी कम होता है। साथ ही खरपतवारों को बढ़ने से रोकते है। उनकी तीव्र वृद्धि और घनी छत्तियाँ खरपतवारों को छाया में रखती हैं, साथ ही विस्तृत गहरी जड़ प्रणाली मिट्टी को स्थिर करती है। जिससे खरपतवारों को धूप, पानी और पोषक तत्वों के लिए कड़ी स्पर्धा का सामना करना पड़ता है। जिससे खरपतवार के बीज अंकुरित नहीं हो पाते है एवं अंकुरित बीजों के विकास को भी प्रभावित करती है। अतः फलीदार–आधारित फसल प्रणाली अपने प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता, एलेलोपैथिक प्रभाव, नाइट्रोजन स्थिरीकरण का उपयोग अंतर–फसल, फसल चक्रण, आवरण फसल, और मल्चिंग के माध्यम से खरपतवार प्रबंधन में योगदान कर सकती है।

फलीदार पौधे आधारित प्रणाली से खरपतवार प्रबंधन

अंतर–फसल प्रणाली: अंतरफसल प्रणाली में एक ही भूमि पर एक ही समय में दो या दो से अधिक फसलों को उगाया जाता है, जो या तो एक ही परिवार के हों या अलग–अलग परिवारों से। अंतरफसल प्रणाली में पंक्ति, पट्टी, मिश्रित, और रिले अंतरफसल सामिल हैं। प्रभावी अंतरफसल के लिए, यह आवश्यक है कि फसलें अलग–अलग परिवारों से हों, जिनमें से एक फलीदार फसल हो। इन फसलों में जड़ों की गहराई, वृद्धि व्यवहार, पोषक तत्व और पानी की मांग, कीट होस्ट विशिष्टता, प्रतिस्पर्धात्मकता, छाया सहनशीलता, और पत्तियों की संरचना में भिन्नता होनी चाहिए। अंतरफसल प्रणाली से कई लाभ है, जैसे संसाधनों का बेहतर उपयोग, फसल विफलता में कमी, उत्पादकता में वृद्धि, कीट और बीमारियों में कमी, खरपतवार नियंत्रण, और मिट्टी के स्वास्थ्य और उर्वरता में वृद्धि। मक्का और गन्ने जैसी चौड़ी पंक्तियों वाली फसलों में खरपतवार प्रतिस्पर्धा अधिक होती है, जहाँ पर्याप्त सूर्य का प्रकाश मिट्टी की सतह तक पहुँचता है, जिससे खरपतवार की वृद्धि बढ़ती है। हालाँकि, अल्पावधि वाली दलहन फसलों के साथ अंतरफसल करने से प्रभावी खरपतवार नियंत्रण और उच्च उत्पादकता प्राप्त की जा सकती है। वैज्ञानिक अध्ययन बताते हैं कि 2:2 पंक्ति अनुपात में बेबी कॉर्न और मटर या चना की अंतरफसल खरपतवार नियंत्रण के लिए अत्यंत प्रभावी होती है। इसी प्रकार, मक्का में फलीदार फसलों जैसे लोबिया, मूंगफली, राजमा और राइस बीन के साथ अंतरफसल से लगभग 50 प्रतिशत खरपतवारों का नियंत्रण होता है, जिससे बेहतर उपज और उच्च उत्पादकता मिलती है। गन्ने में अंतरफसल जैसे लोबिया, सन हेम्प और सोयाबीन से वीड स्मुदरिंग एफिशिएंसी (Weed smothering efficiency) 32.0–36.3 प्रतिशत के बीच होती है। ये विविध और वैज्ञानिक रूप से आधारित प्रथाएँ किसानों को प्रभावी और पर्यावरण–अनुकूलित खरपतवार प्रबंधन के लिए फलीदार पौधे के लाभों का उपयोग करने में सक्षम बनाती हैं।

मक्का मे मूंगफली की अंतरफसल के साथ एक बार निराई

मक्का निराई के बिना

सीधी बुआई वाले धान में लोबिया की अंतरफसल के साथ एक बार निराई

निराई के बिना सीधी बुआई वाली धान

पेरेला मे मूंगफली की अंतरफसल

पेरेला निराई के बिना

चित्र: फलीदार पौधों का अंतरफसल में प्रभाव

फसल चक्रण: फसल चक्र के माध्यम से खरपतवारों की वृद्धि और उसके जीवन चक्र को बाधित किया जा सकता है। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन प्रणाली में फसल चक्रण एक प्रभावी विकल्प है, जिसमें फलीदार–आधारित फसल चक्रण के द्वारा खरपतवारों को नियंत्रित किया जाता है। इससे मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखता है, और खरपतवारों के बीज भंडार को कम करता है। उदाहरण के लिए, गेहूं के स्थान पर बरसीम लगाने से *फालारिस माइनर* की आबादी को प्रभावी ढंग से कम करता है। यदि स्ट्राइगा की समस्या मक्के पर है, वहाँ मक्के के स्थान पर अरहर लगाने से स्ट्राइगा बीज भंडार को कम करता है। चावल–सोयाबीन फसल चक्र अपनाने से चावल में खरपतवारों के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। फसल चक्रण से फसलों के विभिन्न रोपण समय, फसल प्रकार और फसल अनुरूप सस्य प्रबंधन क्रियाओं के माध्यम से खरपतवारों के जीवन चक्र को बाधित करती हैं, जिससे समय के साथ खरपतवारो का प्रकोप कम हो जाता है।

आवरण फसल: आवरण फसलों द्वारा खरपतवार नियंत्रण फसल के प्रकार, जीनोटाइप, घनत्व, विविधता, संरचना, सस्य प्रबंधन विधियों जैसे आंतरिक और बाहरी कारकों पर निर्भर करता है। फलीदार फसलों का उपयोग आवरण फसलों में जीवित मल्च या इनके अवशेष के रूप में होता है। यह नियंत्रण इनके द्वारा एलेलोपैथिक प्रभाव, भौतिक बाधाओं और इन कारकों के संयोजन से होता है। फलीदार पौधे तेजी से वृद्धि करते हैं और भूमि की सतह को ढक लेते हैं। जिससे खरपतवारों को प्रकाश और स्थान की कमी होती है, जो उनके अंकुरण और विकास को बाधित करती है। फलीदार पौधों के अवशेष जैविक पदार्थ के रूप में मिट्टी में जल्द मिल जाते हैं, जो खरपतवारों को दबाने में मदद करते हैं। हरी खाद को आवरण फसलों के रूप में उपयोग करके या उनके अवशेषों का मल्च के रूप में उपयोग करके, खरपतवारों के अंकुरण और इसके वृद्धि को प्रभावी रूप से कम करते है। साथ ही ये मिट्टी के कटाव को कम करती हैं और उसके स्वास्थ्य में सुधार करते है।

फलीदार पौधे आधारित प्रणाली से मिट्टी और पर्यावरण को लाभ

फलीदार पौधे आधारित फसल प्रणाली से मिट्टी स्वास्थ्य के कई पहलुओं में योगदान देती है, जिनमें मिट्टी की उर्वरता, जैविक कार्बन और ह्यूमस की मात्रा को बढ़ाना, एवं नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की उपलब्धता शामिल है। ये मिट्टी के सूक्ष्मजीव बायोमास और जैव विविधता में सुधार करते हैं और नाइट्रोजन खनिजीकरण को बढ़ाते हैं। इससे पोषक तत्वों के चक्रण और मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों के विघटन में तेजी आती है, जिससे फसल उत्पादकता और मिट्टी की स्थिरता में वृद्धि होती है। ये भारी धातुओं के बायोरिमेडिएशन में भी मदद करते हैं। ये मिट्टी के भौतिक गुणों में सुधार करती है। अपनी गहरी जड़ संरचना से जल संचयन और पोषक तत्व चक्रण को बढ़ाती हैं। इसके अतिरिक्त, जड़ उत्सर्जन और जड़ों की सतहों से कार्बनिक अम्लों की रिसाई से फॉस्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाती है।

अन्य कृषि प्रणालियों की तुलना में फलीदार फसले ग्रीनहाउस गैसों जैसे कार्बन डाइऑक्साइड और नाइट्रस ऑक्साइड के उत्सर्जन को कम करते हैं। वे मिट्टी में कार्बन के अवशोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। फलीदार फसलें अन्य फसलों की तुलना में प्रति इकाई क्षेत्र में लगभग 5–7 गुना कम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जित करती हैं। नाइट्रस अश्वक्साइड प्रवाह के माप से पता चलता है की मटर अपने फसल अवधि में 69 किलोग्राम/हेक्टेयर उत्सर्जित करता है, जबकि गेहूं 368 किलोग्राम/हेक्टेयर और राई 534 किलोग्राम/हेक्टेयर उत्सर्जित करते है। फलीदार फसलें मिट्टी में 1.42 मेगा.ग्रा. कार्बन/हेक्टेयर/वर्ष की दर से कार्बन अवशोषण में मदद करते है। फलीदार फसलें में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन की प्रभावशीलता कृषि–परिस्थितिकी तंत्र प्रबंधन पर निर्भर करती है जैसे की संरक्षित, नो–टिल, और जैविक कृषि।

संभावना

फलीदार पौधे आधारित फसल प्रणाली खरपतवार प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। ये प्राकृतिक एवं जैविक खेती और कम लागत वाली कृषि में खरपतवार नियंत्रण और कृषि पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने में अहम भूमिका प्रदान करती है, जहां रासायनिक शाकनाशी और उर्वरकों का सीमित या निषेधित उपयोग होता है। फलीदार फसलों को बेहतर खरपतवार नियंत्रण क्षमता या अच्छे एलेलोपैथिक गुणों के लिए विकसित करके प्राकृतिक खरपतवार नियंत्रण में और कारगर रूप दे सकता है। ये पौधे वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करके मिट्टी की उर्वरता बढ़ाते हैं, जिससे फसलों की उपज ज्यादा होती हैं और खरपतवारों को प्राकृतिक रूप से नियंत्रित करते है। ग्रीन मैन्योर या मल्च के रूप में फलीदार फसल का उपयोग खरपतवार अंकुरण के खिलाफ एक भौतिक अवरोध प्रदान करती है और मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करते है। अन्य फसलों के साथ फलीदार फसल का अंतरफसल खरपतवारों के लिए प्रतिस्पर्धी वातावरण बनाते है। हालांकि सही फसल क्रम एवं उनका अनुपात एक बेहतर खरपतवार नियंत्रण और कृषि उत्पादकता में वृद्धि का उपयुक्त माध्यम है। किसानों के साथ ज्ञान और सर्वोत्तम प्रथाओं को साझा करने के लिए निरंतर अनुसंधान और विस्तार सेवाएँ आवश्यक हैं, जिससे विभिन्न कृषि प्रणालियों में फलीदार फसलों का सफल एकीकरण सुनिश्चित हो सके।

निष्कर्ष

फलीदार पौधे आधारित फसल प्रणाली एक प्रभावी, पर्यावरण अनुकूलित और सतत् खरपतवार प्रबंधन की विधि है। यह न केवल खरपतवारों को नियंत्रित करने में सहायक है, बल्कि मिट्टी की उर्वरता को भी बढ़ाती है और पर्यावरण की सुरक्षा सुनिश्चित करती है। फसल चक्रण, अंतर–फसल प्रणाली, और आवरण फसलों का प्रयोग खरपतवारों के प्रकोप को कम करने और खेती की उपज को बढ़ाने में सहायक साबित होती है। इससे किसानों को बेहतर उत्पादकता और स्थिरता प्राप्त होगी, जो खेती के क्षेत्र में सुधार के लिए महत्वपूर्ण है। इस प्रणाली के माध्यम से हम एक हरित और सतत् कृषि की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठा सकते हैं।

जैव विविधता के परिप्रेक्ष्य में खरपतवारों की पारिस्थितिक समझ

एम.एस. रघुवंशी[1], एच.एल. खरबीकर[1], जी.आर. डोंगरे[2], आर. के. नेताम[1], ए.ओ. शिरालेय[1], पी.सी. मोहाराना[1], रितिक विश्वास[1] एवं एन.जी. पाटिल[1]
[1]राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपूर
[2]भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्र का एक विशाल देश है जहाँ 159.69 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में खेती की जाती है और खेती में शुरु से ही फसल–खरपतवार का साथ चोली–दामन जैसा होता है। खरपतवार, कृषि को हानि पहुंचाने वाली सबसे बडी श्रेणी है। दुनिया भर में, खरपतवार, कीटों, फसल रोगजनको, जड़ खाने वाले निमेटोड, या गर्म रक्त वाले कीटों (कृतक, पक्षी, हिरण और अन्य बड़े चरने वालो) की तुलना में अधिक उपज हानि का कारण बनते हैं और किसानों की उत्पादन लागत में अधिक वृद्धि करते हैं। यह एक छिटपुट रूप से अवांछित भूमि में फैलने वाली पौधे होते है तथा इनको मानव–नियंत्रित सेटिंग में पौधे, जैसे कि खेत, बगीचे, लॉन और सार्वजनिक पार्क जैसी जगहों पर अवांछित पौधों के रूप में उगते है। शब्द ''खरपतवार'' वर्गीकरण की दृष्टि से इसका कोई वानस्पतिक महत्व नहीं है, क्योंकि एक पौधा जो एक स्थान में एक खरपतवार है। अलग–अलग समय पर एक वांछनीय फसल या प्रजाति बन सकता है। आज के परिवेश में लोग खरपतवारों के पारिस्थितिक लाभों के प्रति कम जागरूक हैं बायोडायवर्सिटी/जैवविविधता रिपोर्ट के अनुसार खरपतवार के पौधों का व्यापक प्रसार हुआ है जो मिट्टी के कटाव के खिलाफ एक हरे आवरण की तरह दिखाई दिया। खेतों के आर्थिक नुकसान के अलावा जहां सभी पौधे धरती को एक हरे आवरण के रुप में, खुले स्थानों में, वनों में, चारागाहों आदि जगहों में ये खरपतवार जैवविविधता को आधार देते है।

खरपतवार क्या है?–एक कार्यशील परिभाषा

''खरपतवार'' शब्द को एक ऐसे पौधे के रूप में परिभाषित किया गया है जो जगह से बाहर है, एक अवांछित पौधा है, या एक ऐसा पौधा है जो एक कीट है क्योंकि यह फसल या पशुधन उत्पादन में हस्तक्षेप करता है। यह शब्द आमतौर पर किसी भी पौधे की प्रजाति पर लागू होता है जो अक्सर कीट बन जाता है, जैसे कि सामान्य लैंबस्क्वार्ट्स (*चेनोपोडियम एल्बम*), पिगवीड्स (*अमारैंथस स्पी.*), और क्रैबग्रासेस (*डिजिटेरिया स्पी.*)। हालाँकि, खरपतवार मैनुअल और शाकनाशी प्रचार साहित्य में क्लोवर (*ट्राइफोलियम स्पी.*), ऑर्चर्डग्रास (*डैक्टिलिस ग्लोमेरेटा*), लंबा फेस्क्यू (*फेस्टुका अरुंडिनेसिया*), बालों वाली वेच (*विकिया विलोसा*), और जेरूसलम आटिचोक (*हेलियनथस ट्यूबरोसस*) जैसी खरपतवार प्रजातियों की भी सूची है– ऐसे पौधे जिन्हें कई किसान सही संदर्भ में उगाए जाने पर चारे, आवरण या खाद्य फसलों के रूप में महत्व देते हैं। वास्तव में, ''स्वयं सेवक फसलें'' जैसे कि एक प्रकार का अनाज (*फागोपाइरम एस्कुलेंटम*), शीतकालीन राई (सेकेले अनाज), मक्का (जिया मेज), या यहां तक कि चारा सोयाबीन (ग्लाइसीन मैक्स) जब वे स्वयं बीजित होते हैं और दूसरे भाग में उभरते हैं तो खरपतवार बन सकते हैं। फसल चक्र में जब उनकी अब आवश्यकता नहीं रह जाती है।

इन उदाहरणों से, यह स्पष्ट हो जाता है कि ''खरपतवार'' शब्द, आंशिक रूप से, किसी विशेष समय में किसी विशेष क्षेत्र या भूमि पथ के वांछित उपयोग में हस्तक्षेप के रूप में कुछ पौधों या पौधों की प्रजातियों का एक मानवीय मूल्य निर्णय है। यहां तक कि अल्फाल्फा (*मेडिकैगो सैटिवा*), जो सबसे मूल्यवान चारा या घास की फसलों में से एक है, सब्जी के बगीचे में एक खरपतवार हो सकता है।

वहीं 'आक्रामक प्रजातियाँ जलवायु परिवर्तन या भूमि आवरण परिवर्तनों के संदर्भ में उत्पादकता, कार्बन भंडारण और पोषक चक्रण जैसी पारिस्थितिकी तंत्र प्रक्रियाओं को बनाए रखकर पारिस्थितिक तंत्र और लोगों को वैश्विक परिवर्तन के अनुकूल होने में मदद कर सकती हैं'। परन्तु कही ज्यादा ये आक्रामक प्रजातियाँ स्थानीय वनस्पति एवं मूल प्रजातियाँ पर वहा की मवेशियों पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रुप से प्रतिकूल असर डालते है। फिर ये प्रजातियाँ खरपतवार का रुप ले लेती है। साथ ही जलवायु के प्रभाव में ये आक्रामक प्रजातियाँ नयें क्षेत्रों में अपना अधिपत्य जमा लेते है और आसपास के पर्यावरणीय संतुलन को भरपूर नुकसान पहुंचातें है।

मिट्टी

एक ऑस्ट्रेलियाई कृषि विज्ञानी मार्टेन स्टैपर का कहना है कि खेती प्रबंधन की मौजूदा परिपाटियाँ कठोर रसायनों के उपयोग से परिपूर्ण है और मिट्टी में ह्यूमस, रोगाणुओं, सूक्ष्म खनिजों और पोषक तत्वों के नाजुक संतुलन पर विपरीत प्रभाव डाल रही है। इस तरह के प्रबंधन के परिणाम स्वरूप मिट्टी में विद्यमान कार्बनिक, कार्बन (ह्यूमस सहित) की उपलब्धता में उल्लेखनीय कमी दर्ज की गई है और मिट्टी में सूक्ष्मजीवों (शैवाल, बैक्टीरिया, कवक, नेमाटोड, प्रोटोजोआ) और बड़े जीवों (जैसे घुन, चींटियां, बीटल, कीड़े) की विविधता और प्रचुरता में काफी कमी आई है। इस से जड़ों को कठोर परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है, जिससे पौधों को खिलाने के लिए मिट्टी की क्षमता बहुत कम हो जाती है, साथ ही जड़ें खारे और अम्ल की स्थिति के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाती हैं और पूरा पौधा कीटों और बीमारियों के प्रति संवेदनशील हो जाता है। मिट्टी

के प्रभाव जड़ी–बूटियों के उपयोग और संरक्षण क्षेत्रों में अन्य गड़बड़ी पर समान रूप से लागू होते हैं। वहीं खरपतवार मिट्टी को ढकने और ठीक करने का प्रकृति का तरीका है ये अग्रणी पौधे–जिन्हें हम खरपतवार कहते हैं– वे प्रजातियाँ, तेजी से नंगी मिट्टी को ढक लेती है और मिट्टी की पुर्नप्राप्ति के लिए कार्य करती रहती है। पीटर एंड्रयूज इस बात पर जोर देते हैं कि ''खरपतवारों को जल्दी हटाने से कुछ हासिल नहीं होता है, क्योंकि बढ़े हुए पोषक तत्वों को बरकरार रखने और कार्बनिक कार्बन का उत्पादन करने के लिए बायोमास जितना अधिक होगा, अधिक वांछनीय प्रजातियों की प्रगति उतनी ही तेजी से होगी।''

कई जैविक किसान सफल जैविक उत्पादन के लिए खरपतवारों को सबसे गंभीर बाधा मानते हैं, और प्रभावी जैविक खरपतवार नियंत्रण को सर्वोच्च अनुसंधान प्राथमिकता मानते हैं। विशेष रूप से, सब्जी की फसलों में खरपतवार जीवन का एक निरंतर तथ्य हैं। थोड़ी सी मेहनत और समय पर निराई–गुड़ाई के साथ, घरेलू माली अधिकांश खरपतवारों को लाभकारी कार्बनिक पदार्थों में बदल सकता है। यदि खरपतवार न होते, तो दुनिया ने अब तक की तुलना में अधिक मिट्टी खो दी होती, और मानव जाति अब तक बड़े पैमाने पर भुखमरी का सामना कर चुकी होती क्योंकि जिन पौधों को हम खरपतवार कहते हैं, वे पारिस्थितिक तंत्र में एक महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। वे प्राकृतिक और मानव–जनित गड़बड़ी के कारण उजागर हुई मिट्टी में जल्दी से स्थापित होते हैं, उसकी रक्षा करते हैं और उसे बहाल करते हैं। मिट्टी की बनावट और इसका पैटर्न वर्षा की तीव्रता और अन्य कारकों पर निर्भर करता है जो सीधे हमारे पर्यावरण से संबंधित हैं जैसे खरपतवार वितरण पैटर्न और इसके पारिस्थितिकी तंत्र के वितरण को प्रभावित करते हैं।

गैर–फसल भूमि और जल निकायों से खरपतवारों का उपयोग भी किया जा सकता है, क्योंकि ये हर दिन तेजी से बढ़ते हैं, अधिक से अधिक क्षेत्र को कवर कर के प्रतिदिन 1–2 टन/हैक्टेयर बायोमास जोड़ते हैं (मुखर्जी, 2021)। मुखर्जी, 2021 आगे बताते है कि जलकुंभी (*इचोर्निया क्रैसिप्स*) पूरे भारत के जल निकायों में इस तरह के खरपतवार का सबसे पुराना उदाहरण है। स्थलीय खरपतवारों में, उत्तरी भारत में *लैंटाना कैमारा, मिमोसा, मिकानिया, क्रोमोलेना* और *सोलनम* प्रजातियाँ शामिल हैं। दुर्भाग्य से, उपरोक्त खरपतवारों का कोई नियंत्रण उपाय (रासायनिक, जैविक या भौतिक) अब तक संभव नहीं पाया गया है और ये खरपतवार तेजी से बढ़ते और फैलते रहते हैं। इनका बड़े पैमाने पर विभिन्न उपयोग से इनका नियंत्रण संभव है। स्थलीय और जलीय खरपतवारों से खाद बनाने की किफायती विधि के द्वारा भी संभव है।

जुताई परिवर्तनः पारंपरिक से कम जुताई प्रणालियों में परिवर्तन अक्सर खरपतवार समुदाय में बदलाव का कारण बनता है जिसमें ग्रीष्म कालीन वार्षिक घास और छोटे बीज वाली ग्रीष्म कालीन वार्षिक चौड़ी पत्ती, शीत कालीन वार्षिक, द्विवार्षिक और बारहमासी प्रजातियों में वृद्धि और बड़े बीज वाली प्रजातियों में कमी शामिल है।

जो एक बडा खतरा बन गया है, बल्कि जैवविविधता पैटर्न के संरक्षण के लिए भी बहुत चुनौती पूर्ण हो गया है। खाद्य और गैर–खाद्य उत्पादों के लिए फसल, पशु, बागवानी और वानिकी उत्पादन प्रणालियाँ आवश्यक हैं। ये आधुनिक भूमि उपयोग के महत्वपूर्ण घटक हैं, जो कृषि और संबंधित उद्योगों के विकसित होने के साथ विकसित हुए हैं। पौधे भी जैविक विविधता का एक प्रमुख हिस्सा हैं। उत्पादन प्रणालियों के भीतर खरपतवार प्रबंधन के गैर–लक्ष्य प्रभावों से पौधों को खतरा जैविक विविधता पर प्रभाव डाल सकता है।

खरपतवार कीड़ों की विविधता को बढ़ाने के साथ–साथ मिट्टी की स्थिति में सुधार करते है :– जब आम के खेतों में उपस्थित खरपतवार, विशेषकर देशी जंगली फूल हो, तो संभावना है कि वे लाभकारी कीड़ों की बहुतायत और विविधता को बढ़ाने के लिए पराग और अमृत प्रदान कर सकते हैं। हमने जांच में पाया कि कैसे खरपतवार की उपस्थिति आम के पेड़ों पर कीड़ों के साथ–साथ मिट्टी के स्वास्थ्य को भी प्रभावित करती है। हमने पाया कि खरपतवारों ने परागण और परजीवी (प्राकृतिक कीट नियंत्रण एजेंट) कीट की बहुतायत और विविधता में काफी वृद्धि की है। उपचार के बीच शिकारी कीड़ों में कोई अंतर नहीं था, और खरपतवार वाले आम के पेड़ों पर थोड़े अधिक शाकाहारी कीड़े थे। आम के फूलों में परागणकर्ता और खरपतवार वाले आम के पेड़ों पर मकड़ियाँ भी अधिक थीं। खरपतवारों की मौजूदगी से मिट्टी की स्थिति में कार्बन और पीएच में काफी सुधार हुआ। इन परिणामों से पता चलता है कि खरपतवार प्रजातियों का एक सहनीय स्तर खेतों में कीड़ों, पौधों और मिट्टी की जैवविविधता को लाभ पहुंचा सकता है, जिन पर अक्सर बहुत कम जीवन होता है।

खरपतवार गतिशील पारिस्थितिकी तंत्र का हिस्सा हैं, जो सामान्य वातावरण में शुरू होते हैं और फसलों में बाधा बन जाते हैं, हालांकि यह परागण का महत्वपूर्ण स्रोत और कई लाभकारी कीड़ों का घर है। खरपतवार जैव विविधता कृषि–पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। जलवायु कारकों में परिवर्तन से वनस्पति और कृषि की प्रकृति बदल जाएगी और यह विशेष रूप से बढ़ती वायुमंडलीय कार्बन डाय आक्साइड के साथ सच है। खरपतवार जैवविविधता के महत्व को ध्यान में रखते हुए खरपतवार प्रबंधन रणनीति पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए जो निम्न है :–

- खरपतवारों की बेहतर समझ
- खरपतवार की गतिशीलता और उसके व्यवहार पैटर्न की निगरानी
- शाकनाशी प्रतिरोधी खरपतवारों की निगरानी और रोकथाम
- शाकनाशी अवशेष प्रबंधन
- आक्रामक खरपतवार प्रबंधन
- शाकनाशी सहिष्णु फसलों पर सतर्क दृष्टिकोण अपनाना

कृषि के लिए महत्वपूर्ण खरपतवारों पर जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभाव (स्रोतः ऑस्ट्रेलियाई मॉड्यूल, 2008)

नाम	वैज्ञानिक नाम	प्रभाव
ब्लैकबेरी	रूबस फ्रुटिकोसस	उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्रों में दक्षिण की ओर बढ़ने की उम्मीद है, क्योंकि यह अधिक तापमान और सूखे के प्रति संवेदनशील है।
चिलीसुई घास	नासेलानी सियाना	(ट्रिन और रुपर) बार्कवर्थ को इसकी सीमा बढ़ने की उम्मीद है क्योंकि यह अत्यधिक आक्रामक (लंबे समय तक जीवित रहने वाली, हवा और पानी द्वारा बीज फैलाव) और सूखा प्रतिरोधी है। गोर से यूलेक्स यूरोपियस के दक्षिण की ओर पीछे हटने की उम्मीद है क्योंकि यह सूखे के प्रति संवेदनशील है।
लैंटाना	लैंटाना कैमारा	इसके उच्च वर्षा क्षेत्र में दक्षिण की ओर बढ़ने की उम्मीद है।
मेसकाइट	प्रोसोपिस ग्लैंडुलोसा	यह कम वर्षा वाले क्षेत्रों में जा सकता है क्योंकि यह बहुत सूखा प्रतिरोधी है।
पार्थेनियम	पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस	शीतकालीन प्रमुख वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं है, यह ग्रीष्म प्रधान उच्च वर्षा (500 मिमी) क्षेत्र में जा सकता है।
दाँतिदार टुसॉक	नैसेला ट्राइकोटोमा (नीस.)	इसके दक्षिण की ओर और अधिक ऊंचाई तक पीछे हटने की उम्मीद है क्योंकि यह तापमान के प्रति संवेदनशील है। सूखा सहिष्णु पौधे के रूप में, इसे उन क्षेत्रों में अधिक आक्रामक होना चाहिए जहां तापमान अनुमति देता है।
कांटेदार बबूल	बबूल निलोटिका	इसके दक्षिण की ओर और शुष्क क्षेत्रों में बढ़ने की उम्मीद है।

सामान्य स्थिति में देशी वनस्पतियां

आक्रामक खरपतवार से ग्रसित स्थिति में देशी वनस्पतियां

जुलाई 2016 में सामान्य स्थिति में देशी वनस्पतियां क्षेत्र

जुलाई 2018 में स्थिति में आक्रामक खरपतवार की चपेट में देशी वनस्पतियां क्षेत्र

फ्लॉस फ्लावर (*एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम*): गैर खेती योग्य भूमि का एक घातक खरपतवार और उसका प्रबंधन

गरिमा[1], यूर्मिला कुमारी[1], कशिश वालिया[1], अरुणा मेहता[1] एवं मीरा देवी[2]
[1]डॉ. वाई एस परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, औद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय थुनाग, मंडी (हि.प्र.)
[1]कृषि विज्ञान केंद्र, डॉ. वाई एस परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन (हि.प्र.)

परिचय

खरपतवार अवांछित पौधे होते हैं जो मुख्य वृक्षारोपण और वनस्पति को प्रभावित करते हैं तथा पोषक तत्वों, जल और प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे मुख्य पौधों की वृद्धि धीमी हो जाती है। ये रोग और कीटों के लिए आश्रय स्थल का काम करते हैं, जिससे इनका हमला बढ़ सकता है और प्रबंधन की लागत बढ़ जाती है। विभिन्न पारिस्थितिकी कारकों के प्रति इनकी उत्कृष्ट अनुकूलन क्षमता और तेजी से फैलने की क्षमता इन्हें पौधों की जैव विविधता के लिए खतरा बनाती है। ये पौधों की उत्पादकता में कमी और आर्थिक नुकसान का कारण बनते हैं, जबकि इनके विषाक्त तत्व पशुओं और मानव स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होते हैं।

एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम, जिसे फ्लॉस फ्लावर के नाम से भी जाना जाता है, एक प्रसिद्ध और परेशान करने वाला खरपतवार है जो खेती और गैर–खेती भूमि में बड़े पैमाने पर पाया जाता है। इसके फूल नीले या बैंगनी रंग के होते हैं, जिससे यह पौधा आसानी से पहचाना जा सकता है (चित्र 1)। यह पौधा तेजी से फैलता है और अन्य पौधों की वृद्धि को रोक सकता है। इसके कारण, यह वनस्पति और खेती में एक महत्वपूर्ण चुनौतीपूर्ण खरपतवार के रूप में माना जाता है। यह खरपतवार मुख्य रूप से अपने तेजी से फैलने वाले स्वभाव और वनस्पति पर नकारात्मक प्रभाव के कारण जाना जाता है। वन क्षेत्रों में इसकी उपस्थिति न केवल वनस्पति की वृद्धि को बाधित करती है, बल्कि जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

यह बीजों, डंडे और जड़ों के माध्यम से प्रसारित होती है। प्रति पौधा यह लगभग 94,772 बीज उत्पन्न कर सकती है, जिनकी पैपस संरचना हवा, पानी, जानवर और मशीनरी द्वारा प्रसारण में मदद करती है। इसके बीजों के अंकुरण के लिए उत्तम और न्यूनतम तापमान क्रमशः 30–35 डिग्री सेल्सियस और 20 डिग्री सेल्सियस हैं। बीज तीन महीने तक सुप्त अवस्था में रहते हैं। बीजों का अंकुरण जून और अक्टूबर के दौरान होता है, जबकि अधिकतम वृद्धि का काल मार्च–अप्रैल में देखा जाता है। इस खरपतवार में पाए जाने वाले एल्कलॉयड्स प्रीकोसेन–I और II जीवों को चक्कर, सिरदर्द, त्वचा और आँखों में खुजली का कारण बनते हैं और चारा के साथ सेवन करने पर पशुओं के लिए खतरनाक हो सकते हैं।

इतिहास

एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम एक विदेशी खरपतवार है, जो मूलतः मध्य अमेरिका से आया है। यह भारत में एक सजावटी पौधा के रूप में परिचित किया गया था। यह गुजरात में अब भी एक सजावटी पौधा के रूप में उगाया जाता है। पहाड़ों में इसके अंकुरण, वृद्धि, विकास और बीज उत्पादन के लिए अनुकूल स्थितियों के कारण, और हवा द्वारा इसके त्वरित प्रसार के कारण, यह खरपतवार तेजी से पहले पहाड़ी क्षेत्रों से शुरू होकर धीरे–धीरे मैदानों तक पहुँच चुका है। हालांकि, यह भारत के लगभग सभी राज्यों में फैल चुका है, लेकिन वर्तमान में यह हिमाचल प्रदेश (लाहौल और स्पीति और किन्नौर को छोड़कर), पंजाब, हरियाणा, असम, उत्तराखंड, और उत्तर प्रदेश में एक गंभीर समस्या है।

समस्या की गंभीरता : *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम*, जिसे फ्लॉस फ्लावर के नाम से भी जाना जाता है, एक खरपतवार के रूप में अन्य पौधों पर कई नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है:

- **संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा :** *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* अन्य पौधों के साथ ज्यादा सूर्य किरण, पानी और पोषणकों के लिए प्रतिस्पर्धा करता है, जिससे पड़ोसी पौधों की वृद्धि और विकास में बाधा हो सकती है।
- **जैव विविधता पर प्रभाव :** *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* की उपस्थिति वन क्षेत्रों में जैव विविधता को घटाती है, क्योंकि यह अन्य पौधों की वृद्धि को रोकता है।
- **मृदा उर्वरता :** यह खरपतवार मृदा की उर्वरता को भी प्रभावित करता है, जिससे वन क्षेत्रों की उत्पादकता कम हो जाती है।
- **एलिलोपैथिक प्रभाव :** कुछ अध्ययन यह सुझाव देते हैं कि *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* एलिलोपैथिक यौगिकों को उत्पन्न करता है, जो अन्य पौधों की वृद्धि को रोक सकते हैं, जिससे उनकी प्रतिस्पर्धा और उनकी बचत कम हो सकती है।
- **आवास परिवर्तन :** *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* की तेजी से बढ़ती और फैलाव के कारण, यह आवास की संरचना को बदल सकता है, जिससे पड़ोसी पौधे अधिकतर उच्च या मध्यम ऊंचाई के पौधों द्वारा ढंक जाते हैं।
- **पारिस्थितिकीय विघटन :** एक गैर–स्थानीय प्रवासी प्रजाति के रूप में, *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* स्थानीय पौधे की प्रतिस्पर्धा करके स्थानीय परिसंपर्कों में बदलाव ला सकता है, जिससे प्रजाति संगठन और विविधता में परिवर्तन हो सकता है।

समग्र रूप से, *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* का खरपतवार के रूप में उपस्थित होना अन्य पौधों की वृद्धि, विविधता, और पारिस्थितिक संतुलन पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है।

नियंत्रण के उपाय

यांत्रिक विधि : *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* के यांत्रिक नियंत्रण के लिए कई प्रभावी उपाय हैं। शुरुआती चरण में ही हाथ से खरपतवार निकालना, जब पौधे छोटे हों, छोटे क्षेत्रों में प्रभावी होता है और मिट्टी को नुकसान नहीं पहुंचाता। फूल आने से पहले नियमित रूप से खरपतवार को काटने से बीज उत्पादन रोका जा सकता है और पौधों की वृद्धि को नियंत्रित किया जा सकता है। गहरी जुताई करके जड़ों और पौधों को निकालने से जमीन में

गहरे बैठे पौधे और जड़ें नष्ट हो जाती हैं। जमीन को जैविक या अजैविक सामग्री से ढकने (मल्चिंग) से खरपतवार उग नहीं सकते, साथ ही यह नमी को संरक्षित करने और मिट्टी के तापमान को नियंत्रित करने में भी मदद करता है। निराई-गुड़ाई करके खेतों में खरपतवार को नियंत्रित करना प्रभावी होता है। यदि खरपतवार बहुत अधिक हो गए हैं, तो नियंत्रित जलाने की प्रक्रिया अपनाई जा सकती है, जिससे बड़े क्षेत्र में खरपतवार को तुरंत नष्ट किया जा सकता है। खेतों और बागानों की नियमित निगरानी और यांत्रिक नियंत्रण के साथ रासायनिक और जैविक नियंत्रण विधियों का संयोजन करके बेहतर परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। इन यांत्रिक उपायों का उपयोग करके *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है, जिससे खेतों और वनों की उत्पादकता और स्वास्थ्य को बनाए रखा जा सके।

सस्य विधि : *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम*, को विभिन्न सस्य प्रथाओं के माध्यम से प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है। फसलों का परिवर्तन एजेरेटम को अनुकूल स्थितियों में उन्नत होने से बचाता है। पैंनिकम मैक्सिमम और सेटेरिया जैसी प्रतिस्पर्धी फसलें संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा करके एजेरेटम की वृद्धि को रोकती हैं। सही समय पर फसलों की खेती सुनिश्चित करती है कि मुख्य फसलों का विकास होने से पहले एजेरेटम को स्थापित होने का अवसर नहीं मिलता। जैविक या अजैविक सामग्रियों से मल्चिंग करने से नमी का संवहन होता है, मिट्टी के तापमान को नियंत्रित किया जाता है, और एजेरेटम की वृद्धि को रोका जाता है। प्रभावी सिंचाई प्रबंधन से मुख्य फसलें पर्याप्त पानी प्राप्त करती हैं जबकि एजेरेटम के लिए नमी की उपलब्धता को सीमित किया जाता है। मिट्टी के प्रबंधन विधियों से मुख्य फसलों को फायदा होता है और एजेरेटम को नकारात्मक असर प्राप्त होता है। सस्य तकनीकों को रासायनिक, यांत्रिक, और जैविक नियंत्रण के साथ मिलाकर उपयोग करने से एजेरेटम का प्रभावी नियंत्रण होता है, जो खेतों और वनों की उत्पादकता और स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है।

रासायनिक विधि :

खरपतवारनाशी का उपयोग: विशेष प्रकार के खरपतवारनाशी का चयन और उनका उचित उपयोग *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* को नियंत्रित करने में मदद कर सकता है। यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि खरपतवारनाशी का उपयोग पर्यावरण अनुकूल तरीके से हो।

एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम के रासायनिक नियंत्रण के लिए विभिन्न उपाय अपनाए जा सकते हैं। उभरते पौधों पर 2–3 पत्तियों के चरण में 1.5 किग्रा/हेक्टेयर एट्राज़ीन का छिड़काव मई–जून और सितंबर–अक्टूबर में करें, जिसे 150 किग्रा रेत के साथ मिलाकर घास के मैदान या चरागाहों में छिड़का जा सकता है। पुराने पौधों पर फूल आने से पहले 800 लीटर पानी में 1.5 किग्रा/हेक्टेयर ग्लाइफोसेट का छिड़काव भी मई–जून और सितंबर–अक्टूबर में किया जा सकता है। यदि पहले से गिरी हुई मिट्टी में से नए पौधे उगते हैं, तो 1.5 किग्रा/हेक्टेयर 2,4–डी का प्रयोग करें। फूल आने से पहले नियमित रूप से 0.6 किग्रा/हेक्टेयर पैराक्वाट का छिड़काव भी प्रभावी हो सकता है। रसायनों का उपयोग करते समय सही समय पर छिड़काव करना आवश्यक है, साथ ही उचित सुरक्षा उपायों का पालन करें और निर्देशित डोज का ही उपयोग करें। इन रासायनिक उपायों से *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है, जिससे खेतों और वनों की उत्पादकता और स्वास्थ्य को बनाए रखा जा सके।

जैविक विधि :

एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम के जैविक नियंत्रण के लिए विभिन्न उपाय अपनाए जा सकते हैं। शत्रु जीवों का उपयोग करते हुए *बैक्टोसीरा कॉकिस* और *लिलक वाइनी* बोरर जैसे कीट इसके पत्तों, तनों और जड़ों को नुकसान पहुँचाते हैं। फफूंद में *कोललेटोट्रिकम ग्लीओस्पोरियोइड्स* और *अल्टरनेरिया अल्टेरनाटा* इसके पत्तों पर हमला करके इसकी वृद्धि को रोकते हैं। प्रतिस्पर्धी पौधों, जैसे गिनी घास और सेटेरिया, तेजी से बढ़कर *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* को बढ़ने से रोकते हैं, जबकि कैसिया टोरा जैसे कवर क्रॉप्स जमीन को ढककर इसकी वृद्धि को नियंत्रित करते हैं। एजरेटम मोजेक वायरस का उपयोग करके भी इसकी वृद्धि को धीमा किया जा सकता है। जैविक, रासायनिक और यांत्रिक नियंत्रण विधियों का संयोजन करके बेहतर परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं, और नियमित निगरानी से इन उपायों के प्रभाव को मापा और सुधार किया जा सकता है।

निवारक उपाय : खरपतवार को नियंत्रित करने के लिए कई तरह के निवारक उपाय होते हैं। सबसे पहले, बीजों के प्रसार को रोकने के लिए साफ बीज और उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। फिर, खरपतवार को फूल और बीज बनने से पहले हटाया जाता है। उसके बाद, प्रतिस्पर्धी फसलें उगाने से भी इसका नियंत्रण किया जा सकता है। सिंचाई प्रबंधन के तहत उचित सिंचाई प्रदान किया जाता है, जो खरपतवार की वृद्धि को नियंत्रित करता है। अंत में, आवरण फसलें लगाकर उसे नियंत्रित किया जाता है, जिससे मुख्य वृक्षारोपण के आसपास की भूमि को ढकने से खरपतवार की वृद्धि को रोका जा सकता है।

निष्कर्ष :

खरपतवार कृषि और वानिकी के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती हैं, क्योंकि ये पौधों के साथ प्रकाश, पानी और पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। वे विशेषज्ञों के मुताबिक नुकसान और कम उपज का कारण बन सकते हैं, जो फसलों की उत्पादकता को प्रभावित करता है। जंगलों में, खरपतवार तेजी से बढ़ते हैं, युवा पौधों को विस्थापित करते हैं और उन्हें संसाधनों से वंचित करते हैं। इसके अतिरिक्त, नर्सरियों में खरपतवार विकास समस्याएं उत्पन्न कर सकते हैं, जो पौधों की मृत्यु और निम्न गुणवत्ता के पौधे पैदा कर सकते हैं। *एजेरेटम ह्यूस्टोनियनम* वन क्षेत्रों में एक गंभीर समस्या है, लेकिन सही नियंत्रण उपायों को अपनाकर इसे प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सकता है। यांत्रिक, रासायनिक, जैविक और सस्य विधियों का संयोजन न केवल वनस्पति और जैव विविधता को बनाए रखने में मदद करेगा, बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी लाभकारी होगा। वन प्रबंधन में खरपतवार नियंत्रण की सही रणनीति अपनाकर वनों की उत्पादकता और स्वास्थ्य को बढ़ावा दिया जा सकता है, जिससे पर्यावरणीय और आर्थिक संतुलन में सुधार होगा।

अर्टिका डायोका (बिच्छू बूटी) : बंजर व गैर-कृषि क्षेत्रों में एक हानिकारक खरपतवार और इसका प्रबंधन

यूर्मिला कुमारी[1], गरिमा[1], कशिश वालिया[1], अरुणा मेहता[1], मीरा देवी[2] एवं गीता वर्मा[3]

[1]डॉ. वाई एस परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, औद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय थुनाग, मंडी (हि.प्र.)

[2]कृषि विज्ञान केंद्र, डा. वाई एस परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन (हि.प्र.)

[3]डॉ. वाई एस परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन (हि.प्र.)

परिचय

भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में एक विशेष प्रकार की खरपतवार ने खेती न की जाने वाली भूमि और प्राकृतिक इलाकों में काफी समस्या उत्पन्न कर दी है। पहाड़ी क्षेत्रों में ऐसी बहुत सी जमीनें होती हैं जिन्हें बार–बार खेती के लिए इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। ऐसी जमीनें अक्सर बाग–बगीचों, चरागाहों, घास के मैदानों, जंगलों और बंजर भूमि में पाई जाती हैं। चूंकि इन जमीनों पर अक्सर खेती और देखभाल नहीं होती, इसलिए खतरनाक बारहमासी खरपतवारों ने इन क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया है। बिच्छू बूटी भी उन में एक है, ये खरपतवार अपनी आक्रामकता, फैलने की क्षमता और आर्थिक और पर्यावरणीय प्रभावों के कारण सबसे खराब मानी जाती हैं। इनमें से अधिकतर खरपतवार घने और अभेद्य झाड़ियाँ बनाते हैं और स्थानीय वनस्पतियों और चरागाहों पर कब्जा कर लेते हैं। ये खरपतवार संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा और एलीलोपैथिक प्रभावों के कारण चरागाहों, बागों और वानिकी पौधों की उत्पादकता को कम कर देते हैं।

अर्टिका डायोका (बिच्छू बूटी), जिसे अंग्रेजी में ''स्टिंगिंग नेटल'' कहा जाता है, एक शाकीय बारहमासी खरपतवार, जो तेज कांटों से ढका होता है, जो अर्टिकेसी परिवार से संबंध रखता है। बिच्छू बूटी अपने विषैले कांटों और तेजी से फैलने की क्षमता के कारण बहुत कष्टकारी साबित हो रही है।

बिच्छू बूटी यूरोप और उत्तरी अमेरिका की मूल निवासी है। यह गर्मियों में 1–2 मीटर लंबा होता है और सर्दियों में जमीन तक सूख जाता है। इसके कांटे छूने पर जलन और खुजली पैदा करते हैं, जिससे यह पौधा विशेषकर पशुओं और मानवों के लिए अत्यंत असहजकारी बन जाता है। इसके राइजोम और स्टोलन बहुत फैलावदार होते हैं और जड़ों की तरह चमकीले पीले होते हैं। इसके नरम हरे पत्ते 3 से 15 सेमी लंबे होते हैं और एक सीधे हरे तने पर विपरीत दिशा में लगते हैं। पत्तों का किनारा मजबूत दांतेदार होता है, आधार हृदयाकार और सिरा नुकीला होता है, जिसमें अंतिम दांत बगल के दांतों से लंबा होता है। इसमें घने अक्षीय पुष्पगुच्छों में छोटे हरे या भूरे रंग के फूल होते हैं। इसका फल एचीन होता है। यह बीज और वनस्पतिक रूप से प्रजनन करता है और बहुतायत में बीज पैदा करता है। पूर्ण सूर्यप्रकाश में बढ़ने वाले पौधे प्रति अंकुर 10000–20000 बीज उत्पन्न कर सकते हैं।

बीज सुसुप्त नहीं होते और परिपक्वता के 5–10 दिन बाद अंकुरित हो सकते हैं। बारहमासी होने के कारण, बिच्छू बूटी काश्तकारी क्षेत्रों, चरागाहों, घास के मैदानों, बगीचों के किनारों पर और अक्सर मध्य और उच्च पहाड़ियों में खेतों में फैल जाती है।

मुख्य विशेषताएं

- **विषैले कांटे:** इस पौधे के कांटे त्वचा के संपर्क में आने पर विषाक्तता पैदा करते हैं, जिससे जलन और दर्द होता है।
- **तेजी से फैलाव:** यह पौधा अपने बीजों, तनों और जड़ों के माध्यम से तेजी से फैलता है।
- **अनुकूलता:** यह खराब परिस्थितियों में भी जीवित रह सकता है, इसलिए यह पहाड़ी क्षेत्रों के लिए एक बड़ा खतरा बन गया है।

फैलने के कारण

बिच्छू बूटी का फैलाव कई तरीकों से होता है, जैसे कि हवा, पानी,

पक्षियों, जानवरों, और यहाँ तक कि मशीनरी के माध्यम से। इसके बीज और राइजोम (जड़ें) बहुत मजबूत होते हैं और कठोर वातावरण में भी जीवित रह सकते हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में खेती न की जाने वाली भूमि, जहां यह पौधा आसानी से फैल सकता है, इसकी वृद्धि को और बढ़ावा देती है।

बिच्छू बूटी के प्रभाव

- **उपयोगी वनस्पतियों को दबाना:** बिच्छू बूटी तेजी से फैलने के कारण उपयोगी वनस्पतियों को बढ़ने नहीं देती, जिससे जैव विविधता को खतरा उत्पन्न हो जाता है।
- **चारागाह की कमी:** यह खरपतवार चारागाह भूमि को नष्ट कर देती है, जिससे पशुपालन को भारी नुकसान होता है।
- **वन संसाधनों की हानि:** जंगलों में बिच्छू बूटी के फैलाव से वहां की वनस्पतियों और जीव-जंतुओं के प्राकृतिक आवास को हानि पहुँचती है।
- **स्वास्थ्य पर प्रभाव:** इसके कांटे और विषाक्तता मानव और पशुओं के लिए स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं पैदा करते हैं।

प्रबंधन के उपाय

बिच्छू बूटी के प्रबंधन के लिए निम्नलिखित विधियाँ अपनाई जा सकती हैं:

रोकथाम और यांत्रिक विधियाँ:

समय पर कटाई: बिच्छू बूटी को फूलने से पहले ही नियमित रूप से काटा जाए ताकि इसके बीज बनने और फैलने की प्रक्रिया को रोका जा सके। सूखी अवधि (मौसम) में अच्छी तरह से उग आए बिच्छू बूटी के पौधों को जमीन के पास से काटें और काटी गई जैव सामग्री को जलाएं या खाद में परिवर्तित करें। इससे सतही जड़ों को धूप और शुष्क हवा में सूखने में मदद मिलेगी।

अधिक उग चुके पौधों को काटें और उन्हें चराई वाले क्षेत्रों में सूखने के लिए छोड़ दें। मवेशी सूख चुके पौधों को खाते हैं और उनके पैरों के दबाव से जड़ें भी क्षतिग्रस्त होती हैं।

जड़ से उखाड़ना: पौधे को जड़ से उखाड़ना और इसे ठीक तरीके से नष्ट करना जरूरी है ताकि इसके पुन: विकास को रोका जा सके। काटने के बाद, जितना संभव हो सके, जड़ से पौधों को उखाड़ें या बार-बार सतह की जुताई या खुदाई करें ताकि जड़ों का भंडार समाप्त हो सके।

रासायनिक नियंत्रण:

खरपतवारनाशी का प्रयोग: उचित खरपतवारनाशी का चयन कर बिच्छू बूटी को नियंत्रित किया जा सकता है। हालांकि, खरपतवारनाशी का उपयोग पर्यावरणीय संतुलन को प्रभावित कर सकता है, इसलिए इसे सावधानीपूर्वक इस्तेमाल करना चाहिए। बंजर भूमि में नव उत्पन्न अंकुरों पर 1.5 किग्रा/हेक्टेयर की दर से ग्लाइफोसेट का छिड़काव करें या चरागाह और घास के मैदानों में 2,4-डी एथिल एस्टर 0.75 किग्रा/हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

जैविक नियंत्रण:

- **प्राकृतिक शत्रुओं का उपयोग :** कुछ प्राकृतिक शत्रु, जैसे कि विशिष्ट कीड़े और फंगस, बिच्छू बूटी की वृद्धि को नियंत्रित करने में सहायक हो सकते हैं। इनका उपयोग पर्यावरण के लिए सुरक्षित है और इसे जैविक नियंत्रण के रूप में माना जा सकता है।
- प्रतिस्पर्धी घास उगाएं।

उपयोगी तरीके:

- **जैव उर्वरक के रूप में :** कटे हुए पौधों को जैव उर्वरक के रूप में उपयोग किया जा सकता है।
- **जैविक खाद :** इसका उपयोग जैविक खाद के रूप में कर खेतों की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाया जा सकता है।
- **फर्नीचर और ईंधन :** बिच्छू बूटी के तनों का उपयोग फर्नीचर और ईंधन बनाने में किया जा सकता है।

समुदाय का सहयोग :

- **सार्वजनिक भागीदारी:** इस खरपतवार को नियंत्रित करने के लिए समुदाय, सरकारी संगठनों, वैज्ञानिकों और नीति निर्माताओं का सहयोग आवश्यक है। इसके लिए जागरूकता अभियान और सामूहिक प्रयासों की जरूरत है।

भविष्य में अनुसंधान और प्रबंधन रणनीतियाँ

इस खरपतवार द्वारा आक्रांत भूमि क्षेत्र का आकलन और पर्यावरण, पशु एवं मानव स्वास्थ्य और जैव विविधता पर इसके प्रभाव का आकलन अत्याधुनिक तकनीकों के साथ राष्ट्रीय स्तर पर किया जाना आवश्यक है। इस खरपतवार को नियंत्रित करने के लिए जैविक एजेंटों की जांच की जानी चाहिए। बिच्छू बूटी संबंधित क्षेत्रों को प्रबंधित करने के लिए एकीकृत प्रौद्योगिकी विकसित की जानी चाहिए जिसमें सरकारी एजेंसियों, वैज्ञानिकों और जनभागीदारी को शामिल किया जाए।

प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र में इस खरपतवार की जगह प्रतिस्पर्धात्मक उपयोगी पौधों की प्रजातियों की जांच की आवश्यकता है। उनके हानिकारक प्रभावों के बारे में जन जागरूकता फैलाने के लिए विस्तार गतिविधियों के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। नए खरपतवार प्रजातियों की नियमित अंतराल पर निगरानी और उनके प्रबंधन के लिए सख्त संगरोध उपाय और तंत्र अपनाने की आवश्यकता है। पहाड़ियों में बिच्छू बूटी प्रबंधित करने को प्राथमिकता देकर सफलतापूर्वक नियंत्रित किया जा सकता है क्योंकि ये मैदानी क्षेत्रों के लिए बीज का स्रोत बने रहते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर एक घृणित खरपतवार प्रबंधन निकाय का गठन करना आवश्यक है जो राष्ट्रीय स्तर पर इन विकसित प्रौद्योगिकियों का अभियान के रूप में उपयोग करने की रणनीतियों की निगरानी और योजना बनाए।

निष्कर्ष :

बिच्छू बूटी एक घृणित खरपतवार है जो पहाड़ी क्षेत्रों में तेजी से फैल रही है और यह पारिस्थितिकी तंत्र, वनस्पति, और पशुपालन को भारी नुकसान पहुंचा रही है। इसके प्रभावी नियंत्रण के लिए रोकथाम, यांत्रिक, रासायनिक, जैविक, और उपयोगी विधियों का समन्वित उपयोग आवश्यक है। इसके अलावा, समुदाय की सक्रिय भागीदारी और जागरूकता से इस खरपतवार की समस्या से निपटने में मदद मिल सकती है। इसलिए, यह जरूरी है कि हम मिलजुल कर इस खरपतवार के प्रबंधन के लिए कारगर उपाय अपनाएं और हमारे पहाड़ी क्षेत्रों के प्राकृतिक सौंदर्य और जैव विविधता को संरक्षित करें।

जलवायु परिवर्तन : खरपतवार प्रबंधन के लिए एक उभरता खतरा

कशिश वालिया[1], यूर्मिला कुमारी[1], गरिमा[1], आयुषी अहलूवालिया[2] एवं अरुणा मेहता[1]
[1]डॉ. वाई एस परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, औद्योनिकी एवं वानिकी महाविद्यालय थुनाग, मंडी (हि.प्र.)
[2]सी.एस.आई.आर.–हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पालमपुर (हि.प्र.)

1. परिचय:

वैश्विक जलवायु में परिवर्तन हो रहा है, जिसके तहत तापमान और कार्बन डाइ ऑक्साइड (CO_2) के स्तर में हो रहे बदलाव मापे जा रहे हैं। ये परिवर्तन जलवायु परिवर्तन के प्रमुख कारण माने जाते हैं। साथ ही, इसका प्रभाव कृषि उत्पादन प्रणालियों (जिसमें खरपतवार भी शामिल हैं) पर भी ध्यानपूर्वक देखा जा रहा है। जलवायु स्थितियां कृषि कीटों के फैलाव, जनसंख्या गतिकी, जीवन चक्र की अवधि, संक्रमण दबाव और कुल घटनाओं पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती हैं। खरपतवार उन कृषि व्याधियों में शामिल हैं जो जलवायु परिवर्तन से प्रभावित हो रहा हैं। जलवायु परिवर्तन उच्च अक्षांशों और ऊंचाईयों पर कई पारिस्थितिक तंत्रों की पुष्पीय संरचना में बदलाव लाएगा, क्योंकि तापमान और आर्द्रता में परिवर्तन फूलने, फलने और बीज की निष्क्रियता को प्रभावित करेंगे। वायुमंडलीय कार्बन डाइ ऑक्साइड (CO_2) स्तर, वर्षा, तापमान और अन्य बढ़ती परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तन खरपतवार प्रजातियों के वितरण और उनकी प्रतिस्पर्धात्मकता को प्रभावित करेंगे, जिससे खरपतवार जनसंख्या और फसलों दोनों पर असर पड़ेगा। कोई भी कारक जो फसलों पर पर्यावरणीय तनाव को बढ़ाता है, उन्हें कीड़ों और पौधों के रोगजनकों के हमले के प्रति अधिक संवेदनशील बना सकता है और खरपतवारों के साथ उनकी प्रतिस्पर्धात्मकता को कम कर सकता है। इनमें से कई खरपतवार वनस्पति साधनों द्वारा प्रजनन करते हैं और हाल के साक्ष्य बताते हैं कि ये खरपतवार वायुमंडलीय कार्बन डाइ ऑक्साइड (CO_2) में हुई वृद्धि के प्रति मजबूत प्रतिक्रिया दिखा सकते हैं। तापमान में परिवर्तन और वृद्धि जलवायु परिवर्तन की एक प्रमुख विशेषता है, जो मौजूदा पौधों (खरपतवारों) को प्रभावित कर सकती है। इससे कुछ खरपतवारों को मूल पौधों की जगह लेने और नए क्षेत्रों में फैलने का अवसर मिल सकता है। यहां तक कि सूखे की स्थिति में भी कुछ खरपतवार ऐसे रसायन उत्पन्न करते हैं जो उन्हें अच्छी तरह पनपने और फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम बनाते हैं। जड़, तना अनुपात में वृद्धि, विशेष रूप से बारहमासी खरपतवारों की जड़ों या प्रकंदों के बढ़ने के साथ, कुछ खरपतवारों को नियंत्रित करना कठिन हो सकता है जो यांत्रिक जुताई के बाद छोड़े गए जड़ के टुकड़ों से पुनः उगते हैं। जलवायु परिवर्तन का सीधा प्रभाव जैविक नियंत्रण एजेंट की जीवविज्ञान पर और पौधे की प्रतिरोध करने, सहन करने या पौधे के रोगजनक की उपस्थिति की भरपाई करने की क्षमता पर पड़ेगा। बढ़ा हुआ तापमान जैविक नियंत्रण एजेंटों और खरपतवारों दोनों के जीवन चक्र की दर को बढ़ाने की उम्मीद की जाती है। बढ़ी हुई जल तनाव मेज़बान पौधे के विकास को प्रभावित करेगी, और इसके माध्यम से, जैविक नियंत्रण एजेंटों के विकास को, जिससे वे सूखी परिस्थितियों में कम प्रभावी हो सकते हैं। जलवायु परिवर्तन वर्तमान समय की सबसे गंभीर चुनौतियों में से एक है। इसके प्रभाव केवल पर्यावरण और जीव-जंतुओं तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि यह कृषि और खाद्य सुरक्षा को भी प्रभावित कर रहे हैं। विशेष रूप से, खरपतवार प्रबंधन में भी जलवायु परिवर्तन के प्रभाव स्पष्ट हो रहे हैं। खरपतवार, जो पहले से ही फसलों के लिए एक बड़ी समस्या थी, अब बदलती जलवायु के कारण और भी अधिक मुश्किल हो गए हैं। इस लेख में हम जलवायु परिवर्तन के कारण खरपतवार प्रबंधन में आने वाली चुनौतियों और उनके संभावित समाधान पर चर्चा करेंगे।

2. जलवायु परिवर्तन और खरपतवार:

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को समझने के लिए हमें यह समझना होगा कि यह विभिन्न पर्यावरणीय कारकों जैसे तापमान, वर्षा, वायुमंडलीय कार्बन डाइ ऑक्साइड (CO_2) स्तर, और मौसम के पैटर्न को कैसे प्रभावित करता है। ये सभी कारक सीधे तौर पर खरपतवार के विकास, प्रसार, और उनके प्रबंधन को प्रभावित करते हैं।

तापमान में वृद्धि : तापमान में वृद्धि के कारण खरपतवारों का जीवन चक्र बदल रहा है। उच्च तापमान से खरपतवार तेजी से बढ़ते हैं और उनका प्रसार भी बढ़ जाता है। इसके परिणामस्वरूप, किसान अधिक मात्रा में खरपतवारों का सामना कर रहे हैं, जिन्हें नियंत्रित करना मुश्किल हो गया है।

वर्षा के पैटर्न में बदलाव : वर्षा के पैटर्न में बदलाव से भी खरपतवारों का प्रबंधन प्रभावित होता है। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में खरपतवार तेजी से फैलते हैं, जबकि कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सूखा-प्रतिरोधी खरपतवार अधिक प्रभावी होते हैं। इससे खरपतवारों की विविधता बढ़ जाती है और उनका नियंत्रण कठिन हो जाता है।

वायुमंडलीय कार्बन डाइ ऑक्साइड (CO_2) स्तर : वायुमंडलीय CO_2 स्तर में वृद्धि भी खरपतवारों के विकास को बढ़ावा देती है। उच्च CO_2 स्तर से कुछ खरपतवार तेजी से बढ़ते हैं और उनकी प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ जाती है। इससे फसलों के विकास पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

3. खरपतवारों के पुष्पीय संरचना और वितरण:

एकल प्रजातियों और पारिस्थितिक तंत्रों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव जटिल हो सकता है। उष्णकटिबंधीय और उप-उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों की आक्रामक खरपतवार प्रजातियों के मामले में, जो वर्तमान में भूमध्यसागरीय पर्यावरण तक सीमित हैं, भविष्य की जलवायु परिस्थितियों के कारण उनका संभावित क्षेत्र समशीतोष्ण क्षेत्रों में भी फैल सकता है। हालांकि, फसलों के विपरीत, खरपतवार समस्याग्रस्त आक्रमणकारी, पारिस्थितिक अवसरवादी और अधिक जेनेटिक विविधता वाले पौधे होते हैं। खरपतवार विभिन्न प्रकार के आवासों में अनुकूलित और पनप सकते हैं। कोई भी कारक जो फसलों पर पर्यावरणीय तनाव को बढ़ाता है, उन्हें कीड़ों और पौधों के रोगजनकों के हमले के प्रति अधिक संवेदनशील बना

सकता है और खरपतवारों के साथ कम प्रतिस्पधह्न बना सकता है। जैसे–जैसे जलवायु बदलती है, कीटों का भौगोलिक और मौसमी वितरण बदल सकता है। खरपतवारों की शारीरिक लचीलेपन और अधिकांश फसलों की तुलना में उनकी अधिक अंतर–प्रजाति जेनेटिक भिन्नता उन्हें बदलते वातावरण में एक प्रतिस्पर्धी लाभ प्रदान कर सकती है। चक्रवात, बाढ़, सूखा और आग (उच्च तापमान से) जैसी घटनाएं अधिक सामान्य हो जाएंगी और इन घटनाओं के बाद खरपतवार सबसे पहले मजबूती से पकड़ बना लेंगे।

4. भविष्य के खरपतवार खतरे:

- ***स्पैगनेटिकोला ट्रिलोबाटा***: उच्च तापमान तनाव सहिष्णुता ।
- ***धतूरा स्ट्रैमोनियम***: उच्च तापमान के कारण तीव्र वृद्धि ।
- ***लैंटाना कैमरा*** : व्यापक वातावरण में फैलने की क्षमता और लंबे समय तक सूखे में जीवित रहने की क्षमता ।
- ***पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस***: CO_2 की उच्च सांद्रता (550 पीपीएम) में वृद्धि और बीज उत्पादन में वृद्धि ।
- ***इकोर्निया क्रैसिप्स***: अधिक वर्षा की तीव्रता और बार–बार बाढ़ से अश्वफ़सेट्स का आसान प्रसार और नए क्षेत्रों में प्रवेश ।
- ***प्रोसोपीस् जुलीफ़्लोरा***: अत्यधिक जलवायु परिस्थितियों जैसे उच्च तापमान वाली गर्मियों और जल भराव और बाढ़ के साथ मानसून को सहन करने की क्षमता, जिससे इस खरपतवार का प्रबंधन लगभग असंभव हो जाता है।

स्पैगनेटिकोला ट्रिलोबाटा

धतूरा स्ट्रैमोनियम

लैंटाना कैमरा

पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस

इकोर्निया क्रैसिप्स

प्रोसोपीस् जुलीफ़्लोरा

5. जलवायु परिवर्तन के अंतर्गत शवाल प्रबंधन:

पर्यावरणीय स्थितियों के साथ–साथ फसल संरक्षण की प्रभावकारिता में भी बदलाव की संभावना है। नमी तनाव में पड़ी हुई खरपतवार अपनी पत्तियों की परत को मोटा करके, पौधों की वृद्धि को धीमा करके, और तेजी से फूलने की प्रतिक्रिया करके जवाब दे सकती हैं। सूखे से प्रभावित खरपतवारों को उत्तर–प्रकारी हर्बिसाइडों के साथ नियंत्रित करना उन खरपतवारों की तुलना में कठिन होता है जो सक्रिय रूप से उग रही होती हैं। उत्तर–प्रकारी खरपतवारनाशी के प्रभावी होने के लिए फसलों की सक्रिय वृद्धि की आवश्यकता होती है। पूर्व–उद्गमित हर्बिसाइड या पौधों द्वारा शोषित हर्बिसाइड्स को प्रभावी होने के लिए भूमि की नमी और

सक्रिय रूप से बढ़ते जड़ों की आवश्यकता होती है ताकि वे अपने लक्ष्य स्थलों तक पहुँच सकें। सूखे की स्थिति में पूर्व-उद्गमित हर्बिसाइड की प्रभावकारिता कम हो सकती है। कुल मिलाकर, फसल संरक्षण में परिवर्तन की संभावना मजबूत है। अनुकूलन रणनीतियाँ उपलब्ध हैं, लेकिन इन रणनीतियों को कार्यान्वित करने की लागत (जैसे, नई हर्बिसाइड्स, अधिक रासायनिक अवशोषण, नए जैव नियंत्रण एजेंट्स) स्पष्ट नहीं है।

6. खरपतवार प्रबंधन की चुनौतियाँ:

रासायनिक नियंत्रण की विफलता: रासायनिक नियंत्रण, जैसे खरपतवारनाशी, का उपयोग खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। लेकिन जलवायु परिवर्तन के कारण कई खरपतवारों में खरपतवारनाशी प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो रही है। इससे खरपतवारनाशियों का प्रभाव कम हो जाता है और किसानों को नए और अधिक महंगे रसायनों का उपयोग करना पड़ता है।

जैविक नियंत्रण की कठिनाई: जलवायु परिवर्तन के कारण जैविक नियंत्रण के तरीकों का प्रभाव भी कम हो रहा है। जैविक नियंत्रक जैसे कीट और रोगाणु बदलती जलवायु में उतने प्रभावी नहीं रह जाते। इससे जैविक नियंत्रण की विधियाँ भी कम प्रभावी हो जाती हैं।

फसलों की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता में कमी : खरपतवारों की तेज वृद्धि और प्रसार के कारण फसलों की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता में कमी आ रही है। इससे फसलों की उपज पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और खाद्य सुरक्षा को खतरा होता है।

7. संभावित समाधान:

समेकित खरपतवार प्रबंधन: समेकित खरपतवार प्रबंधन एक समग्र दृष्टिकोण है जिसमें विभिन्न नियंत्रण विधियों का उपयोग किया जाता है। इसमें रासायनिक, जैविक, यांत्रिक, और सस्य विधियों का समन्वित उपयोग शामिल है। यह दृष्टिकोण खरपतवार प्रबंधन को अधिक प्रभावी और स्थायी बनाता है।

अनुकूलनीय कृषि पद्धतियाँ : किसानों को अनुकूलनीय कृषि पद्धतियाँ अपनाने की सलाह दी जाती है। इसमें मौसम के अनुसार फसल चक्र में बदलाव, खरपतवार-प्रतिरोधी फसलों का चयन, और बेहतर सिंचाई प्रबंधन शामिल है। इससे किसानों को बदलते जलवायु में बेहतर परिणाम मिल सकते हैं।

शोध और विकास : खरपतवार प्रबंधन के लिए निरंतर शोध और विकास आवश्यक है। नई खरपतवारनाशी का विकास, खरपतवारों की प्रतिरोधक क्षमता का अध्ययन, और जैविक नियंत्रण के नए तरीके विकसित करना आवश्यक है। इसके लिए वैज्ञानिक और किसान समुदाय के बीच सहयोग आवश्यक है।

8. खरपतवार प्रबंधन रणनीतियाँ:

समेकित खरपतवार प्रबंधन : समेकित खरपतवार प्रबंधन एक समग्र दृष्टिकोण है जो विभिन्न नियंत्रण विधियों का समन्वित उपयोग करता है। इसमें रासायनिक, यांत्रिक, जैविक और सस्य विधियों का समन्वय होता है। इस दृष्टिकोण से खरपतवार प्रबंधन अधिक प्रभावी और स्थायी हो सकता है।

फसल चक्र और फसल विविधता : फसल चक्र और फसल विविधता को अपनाने से खरपतवार प्रबंधन में सुधार हो सकता है। विभिन्न फसलों के उपयोग से खरपतवारों की जीवन चक्र में बाधा उत्पन्न होती है और उनका प्रसार कम होता है। इसके साथ ही, कुछ फसलें खरपतवार-प्रतिरोधी होती हैं, जो खरपतवारों के प्रसार को नियंत्रित करने में मदद करती हैं।

जैविक नियंत्रण : जैविक नियंत्रण का उपयोग भी खरपतवार प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इसमें प्राकृतिक शत्रुओं जैसे कीट, रोगाणु और जानवरों का उपयोग खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। जैविक नियंत्रण विधियाँ पर्यावरण के लिए सुरक्षित होती हैं और लंबे समय तक प्रभावी रहती हैं।

नवीनतम तकनीक और अनुसंधान: नवीनतम तकनीक और अनुसंधान के माध्यम से खरपतवार प्रबंधन को और प्रभावी बनाया जा सकता है। जैसे- सटीक कृषि के माध्यम से खरपतवारों की पहचान और नियंत्रण के लिए सटीक उपकरणों का उपयोग किया जा सकता है। इसके अलावा, नए खरपतवारनाशियों का विकास और उनके प्रभावी उपयोग के लिए अनुसंधान आवश्यक है।

सामुदायिक सहभागिता और शिक्षा: किसानों को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों और अनुकूलित खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों के बारे में जागरूक करना आवश्यक है। सामुदायिक सहभागिता और शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से किसानों को नवीनतम तकनीकों और विधियों के बारे में जानकारी दी जा सकती है। इससे उन्हें बदलते मौसम के अनुसार अपने खरपतवार प्रबंधन के तरीकों को अनुकूलित करने में मदद मिलेगी।

9. निष्कर्ष:

जलवायु परिवर्तन के प्रभावों ने खरपतवार प्रबंधन को और भी चुनौतीपूर्ण बना दिया है। तापमान, वर्षा और वायुमंडलीय कार्बन डाइ ऑक्साइड (CO_2) स्तर में बदलाव ने खरपतवारों के विकास और प्रसार को बढ़ावा दिया है। इससे निपटने के लिए समेकित खरपतवार प्रबंधन, फसल चक्र, जैविक नियंत्रण, नवीनतम तकनीक और अनुसंधान, और सामुदायिक सहभागिता आवश्यक हैं। केवल सामूहिक प्रयासों से ही हम इस चुनौती का सफलतापूर्वक सामना कर सकते हैं और खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित कर सकते हैं।

श्रीअन्न में समेकित खरपतवार प्रबंधन

जितेंद्र कुमार दुबे, आर.पी. दुबे, पिजुश कान्ती मुखर्जी एवं वी.के. चौधरी
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

परिचय

वैश्विक वितरण: भारत, नाइजीरिया और चीन दुनिया में श्रीअन्न के सबसे बड़े उत्पादक देश हैं, ये तीनो देश वैश्विक उत्पादन का 55 प्रतिशत से अधिक के लिए जिम्मेदार है। वैश्विक उत्पादन का 20 प्रतिशत और एशिया के 80 प्रतिशत के साथ भारत विश्व में श्रीअन्न का सबसे बड़ा उत्पादक है। भारत ने अंतर्राष्ट्रीय श्रीअन्न वर्ष 2023 को एक 'जन आंदोलन' बनाने के साथ–साथ भारत को 'मिलेट के लिए वैश्विक केंद्र' के रूप में स्थापित करने का दृष्टिकोण साझा किया है। वर्ष 2023 में अंतर्राष्ट्रीय मिलेट वर्ष मनाने के भारत के प्रस्ताव को खाद्य और खाद्य मंत्रालय द्वारा मंजूरी दे दी गई 2018 में कृषि संगठन (एफएओ) और संयुक्त राष्ट्र महासभा ने घोषणा की है वर्ष 2023 को अंतर्राष्ट्रीय मिलेट वर्ष के रूप में मनाया गया। भारत में वर्ष 2023–24 में कुल श्रीअन्न का क्षेत्रफल 121.88 लाख हेक्टेयर उत्पादन 153.0 लाख टन और उत्पादकता 1262 किलोग्राम/हेक्टेयर है वर्तमान में श्रीअन्न बड़े पैमाने पर मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और कर्नाटक, यू.पी. और केरल राज्यों में उगाया जाता है। श्रीअन्न मध्य प्रदेश में स्वदेशी गोंड किसानों की पारंपरिक वर्षा आधारित कृषि प्रणालियों का केंद्र है। भारत में उगाए जाने वाले छह छोटे अनाज में से, पूर्वी मध्य प्रदेश में सबसे महत्वपूर्ण कोदो (पास्पलम स्क्रोबिकुलटम) और कुटकी (पैनिकम सुमार्ट्रेंस) हैं। मध्य प्रदेश में श्रीअन्न का सर्वाधिक क्षेत्रफल (132 हजार हेक्टेयर) है जो देश के कुल क्षेत्रफल का लगभग 60 प्रतिशत हिस्सा है। औसत मध्य प्रदेश में कोदो मिलेट की उत्पादकता 525 किलोग्राम/हेक्टेयर है। श्रीअन्न उत्पादक जिलों में छत्तीसगढ़ के बस्तर जिला के बाद मध्य प्रदेश का डिण्डौरी जिला दूसरे स्थान पर है यह गरीब, सीमांत, आदिवासी और पिछड़े लोगों को सस्ते प्रोटीन, खनिज और विटामिन के साथ मुख्य भोजन प्रदान करता है छिलका रहित कोदो को आदिवासी भाषा में ''कुदई'' कहा जाता है

भारतीय मिलेट्स पोषक तत्वों से भरपूर, सूखा प्रतिरोधी अनाजों में से एक है जिसकी खेती ज्यादातर भारत के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में की जाती है। लघु धान्य पोएसी वनस्पति परिवार से संबंधित छोटे बीज वाली घास हैं। जो लाखों गरीब किसानों के लिए भोजन और चारे का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं और भारत की पारिस्थितिक और आर्थिक सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन मिलेट्स को ''श्रीअन्न'', ''मोटा अनाज'' या ''गरीबों का अनाज'' भी कहा जाता है। भारतीय मिलेट्स पोषण की दृष्टि से गेहूं और चावल से बेहतर है क्योंकि वे प्रोटीन, विटामिन और खनिजों से भरपूर हैं। वे ग्लूटेन–मुक्त भी हैं और उनका ग्लाइसेमिक इंडेक्स भी कम है, जो मधुमेह के मरीजों के लिए आदर्श भोजन माना जाता है।

उगाने में सुपर क्रॉप : श्रीअन्न प्रकाश–असंवेदनशील और लचीला है फूल खिलने के लिए किसी विशिष्ट प्रकाश अवधि की आवश्यकता नही होती है जलवायु परिवर्तन के लिए श्रीअन्न कम या बिना खाद के खराब मिट्टी पर उग सकता है। श्रीअन्न कम पानी और सूखे की स्थिति में भी इसकी खेती बड़ी ही आसानी से की जा सकती बहुत कम वर्षा और असिंचित क्षेत्रों में भी बहुत सरलता से इसकी खेती की जा सकती है।

श्रीअन्न एक पोषक अनाज है जिसमें ज्वार, बाजरा, रागी, कोदो, कुटकी, सांवा, कंगनी और चीना शामिल हैं। ये मानवता के लिए ज्ञात सबसे पुराने खाद्य पदार्थों में से एक हैं। ये पोएसी परिवार में मोटे अनाज वाली घास की कई प्रजातियों में से एक हैं, जिनकी खेती उनके छोटे खाद्य बीजों के लिए की जाती है।

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वॉर्मिग के कारण कृषि को जटिल समस्या का सामना करना पड़ रहा है। राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए, मिलेट्स की खेती को बढ़ावा देने की तत्काल आवश्यकता है क्योंकि उच्च पोषक मूल्य के कारण मिलेट्स को जलवायु स्मार्ट और प्रकृति के अनुकूल फसल माना जाता है और जो गर्म और सूखे की स्थिति का सामना कर सकता है। पानी और तापमान तनाव के प्रति सहनशील होती है। दस श्रीअन्न फसलों को 'पोषक अनाज' घोषित किया गया है जिसमें तीन प्रमुख श्रीअन्न ज्वार, बाजरा और रागी शामिल हैं। पांच छोटे मिलेट्स कोदो, कुटकी, सांवा, कंगनी और चीना और दो छद्म (सूडो) मिलेट्स यानी कुट्टू (एक प्रकार का अनाज) और ऐमारैंथस।

वैज्ञानिक नाम	सामान्य नाम	देशी नाम
सोरघम बाइकलर	ग्रेट मिलेट	ज्वार
पेनिसेटम ग्लॉकम	पर्ल मिलेट	बाजरा
एलुसीन कोराकाना	फिंगर मिलेट	रागी
पस्पालम स्क्रोबिकुलटम	कोदो मिलेट	कोदो
पैनिकम सुमार्टेंस	लिटिल मिलेट	कुटकी
इचिनोक्लोआ फ्रुमेंटेसिया	बार्नयार्ड मिलेट	सांवा
सेटेरिया इटालिका	फॉक्सटेल मिलेट	कंगनी
पैनिकम मिलियासीम	प्रोसो मिलेट	चीना
फैगोपाइरम एस्कुलेंटम	बकव्हीट	कट्टू
ऐमारैंथस विरिडिस	ऐमारैंथस	बथुआ

मिलेट्स में खरपतवार नियंत्रण के लिए हाथ से निराई–गुड़ाई सबसे अधिक अपनाई जाती है। लेकिन मजदूरों की अनुपलब्धता और लगातार बढ़ती मजदूरों की मजदूरी ने किसानों को खरपतवार प्रबंधन के वैकल्पिक तरीकों की तलाश करने के लिए मजबूर कर दिया है। खरपतवार नियंत्रण के लिए शाकनाशी का उपयोग सबसे व्यवहार्य तरीका है, लेकिन पर्यावरण पर इसके दुष्प्रभाव और खरपतवार में शाकनाशी प्रतिरोध के विकास के कारण इनका निरंतर और अत्यधिक उपयोग उचित नही है। लघु मिलेट्स में खरपतवार नियंत्रण के लिए साहित्य में बहुत सीमित विकल्प उपलब्ध हैं। इस प्रकार, छोटे मिलेट्स में प्रभावी और कुशल खरपतवार प्रबंधन के लिए साइट और समय विशिष्ट आधार पर एकीकृत खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं का पालन किया जाना चाहिए। लघु मिलेट्स में एकीकृत खरपतवार प्रबंधन के लिए, बुआई के बाद शुरुआती 25 दिनों के दौरान 2–3 बार अंतर–खेती और 1–2 बार हाथ से निराई–गुड़ाई के अलावा आइसोप्रोट्यूरॉन/0.5 –1.0 किलोग्राम ए.आई./हेक्टेयर का उभरने से पहले छिड़काव और उगने के बाद का छिड़काव करें। प्रभावी खरपतवार नियंत्रण के लिए बुआई के 20–25 दिन बाद 2,4–डी सोडियम नमक 0.75–1.0 किग्रा ए.आई./हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

श्रीअन्न का देशवार उत्पादन 2022	मिलियन हेक्टेयर
भारत	38.40
नाइजर	21.85
चीन	8.75
नाइजीरिया	6.29
माली	5.98
सूडान	5.43
इथियोपिया	3.73
सेनेगल	3.55
बुर्किना फासो	2.94
चाड	2.25

श्रीअन्न का देशवार उत्पादन 2022

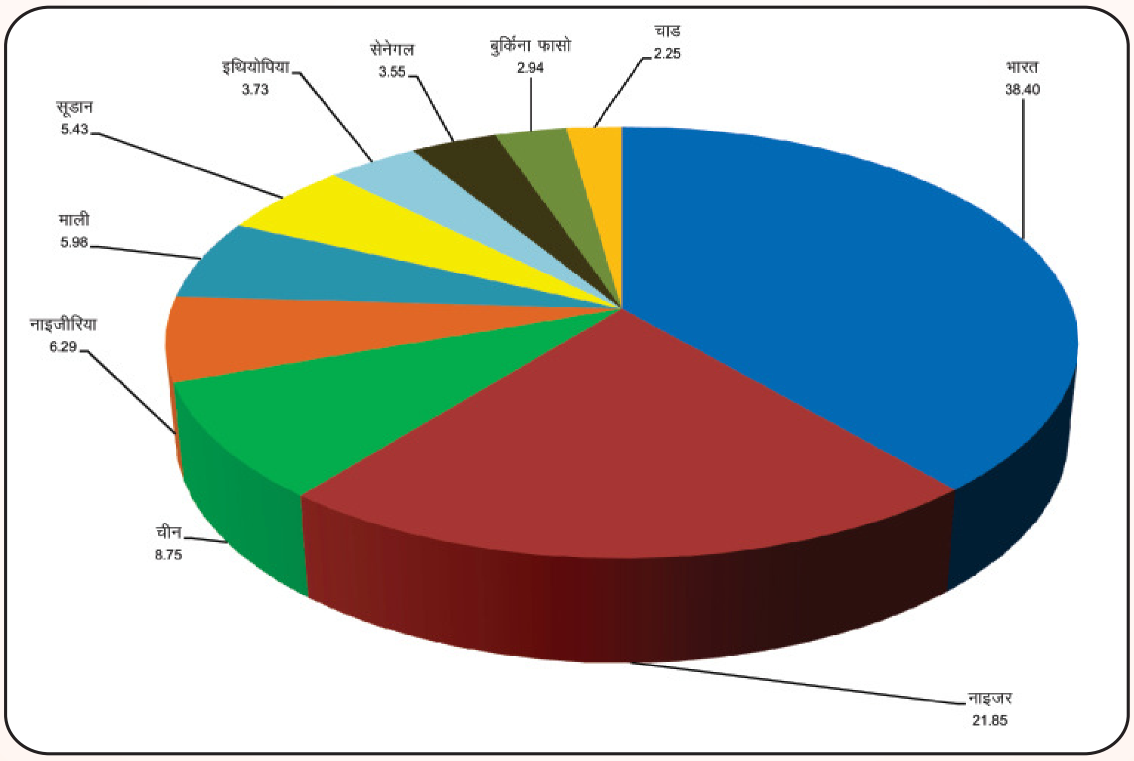

तालिका 1 : भारत में कुल मिलेट्स उत्पादन, क्षेत्रफल और उत्पादकता

वर्ष	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	उत्पादन (लाख टन)	उत्पादकता (किग्रा/हेक्टेयर)
2019–20	138.29	172.61	1248
2020–21	136.33	180.21	1322
2021–22	122.89	160.00	1302
2022–23	126.98	173.21	1364
2023–24	121.88	153.79	1262

स्त्रोत : कृषि एवं किसान कल्याण विभाग 2023

तालिका 2 : भारत में कुल मिलेट्स उत्पादन, क्षेत्रफल और उत्पादकता

राज्य	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)	उत्पादन (लाख टन)	उत्पादकता (किग्रा/हेक्टेयर)
	2023–24	2023–24	2023–24
राजस्थान	47.75	48.09	1007
महाराष्ट्र	20.82	17.15	824
कर्नाटक	14.25	17.49	1227
उत्तर प्रदेश	13.47	26.98	2003
मध्य प्रदेश	6.40	12.68	1982

स्त्रोत : कृषि एवं किसान कल्याण विभाग 2023

तालिका 3 : भारत में कुल श्रीअन्न उत्पादन, क्षेत्रफल और उत्पादकता

राज्य	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	उत्पादन (लाख टन)	उत्पादकता (किग्रा/हेक्टेयर)
2019–20	4.58	3.71	809
2020–21	4.44	3.47	781
2021–22	4.29	3.67	857
2022–23	4.28	3.84	898
2023–24	4.96	4.29	864

स्त्रोत : कृषि एवं किसान कल्याण विभाग 2023

तालिका 4 : भारत में कुल श्रीअन्न क्षेत्रफल, उत्पादन और उत्पादकता

राज्य	क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)	उत्पादन (लाख टन)	उत्पादकता (किग्रा/हेक्टेयर)
	2023–24	2023–24	2023–24
मध्य प्रदेश	1.65	1.47	892
हिमाचल प्रदेश	1.65	1.47	892
उत्तराखंड	0.40	0.60	1503
राजस्थान	0.40	0.60	1503
छत्तीसगढ़	0.48	0.19	390
कर्नाटक	0.30	0.23	760
महाराष्ट्र	0.45	0.22	477
ओडिशा	0.48	0.27	566
तमिलनाडू	0.24	0.33	1348
आंध्र प्रदेश	0.11	0.10	877

श्रीअन्न के फायदे :

श्रीअन्न पारिस्थितिक स्थितियों की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए अत्यधिक अनुकूल है और जो वर्षा आधारित क्षेत्रों में अच्छी तरह से पनपने की क्षमता रखता है। शुष्क जलवायु और कम पानी, उर्वरक और कीटनाशकों की आवश्यकता होती है। स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाली पौष्टिक फसल है। अन्य अनाजों की तुलना में इनमें बेहतर सूक्ष्म पोषक तत्व और बायोएक्टिव फ्लेवोनोइड होते हैं।

1. श्रीअन्न में ग्लाइसेमिक इंडेक्स (जीआई) कम होता है और यह मधुमेह की रोकथाम से भी जुड़ा होता है।
2. श्रीअन्न आयरन, जिंक और कैल्शियम जैसे खनिजों का अच्छा स्रोत हैं।
3. श्रीअन्न ग्लूटेन-मुक्त होता है और सीलिएक रोग के रोगियों द्वारा इसका सेवन किया जा सकता है।
4. श्रीअन्न हाइपर लिपिडेमिया और सीवीडी के जोखिम के प्रबंधन और रोकथाम पर लाभकारी प्रभाव डालता है।
5. श्रीअन्न वजन और उच्च रक्तचाप को कम करने में सहायक पाया जाता है।
6. श्रीअन्न अमीनो एसिड सामग्री को बढ़ाता है, और प्रोटीन की समग्र पाचनशक्ति को बढ़ाता है।
7. श्रीअन्न का उपयोग भोजन के साथ-साथ चारे के रूप में दोहरे उद्देश्यों के लिए किया जाता है,
8. श्रीअन्न की खेती कार्बन फुटप्रिंट को कम करने में मदद करती है।

2. खरपतवार वनस्पति संरचना

घास, सेज और चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार की विविध खरपतवार वनस्पतियाँ को विभिन्न कृषि-जलवायु परिस्थितियों में देखा गया है जो तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका : भारत के विभिन्न राज्यों में श्रीअन्न के प्रमुख खरपतवार

राज्य	खरपतवार	सेज	चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
आंध्र प्रदेश	*इचिनोक्लोवा कोलोना, सिनोडोन डेक्टाइलोन*	*साइपरस रोटंडस*	*सेलोसिया अर्जेन्टिया, यूफोर्बिया जेनिकुलता, कॉमेलिना बेंघालेंसिस, यूफोरबिया हिरटा, कोरकोरस ओलिटोरियस, डिगेरा अर्वेन्सिस*
बिहार	*डैक्टाइलोक्टेनियम एजिटियम, इचिनोक्लोआ कोलोना, सिनोडोन डैक्टिलॉन*	*साइपरस रोटंडस, फ्रिमब्रिस्टिलिस डिफिला*	*ल्यूकस एस्पेरा, ऐमारैंथस विरिडिस, कैनाबिस सैटिवा, फ्यूमरिया परविफ्लोरा, ट्रायनथेमा पोर्टुलाकैस्ट्रम, एग्रेटम कोनीजोइड्स*
गुजरात	*सिनोडोन डेक्टाइलोन, इचिलाक्लोआ कालोना, इचिनोक्लोआ क्रूस–गैली*	*साइपरस रोटंडस, सी. एस्कुलेंटस, एराग्रोस्टिस मेजर*	*क्रोजोफोरा रॉटलेरी, क न्वोल्वुलस अर्वेन्सिस, डिगेरा अर्वेन्सिस, कॉर्कोरस एस्टुआन्स*
हरियाणा	*पस्पालम पस्पालोइड्स, इचिनोक्लोवा कोलोना, डैक्टाइलोक्टेनियम एजिपिटियम*	*साइपरस रोटंडस*	*अल्हागिका मेलोरम, सेलोसिया अर्जेन्टिया, ट्रायनथेमा पोर्टुलाकैस्ट्रम*
हिमाचल प्रदेश	*डिजिटेरिया सेंगुइनैलिस, पैनिकम डाइकोटोमीफ़्लोरम, इचिनोक्लोआ कोलोना, ब्राचिएरिया रामोसा*	*साइपरस इरिया*	*अश्वक्सालिस लैटिफोलिया, इपोमिया पुरपुरिया, एग्रेटम कोनीज़ोइड्स, कोमेलिना बेंगालेंसिस*
कर्नाटक	*सिनोडोन डैक्टिलॉन, क्लोरिस बारबटा, डैक्टाइलोक्टेनियम एजिपटियम, एलुसीन इंडिका, इचिनोक्लोआ कोलोना, डिजिटेरिया मार्जिनेटा*	*साइपरस रोटंडस, साइपरस एस्कुलेंटस*	*कश्वमेलिना बेंघालेंसिस, सिनेब्राडिडेमा, यूफोरबिया हिरटा, लसड्ड़ेला नोडिफ़्लोरा, बोरेरिया आूटक्युलिस, सेलोसिया अर्जेटीया, एग्रेटम कोनज़ोइड्स, अल्टरनेथेरा सेसिलिस, ऐमारैंथस विरिडिस, ऐमारैंथस स्पिनोसस*
मध्य प्रदेश	*सिनोडोन डेक्टाइलोन, इचिनोक्लोआ कोलोना, इचिनोक्लोआ क्रूसगैली, सैकरम स्पान्टेनियम*	*साइपरस रोटंडस*	*ऐमारैंथस विरिडिस, ए. स्पिनोसस, कॉमेलिना बेंघालेंसिस, एक्लिप्टा अल्बा, फिलैंथस निरुरी, ल्यूकस एस्पेरा*
महाराष्ट्र	*सिनोडोन डेक्टाइलोन, इचिनोक्लोआ कोलोना, ब्रैचियारिया इरुसीफोर्मिस*	*साइपरस रोटंडस*	*सेलोसिया अर्जेन्टिया, स्ट्रिगा एशियाटिका, कोमेलिना बेंघालेंसिस, सोनचुस अर्वेन्सिस, स्ट्रिगा एशियाटिका*
ओडिशा	*इचिनोक्लोआ कोलोना, इस्केनेडेस्पायर, डिजिटेरिया सिलियारिस*	*साइपरस इरिया*	*एग्रेटम कोनीज़ोइड्स, सायनोटिसपीपी., सेलोसिया अर्जेन्टिया*
पंजाब	*सोरघम हेलपेंस, डिजिटेरिया सिलियारिस, एलुसीन एजिप्टिकम*	*साइपरस रोटंडस*	*सेलोसिया अर्जेन्टिया, फिलैन्थस निरूरी, क्लियोम विस्कोस*
राजस्थान	*एलुसीन इंडिका, इचिनोक्लोआ कोलोना*	*साइपरस रोटंडस*	*कॉमेलिना बेंघालेंसिस, ऐमारैंथस विरिडिस, ए. स्पिनोसस, डिगेरा अर्वेन्सिस*
तमिलनाडू	*इचिनोक्लोआ कोलोना, पैनिकम रिपेंस, सिनोडोन डैक्टिलॉन*	*साइपरस रोटंडस*	*ट्राइडैक्स प्रोकम्बेंस, ट्राइएंथेमा पोर्टुलाकैस्ट्रम, ऐमारैंथस विरिडिस। यूफोरबिया हिरटा, सेलोसिया अर्जेटीया, डिगेरा अर्वेन्सिस, बर्गियाकैपेंसिस*
उत्तर प्रदेश	*सिनोडोन डेक्टाइलोन, इचिनोक्लोआ कोलोना, ब्राचिएरिया रामोसा*	*साइपरस रोटंडस*	*एग्रेटम कोनीज़ोइड्स, कॉमेलिना बेंघालेंसिस, फिलैन्थस निरुरी, ट्रायनथेमा पोर्टुलाकैस्ट्रम*
उत्तराखंड	*पसपालम डिलेटटम, डिजिटेरिया सिलियारिस, सेटेरिया ग्लौका*	*साइपरस डिफॉर्मिस, साइपरस इरिया*	*गैललसोगा परविफ्लोरा, पूसकारिया कैपिटेटम, ऑक्सालिस लैटिफोलिया*
पश्चिम बंगाल	*सिनोडोन डैक्टिलॉन, डिजिटेरिया सेंगुइनैलिस*	*साइपरस रोटंडस*	*क्रोटन बोनप्लांडियनम, कॉमेलिना बेंघालेंसिस, सेलोसिया अर्जेन्टिया*

महापात्रा, एवं अन्य : जर्नल ऑफ एप्लाइड बायोलॉजी एंड बायोटेक्नोलॉजी वाल्यूम 1 एक्स.पीपी. 1/10/2023

3. फसल-खरपतवार प्रतियोगिता और उससे होने वाली हानियाँ

खरपतवार का संक्रमण

जब खरपतवार विभिन्न संसाधनों के लिए फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं फसल वृद्धि के पहले कुछ हफ्तों के दौरान मिलेट्स प्रकृति तौर से धीमी गति से बढ़ता है, श्रीअन्न में खरपतवार संक्रमण से होने वाले नुकसान में शामिल हैं 1. फसल की कम गुणवत्ता से सीधे उपज का नुकसान 2. फसल की गुणवत्ता में कमी से अप्रत्यक्ष उपज हानि 3. कटाई, खेती की अधिक लागत, और 4. खरपतवारों की कीटों और रोग रोगजनकों को आश्रय देने की क्षमता। श्रीअन्न फसल की वृद्धि के पहले 4–6 सप्ताह फसल–खरपतवार प्रतियोगिता के लिए सबसे महत्वपूर्ण समय होता हैं जो फसल की किस्म के आधार पर स्थिति–दर–स्थिति भिन्न होती है खरपतवारों की आक्रामक प्रकृति, फसलों की दूरी, खरपतवार की संक्रमण अवधि, पर्यावरणीय स्थितियाँ और प्रबंधन प्रथाएँ खरपतवार के संक्रमण से अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती है खरपतवार वैकल्पिक मेजबान के रूप में कीट और बीमारियाँ जो फसल को प्रभावित करती हैं खरपतवार, जैसे *पैनिकम रिपेंस, सेटेरिया इंटरमीडिया, ब्राचिएरिया डिस्टैच्या* और *साइपरस रोटंडस* सोरघम शूट फ्लाई के लिए वैकल्पिक मेजबान के रूप में कार्य करते हैं।

तालिका 5 : मिलेट्स में महत्वपूर्ण फसल-खरपतवार प्रतिस्पर्धा अवधि

फसल	महत्वपूर्ण फसल-खरपतवार अवधि (बुवाई के कुछ दिन बाद)
ज्वार	28–42
बाजरा	15–30
रागी	25–42
कोदो	30–35
कंगनी	20–35

महापात्रा, एवं अन्य: जर्नल ऑफ एप्लाइड बायोलॉजी एंड बायोटेक्नोलॉजी वाल्यूम 1 एक्स.पीपी. 1/10/2023

तालिका 6: मिलेट्स में खरपतवार संक्रमण के कारण उपज में हानि

फसल	उपज में कमी (%)
ज्वार	15–83
बाजरा	31–46
रागी	55–61
कोदो	30–50
कंगनी	35–51

महापात्रा, एवं अन्य: जर्नल ऑफ एप्लाइड बायोलॉजी एंड बायोटेक्नोलॉजी वाल्यूम 1 एक्स.पीपी. 1/10/2023

4. एकीकृत खरपतवार प्रबंधन के तरीके:

एकीकृत खरपतवार प्रबंधन खरपतवारों के प्रबंधन के लिए विभिन्न प्रकार की नियंत्रण तकनीकों का उपयोग करता है । खरपतवार लगातार बदलती प्रणाली के अनुकूल होने में कम सक्षम होते हैं जो कई अलग–अलग नियंत्रण प्रथाओं का उपयोग करते हैं, मिलेट्स में चयनात्मक शाकनाशियों की अनुपलब्धता के कारण शाकनाशी का उपयोग प्रतिबंधित है। मिलेट्स में खरपतवार प्रबंधन के विभिन्न विकल्प हो सकते हैं हम जानते हैं कि खरपतवार अवांछनीय हैं और इन्हें कृषि क्षेत्रों से पूरी तरह समाप्त नही किया जा सकता है। बल्कि उनकी आबादी को आर्थिक सीमा तक प्रबंधित और नियंत्रण में रखा जा सकता है फसल और खरपतवार के बीच विकास संसाधनों के लिए खरपतवार प्रतिस्पर्धा अवधि सबसे महत्वपूर्ण समय है मिलेट्स को प्रारंभिक विकास चरण , यानी 4–6 सप्ताह उच्च फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है इसलिए, मिलेट्स की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार का जोर कम करने के लिए उपयुक्त विधियाँ, जैसे निवारक विधि, यांत्रिक विधि, कृषिगत विधि तथा रासायनिक विधि अपनानी चाहिए, खरपतवार प्रबंधन के लिए एक एकीकृत दृष्टिकोण, अर्थात् बार–बार उपयोग के परिणामस्वरूप समय के साथ खरपतवारों में शाकनाशी प्रतिरोध विकसित हो जाता है, जिससे खरपतवार प्रबंधन चुनौतीपूर्ण हो जाता है। खरपतवारों को कम करने के लिए, एकीकृत खरपतवार प्रबंधन बनाया गया है, जो अलग–अलग प्रबंधन रणनीतियों को आपस में जोड़ता है। केवल एक विधि पर निर्भर रहना के, एकीकृत खरपतवार प्रबंधन इसके लिए समग्र दृष्टिकोण अपनाता है यांत्रिक, कृषिगत और रासायनिक पद्धतियाँ को एकीकृत करता है। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन हमेशा अन्य एकल दृष्टिकोणों की तुलना में बेहतर साबित होता है। खरपतवार प्रबंधन रणनीतियाँ नीचे दी गई हैं।

1. **निवारक विधि**
2. **कृषिगत विधि**
3. **यांत्रिक विधि**
4. **रासायनिक विधि**

निवारक विधि :

खरपतवार नियंत्रण में अक्सर प्रयुक्त होने वाली कहावत से हम सभी परिचित हैं ''एक साल में बीज बोना, सात साल में निराई करना।'' प्रकृति ने खरपतवारों को विभिन्न माध्यमों से अच्छी तरह फैलने की अपार क्षमता से सुसज्जित किया है जिससे विभिन्न स्थितियाँ और प्रतिकूल वातावरण में अच्छी तरह से पनप सकती है । जैसा कि हम जानते हैं कि

''रोकथाम इलाज से बेहतर है,'' इसलिए बेहतर है कि खरपतवार प्रजातियों को फसल भूमि में फैलने से रोका जाए। क्योंकि कोई भी खरपतवार नियंत्रण रणनीति समय पर न होने पर सफल नही होती जिसके लिए जरुरी पर्याप्त निवारक उपाय किये जाए। इसलिए, आर्थिक और व्यावहारिक व्यवहार्यता को ध्यान में रखते हुए, पूरे खेत में खरपतवार के बीज के फैलाव और वितरण के संभावित साधनों से बचना चाहिए। मिलेट्स में खरपतवारों से होने वाले खतरे को रोकने के लिए कुछ महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखना आवश्यक है जैसे की खरपतवार रहित बीज, स्वच्छ कृषि उपकरण, खरपतवार–बीज–मुक्त सिंचाई जल, सिंचाई नाली खरपतवार पौधों से मुक्त होना चाहिए, अच्छी तरह से विघटित खाद या फार्म यार्ड खाद का प्रयोग करें और खेत की स्वच्छता एवं रखरखाव का विशेष ध्यान रखें।

कृषिगत विधि:

खरपतवार नियंत्रण के कृषिगत तरीके पर्यावरण के अनुकूल हैं ये विधियाँ जो खड़ी फसल में फसल के दौरान अपनाई जाती हैं विभिन्न सस्य प्रबंधन जैसे पौधों की संख्या के माध्यम से, बीज दर, फसल अंतराल प्रबंधन, अंतरफसल, फसल चक्र, मल्चिंग, समय प्रबंधन के से सिंचाई की विधि एवं पोषक तत्व का प्रबंधन आदि अंतरफसलें उगाना जैसे मूंग, लोबिया, सोयाबीन और मूंगफली प्रारंभिक अवधि के दौरान अपनी उच्च वृद्धि दर से खरपतवार की आबादी को कम कर सकते हैं। पौधों को पर्याप्त धूप नहीं मिल पाती और अंततः खरपतवारों को ख़त्म कर देती है इसी प्रकार, बीज दर में वृद्धि या कम अंतराल और जड़ क्षेत्र में नाइट्रोजन का प्रयोग पौधे की शक्ति में वृद्धि करता है जो पौधे को खरपतवारों की तुलना में अधिक प्रतिस्पर्धी क्षमता वाले पर्याप्त विकास संसाधनों का उपयोग करने में सक्षम बनाती है

खरपतवार नियंत्रण की स्टेल सीड बेड तकनीक का विकास शाकनाशी के उपयोग से पहले किया गया था। यह खरपतवार के बीजों को अंकुरित होने और इच्छित फसल बोने से पहले दिखाई देने का अवसर और समय देकर मिट्टी के बीज बैंक या मात्रा को कम करता है। एक बार खरपतवार दिखाई देने के बाद, उन्हें विभिन्न तरीकों से आसानी से खत्म किया जा सकता है जो फसल बोने से पहले इस चक्र को कई बार दोहराया जा सकता है। इस विधि द्वारा खरपतवार के बीज की मात्रा को जल्दी कम करने से बाकी समय के लिए खरपतवार निकालने की आवश्यकता कम हो जाती है, और कुछ मामलों में यह रासायनिक खरपतवार नियंत्रण विधियों के समान ही काम करता है।

खेत में कार्बनिक पदार्थों जैसे फसलों के अवशेष, सूखी राख, सूखी पत्तियां या प्लास्टिक की तरह की फिल्म को इस तरह से बिछाना कि खेत की नमी ज्यादा दिनों तक बनी रहे, खरपतवारों की रोकथाम हो और मिट्टी की सूक्ष्म जलवायु को हम अपने अनुसार ढाल सकें, पलवार या मल्चिंग कहलाती है.

यांत्रिक विधि:

खरपतवार नियंत्रण की यांत्रिक विधि श्रीअन्न के खेत से खरपतवारों को हटाने के लिए उपयोग की जाती है। यह खरपतवार नियंत्रण के प्रभावी तरीकों में से एक है जो फसल वृद्धि की वांछित अवधि के दौरान खरपतवारों का नियंत्रण सुनिश्चित करता है खरपतवार प्रचुर मात्रा में बीज उत्पादन करते है बीज जमीन पर गिरकर कई दिनों से लेकर वर्षों तक सुसुप्तावस्थ में रहते हैं और अनुकूल वातावरण मिलने पर अंकुरित होते हैं कई खरपतवार वानस्पतिक प्रवर्धन के माध्यम से फैलते हैं जैसे कि जड़ों, प्रकंदों और बल्बों के रूप में जो मिट्टी के अंदर साल–दर–साल जीवित रहते हैं यांत्रिक खरपतवार नियंत्रण की विधि खरपतवार के बीज को मिट्टी में दबाने, खरपतवार के पौधे और वानस्पतिक प्रजनकों को हटाना में भी मदद करती है अंततः खेत में खरपतवार का प्रकोप कम हो जाता है जिसके परिणाम स्वरूप फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा कम होने से फसल की उपज में वृद्धि होती है। यांत्रिक विधि में हाथ से निराई–गुड़ाई, गर्मियों में गहरी जुताई, परती–मौसम जुताई और उथली जुताई शामिल है। मिलेट् मुख्य रूप से अर्धशुष्क क्षेत्रों में उगाया जाता है जहां अंतरवर्तीय खेती मिट्टी की नमी के संरक्षण में मदद करती है।

रासायनिक विधि:

रासायनिक विधि खरपतवार नियंत्रण की सबसे आसान और लोकप्रिय विधि है क्योंकि यह लागत, समय, श्रम बचाती है साथ ही साथ खरपतवारों को प्रभावी ढंग और कुशलता से नियंत्रित करती है। खरपतवार प्रबंधन में शाकनाशी नियंत्रण सबसे महत्वपूर्ण उपकरण माना जाता है प्रभावी नियंत्रण से फसल की वृद्धि शुरू से ही तेज हो जाती है, जिससे फसल को बाद में उगने वाले खरपतवारों की तुलना में प्रतिस्पर्धात्मक लाभ मिलता है। शाकनाशी को लागू करने के समय के आधार पर तीन श्रेणियाँ में बांटा गया है फसल बोने से पहले, फसलें बोने के बाद खरपतवार निकलने से पहले खरपतवार निकलने के बाद प्रयोग करें लेकिन अन्य छोटे मिलेट्स के लिए साहित्य सीमित है। हालाँकि, प्रभावी खरपतवार नियंत्रण के लिए अनुशंसित शाकनाशी अलग–अलग हैं मिलेट्स तालिका में दिखाया गया है।

तालिका : मिलेट्स में खरपतवार नियंत्रण के लिए अनुशंसित शाकनाशी, शाकनाशी मिश्रण और शाकनाशी का क्रमिक अनुप्रयोग (उभरने से पहले: 0-3) (उद्भव के बाद: 18-22 DAS)

फसल	शाकनाशी	मात्रा (ग्राम/हेक्टेयर)	प्रयोग का समय (बोनी और रोपाई के बाद)	खरपतवार नियंत्रित
ज्वार और बाजरा	एट्राजिन	500 गा/हे.	0-2	घास चौड़ी पत्ती और स्ट्रिगा
	पेंडिमेथालिन	675 गा/हे.	0-2	घास और चौड़ी पत्ती
	मेटोक्लोर	500 गा/हे.	0-2	घास
	2-4 डी	500 गा/हे.	0-2	चौड़ी पत्ती
फिंगर मिलेट, बार्नयार्ड मिलेट और लिटिल मिलेट	एट्राजिन	500 गा/हे.	0-2	घास और चौड़ी पत्ती
	ऑक्सीफ्लोरफेन	100 गा/हे.	0-2	घास और चौड़ी पत्ती
	मेट्रिब्यूजिन	150 गा/हे.	0-2	घास और चौड़ी पत्ती
	पायराजोसल्फ्यूरॉन	20 गा/हे.	0-2	चौड़ी पत्ती, सेज और घास
	मेटसल्फ्यूरॉन	4 गा/हे.	0-2	चौड़ी पत्ती
	2-4 डी	500 गा/हे.	0-2	चौड़ी पत्ती
कोदो मिलेट	मेट्रिब्यूजिन	150 गा/हे.	0-2	घास और चौड़ी पत्ती
	पायराजोसल्फ्यूरॉन	20 गा/हे.	0-2	चौड़ी पत्ती, सेज और घास
	पेंडिमेथालिन	675 गा/हे.	0-2	घास और चौड़ी पत्ती
	मेटसल्फ्यूरॉन	4 गा/हे.	0-2	घास और चौड़ी पत्ती
	2-4 डी	500 गा/हे.	0-2	चौड़ी पत्ती

आर.पी. दुबे' और जे.एस. मिश्र : श्रीअन्न में एकीकृत खरपतवार प्रबंधन तृतीय अंतर्राष्ट्रीय खरपतवार सम्मेलन, एएयू, आनंद, गुजरात, भारत 2022 पृ.सं. 13-16

भविष्य की जरूरतें : मिलेट्स को ''पोषक अनाज'' माना जाता है क्योंकि इसमें उच्च पोषक गुण होते हैं जलवायु परिवर्तन के कारण आने वाली परिस्थितियों को देखते हुए इन्हें भविष्य का भोजन होने का दावा किया जा रहा है।इसलिए, भविष्य में, मिलेट्स की मांग अधिक होगी जिससे अधिक उत्पादन की गारंटी होगी। साधनहीन किसान मिलेट्स फसलों को मुख्य रूप से सीमांत भूमि पर वर्षा ऋतु में उगता है जहां फसलों का बेहतर प्रबंधन न होने से उत्पादन कम हो जाता है । अधिकतर अनाजों की उन्नत खरपतवार प्रजातियाँ हैं लघु मिलेट्स के रूप में खेती की जाती है। इसलिए, फसल वृद्धि के प्रारंभिक चरण में, फसलों और खरपतवारों के बीच अंतर करना बहुत मुश्किल है। खरपतवार फसल को विभिन्न विकास संसाधनों को मिट्टी से वंचित कर देते हैं गंभीर फसल-खरपतवार प्रतिस्पर्धा से नमी और पोषक तत्व की होने से उपज में भारी कमी आती है। इसलिए खरपतवारों की पहचान प्रारंभिक अवस्था में कर लेनी चाहिए और फसल के खेत से निकल देना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, कम-ऊर्जा इनपुट मैनुअल या मैकेनिकल वीडर को विकसित करना चाहिए इसमें कोई संदेह नहीं कि शाकनाशी खरपतवारों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करते हैं मिलेट्स में ऐसा देखा गया है कि रासायनिक खरपतवार नियंत्रण उपयोग नहीं किया जाता है। हालाँकि, अधिकांश किसान शाकनाशियों के उचित उपयोग से अनभिज्ञ हैं उनका यह विचार है की शाकनाशी मिलेट्स के अनाज और चारे की गुणवत्ता को कम कर देंगे। बदलते जलवायु परिदृश्य को देखते हुए। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए जो विभिन्न कृषि-जलवायु क्षेत्रों के लिए आर्थिक और पारिस्थितिक रूप से टिकाऊ होंगे।

निष्कर्ष : खरपतवार अन्य फसलों की तरह मिलेट फसल को भी प्रभावित करते हैं। भविष्य में, बाजार में मिलेट्स की भारी मांग रहने वाली है। धीमी प्रारंभिक वृद्धि और व्यापक अंतराल मिलेट में गंभीर फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा के प्रमुख कारण है। सामान्य तौर पर, मिलेट में फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा के लिए बोनी के 20-35 दिन महत्वपूर्ण होते है । मिलेट में खरपतवारों के प्रभावी और टिकाऊ प्रबंधन के लिए खरपतवार नियंत्रण की किसी एक विधि पर निर्भर रहने के बजाय सभी संभावित तरीकों को एकीकृत करना आवश्यक है। एकीकृत खरपतवार प्रबंधन

खरपतवार परिवर्तन और खरपतवारों में प्रतिरोध के विकास की समस्याओं को प्रभावी ढंग से दूर कर सकता है और खरपतवार बीज बैंक को कम कर सकता है और किसी भी आर्थिक नुकसान से बचने के लिए आर्थिक सीमा स्तर से नीचे के खरपतवारों का प्रबंधन कर सकता है। फसल विकास के शुरुआती अवस्था में खरपतवार को पहिचान पाना बहुत ही कठिन कार्य होता है और उस अवस्था में खरपतवार पानी और उर्वरक जैसे महंगे बाहरी आदानों को भारी हानि पंहुचते है खरपतवार के कारण मिलेट फसल में होने वाले नुकसान और संक्रमण को कम करने के लिए उचित समय पर खरपतवार प्रबंधन रणनीतियाँ जैसे निवारक विधि, यांत्रिक विधि, कृषिगत विधि और रासायनिक विधियों को अपनाया जाना चाहिए जिससे खरपतवार विविधता, जलवायु परिस्थितियों और फसल पारिस्थितिकी की मौजूदा स्थिति के अनुसार एकीकृत तरीके से खरपतवार का प्रबंधन किया जा सके । कृषि के वर्तमान युग में, खरपतवार प्रबंधन का उपयोग बड़े पैमाने पर खरपतवार नियंत्रण के लिए किया जा सकता है जैसे रोबोट, ड्रोन प्रौद्योगिकी और मशीन लर्निंग को नियोजित करने वाले क्षेत्र, जो न केवल शाकनाशी के उपयोग के पर्यावरणीय प्रभाव को कम करेगा बल्कि बड़े मिलेट उत्पादकों के लिए लाभप्रद होगा । एकीकृत खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए जो विभिन्न कृषि–जलवायु क्षेत्रों के लिए आर्थिक और पारिस्थितिक रूप से टिकाऊ होंगे।

संदर्भ:

1. आर.पी. दुबे और जे.एस. मिश्रा : मिलेट में एकीकृत खरपतवार प्रबंधन तृतीय अंतर्राष्ट्रीय खरपतवार सम्मेलन, एएयू, आनंद, गुजरात, भारत 2022 पीपी 13–16
2. महापात्रा, एवं अन्य : जर्नल ऑफ एप्लाइड बायोलॉजी एंड बायोटेक्नोलॉजी वॉल्यूम। एक्स (XX), पीपी. 1–10, 2023
3. स्त्रोत कृषि एवं किसान कल्याण विभाग 2023
4. भारतीय मिलेट अनुसंधान संस्थान (आई आई एमआर)
5. कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा)
6. आर.पी.जोशी एवं अन्य कोदो मिलेट (पास्पलम स्क्रोबिकुलटम) का उत्पादन और विपणन अभिविन्यास प्रदर्शन के लाभार्थी पर्यावरण, औषध विज्ञान और जीवन विज्ञान बुलेटिन, खंड 8 (6) मई 2019
7. योगिता घरड़े एवं अन्य भारत में खरपतवारों के कारण कृषि में उपज एवं आर्थिक हानि का आकलन फसल सुरक्षा 107 : 12–18

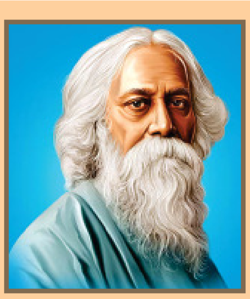

भारतीय भाषाएं नदियां है और हिन्दी महानदी।

– रवीन्द्रनाथ ठाकुर

धान की खेती में खरपतवार प्रबंधन रणनीतियाँ : मणिपुर से एक केस स्टडी

लिडिया जिमिक[1], लैशराम कांता सिंह[1], एस. रोमा देवी[2] एवं रामगोपाल लाहा[3]

[1]भाकृअनुप–कृषि विज्ञान केंद्र, इंफाल पश्चिम

[2]भाकृअनुप –कृषि विज्ञान केंद्र, चुरंदपुर

[3]भाकृअनुप उत्तर पूर्वी पर्वतीय क्षेत्र कृषि अनुसंधान परिसर, मणिपुर केंद्र, लाम्फेलपत, इंफाल

खरपतवार प्रबंधन धान की खेती का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जो फसल की उपज, गुणवत्ता और किसानों की आजीविका को प्रभावित करता है। भारत के मणिपुर में, धान की खेती कृषि गतिविधि की आधारशिला है। हालाँकि, खरपतवार का प्रकोप इस क्षेत्र में चावल की उत्पादकता के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती है। यह लेख आधुनिक तकनीकों के साथ-साथ पारंपरिक प्रथाओं पर विचार करते हुए, मणिपुर में किसानों द्वारा अपनाई गई विभिन्न खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों की पड़ताल करता है। एक व्यापक समीक्षा और केस अध्ययन विश्लेषण के माध्यम से, हम मणिपुर की धान की खेती के संदर्भ में इन रणनीतियों की प्रभावशीलता, स्थिरता और सामाजिक-आर्थिक निहितार्थों की गहराई से जांच करते हैं।

1. परिचय :

धान की खेती भारत के मणिपुर के कृषि परिदृश्य का केंद्र है। राज्य की विविध स्थलाकृति, अनुकूल जलवायु और समृद्ध सांस्कृतिक विरासत, धान की खेती के लिए एक मजबूत आधारशिला है। हालाँकि, खरपतवार का प्रकोप धान की उत्पादकता के लिए लगातार खतरा बना रहता है, जिसके लिए प्रभावी खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों की आवश्यकता है। खरपतवार पोषक तत्वों, सूरज की रोशनी और पानी जैसे आवश्यक संसाधनों के लिए धान के पौधों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे उपज को नुकसान होता है और फसल की गुणवत्ता से समझौता होता है। इसके अलावा, खरपतवार नियंत्रण की पारंपरिक विधि, हाथ से निराई करना, किसानों के लिए श्रम-गहन और आर्थिक रूप से बोझिल है। इसलिए, मणिपुर के कृषि संदर्भ के अनुरूप टिकाऊ और कुशल खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं का अनुपालन करने की आवश्यकता बढ़ रही है।

2. मणिपुर में धान के खेतों में खरपतवार की प्रजातियां:

खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों पर चर्चा करने से पहले, मणिपुर मे धान के खेतों में प्रचलित खरपतवार के प्रकारों को समझना आवश्यक है। इस क्षेत्र में आम खरपतवारों में बार्नयार्ड घास/उरीचक (*इकाइनोक्लोआ क्रसगैली*), नटसेज/सेम्बैंग काओथम (*साइपेरस रोटंडस*), चावल कटी घास/हूप (*लीर्सिया हेक्सेंड्रा*) शामिल हैं, बरमूडा घास/तिंगथौ (*साइनोडोन डैक्टिलॉन*), स्टिंग घास/चुरा नेपी (*एराग्रोस्टिस यूनिओलोइड्स*), केकड़ा घास/नगारेंग नेपी (*सैजिटेरिया सेंगुइनालिस*), स्पर्ज/पखांग लीटन (*एलुसीन इंडिका*), एरोहेड/कौखा (*सजेटेरिया सजिटिफोलिया*), छोटा मोनोकोरिया/काक्ला (*मोनोकोरिया वेजिनेलिस*) अपोनोगेटोन/नगनुचिन (*अपोनोगेटोन म्यूटन्स*), वुड सोरेल/ब्रिनम येन्सिल (*ऑक्सालिस कोरिम्बोसा*), फाल्स डेज़ी/उची सुंबल (*एक्लिप्टा प्रोस्ट्रेटा*), और वॉटर प्रिमरोज़/ईशिंग कुंडो (*लुडविजिया पार्विक्लोरा*)। ये खरपतवार जोरदार वृद्धि और प्रतिस्पर्धी क्षमता प्रदर्शित करते हैं, जिससे धान की खेती के लिए महत्वपूर्ण चुनौतियाँ पैदा होती हैं। *इकाइनोक्लोआ क्रसगैली* (बार्नयार्ड घास), *साइपैरस रोटंडस* (बैंगनी नटसेज), *एक्लिप्टा प्रोस्ट्रेटा* (झूठी डेज़ी), और *लुडविजिया पार्विक्लोरा*। (जल प्राइमरोज़)। ये खरपतवार जोरदार वृद्धि और प्रतिस्पर्धी क्षमता प्रदर्शित करते हैं, जिससे धान की खेती के लिए महत्वपूर्ण चुनौतियाँ पैदा होती हैं।

3. पारंपरिक खरपतवार प्रबंधन प्रथाएँ:

ऐतिहासिक रूप से, मणिपुर में किसान पारंपरिक खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं पर भरोसा करते हैं, मुख्य रूप से हंसिया और कुदाल जैसे हाथ के औजारों का उपयोग करके निराई करते हैं। इस श्रम-गहन विधि में धान के खेतों से खरपतवार को भौतिक रूप से हटाना शामिल है, जिसमें अक्सर पारिवारिक श्रम या किराए के श्रमिकों को नियोजित किया जाता है। जबकि हाथ से निराई करना सांस्कृतिक रूप से अंतर्निहित है और चयनात्मक खरपतवार हटाने की अनुमति देता है, इसकी प्रभावशीलता सीमित है, खासकर समकालीन कृषि में प्रचलित श्रम की कमी के साथ।

4. आधुनिक खरपतवार प्रबंधन तकनीकें:

हाल के वर्षों में, मणिपुरी किसानों के बीच आधुनिक खरपतवार प्रबंधन तकनीकों को अपनाने का चलन बढ़ा है। इन तकनीकों में रासायनिक, यांत्रिक, सस्य और जैविक तरीकों सहित कई रणनीतियाँ शामिल हैं।

- **रासायनिक खरपतवार नियंत्रण :** मणिपुर के धान के खेतों में खरपतवार नियंत्रण के लिए शाकनाशियों का उपयोग आम हो गया है। श्रम आवश्यकताओं को कम करते हुए प्रमुख खरपतवार प्रजातियों को नियंत्रित करने में उनकी प्रभावकारिता के कारण पूर्व-अंकुरण ऑक्साडियाज़ोन और अंकुरण पश्चात वाले बिस्पाइरिबैक-सोडियम जैसे शाकनाशी रसायनों को व्यापक रूप से अपनाया गया है। हालाँकि, अंधाधुंध शाकनाशियों के उपयोग से

पर्यावरण प्रदूषण, शाकनाशी प्रतिरोधकता और मानव स्वास्थ्य जोखिमों के बारे में चिंताएँ बढ़ जाती हैं। इसके अलावा, छोटे पैमाने के किसानों को अक्सर जड़ी-बूटियों तक पहुँचने और उन्हें खरीदने में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिससे रासायनिक खरपतवार नियंत्रण विधियों को व्यापक रूप से अपनाना सीमित हो जाता है।

- **यांत्रिक खरपतवार नियंत्रण:** यांत्रिक खरपतवार नियंत्रण में चावल के खेतों में यांत्रिक रूप से खरपतवारों को उखाड़ने या दफनाने के लिए रोटरी वीडर, कोनो वीडर और पावर टिलर जैसे उपकरणों का उपयोग शामिल है। ये उपकरण हाथ से निराई करने, श्रम लागत को कम करने और परिचालन दक्षता बढ़ाने के लिए एक लागत प्रभावी विकल्प प्रदान करते हैं। हालाँकि, मणिपुर में संसाधन की कमी वाले किसानों के लिए मशीनीकृत खरपतवार नियंत्रण उपकरणों की उपलब्धता और सामर्थ्य बाधा बनी हुई है।
- **सस्य क्रिया द्वारा खरपतवार नियंत्रण:** सस्य क्रिया द्वारा खरपतवार नियंत्रण प्रथाओं का उद्देश्य कृषि संबंधी हेरफेर के माध्यम से खरपतवार के विकास और प्रसार को बाधित करना है। खरपतवार के उद्भव और प्रतिस्पर्धा को कम करने के लिए भूमि की उचित तैयारी, समय पर बुआई, फसल चक्र और अंतरफसल जैसी तकनीकों की सिफारशें की जाती है। इसके अतिरिक्त, स्टेल सीड बेड् क्यारी तैयार करने जैसी प्रथाएं, जहां फसल बोने से पहले खरपतवार के अंकुरण को प्रोत्साहित करने के लिए खेत में पानी भर दिया जाता है, लक्षित खरपतवार नियंत्रण उपायों की अनुमति देती है। सस्य खरपतवार नियंत्रण रणनीतियाँ पारिस्थितिक संतुलन को बढ़ावा देती हैं और टिकाऊ कृषि के सिद्धांतों के अनुरूप बाहरी लागत पर निर्भरता को कम करती हैं।
- **जैविक खरपतवार नियंत्रण:** जैविक खरपतवार नियंत्रण में खरपतवार की आबादी को कम करने के लिए जीवित जीवों जैसे कीड़े, रोगजनकों और एलीलोपैथिक पौधों का उपयोग शामिल है। मणिपुर में, वॉटर प्रिमरोज़ (*लुडविजिया पार्विक्लोरा*) जैसी आक्रामक खरपतवार प्रजातियों के प्रबंधन में घुन और कवक जैसे जैव नियंत्रण एजेंटों की क्षमता का पता लगाने के प्रयास किए गए हैं। जबकि जैविक नियंत्रण दीर्घकालिक खरपतवार प्रबंधन का वादा करता है, इसके कार्यान्वयन के लिए अनपेक्षित परिणामों को रोकने के लिए सावधानीपूर्वक पारिस्थितिक विचारों की आवश्यकता होती है।
- **एकीकृत खरपतवार प्रबंधन:** एकीकृत खरपतवार प्रबंधन पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव को कम करते हुए प्रभावकारिता को अधिकतम करने के लिए कई खरपतवार नियंत्रण रणनीतियों को एकीकृत करता है। मणिपुर में, आई.डब्लू.एम. दृष्टिकोण ध्यान आकर्षित कर रहे हैं क्योंकि किसान खरपतवार संक्रमण के लिए व्यापक समाधान तलाश रहे हैं। रासायनिक, यांत्रिक, सस्य और जैविक तरीकों को सहक्रियात्मक तरीके से जोड़कर, आई.डब्लू.एम. स्थानीय कृषि पारिस्थितिकी प्रणालियों के अनुरूप खरपतवार प्रबंधन के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करता है।
- **सामाजिक-आर्थिक विचार:** मणिपुर में खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों को अपनाना विभिन्न सामाजिक-आर्थिक कारकों से प्रभावित होता है, जिसमें भूमि का आकार, संसाधनों तक पहुंच, श्रम उपलब्धता और बाजार की गतिशीलता शामिल है। सीमित भूमि वाले छोटे किसानों को अक्सर मशीनीकृत उपकरणों तक पहुंचने और कृषि रसायन खरीदने में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिससे उनके खरपतवार प्रबंधन के विकल्प सीमित हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त, सामाजिक-सांस्कृतिक कारक और किसानों की धारणाएं खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, जो संदर्भ-विशिष्ट हस्तक्षेप और भागीदारी दृष्टिकोण की आवश्यकता पर प्रकाश डालती हैं।
- **चुनौतियाँ और अवसर:** खरपतवार प्रबंधन रणनीतियों की विविधता उपलब्ध होने के बावजूद, मणिपुर ने धान की खेती में कई चुनौतियाँ बनी हुई हैं। ऋण, विस्तार सेवाओं और कृषि आदानों तक सीमित पहुंच छोटे किसानों के बीच आधुनिक खरपतवार नियंत्रण प्रौद्योगिकियों को अपनाने में बाधा डालती है। इसके अलावा, स्थायी खरपतवार प्रबंधन प्रथाओं और उनके लाभों के बारे में जागरूकता की कमी के कारण लक्षित क्षमता-निर्माण पहल और ज्ञान प्रसार प्रयासों की आवश्यकता होती है। हालाँकि, इन चुनौतियों के बीच, सार्वजनिक-निजी भागीदारी, किसान सहकारी समितियों और अनुसंधान- विस्तार लिंकेज सहित नवाचार और सहयोग के अवसर भी हैं।

निष्कर्ष :

मणिपुर की धान की खेती में खरपतवार प्रबंधन एक बहुआयामी चुनौती है, जिसके लिए एक संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जो पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक नवाचारों के साथ एकीकृत करता है। एक एकीकृत ढांचे के भीतर रासायनिक, यांत्रिक, सस्य और जैविक रणनीतियों के संयोजन का लाभ उठाकर, किसान स्थायी कृषि को बढ़ावा देने और पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य की रक्षा करते हुए खरपतवारों का प्रभावी ढंग से प्रबंधन कर सकते हैं। हालाँकि, मणिपुर में खरपतवार प्रबंधन हस्तक्षेपों को व्यापक रूप से अपनाने और सफलता के लिए सामाजिक-आर्थिक बाधाओं को दूर करना और हितधारक जुड़ाव को बढ़ावा देना आवश्यक है। जैसे-जैसे कृषि परिदृश्य विकसित हो रहा है, मणिपुर ने धान की खेती में खरपतवार प्रबंधन के भविष्य को आकार देने में निरंतर अनुसंधान, नीति समर्थन और सामुदायिक भागीदारी महत्वपूर्ण होगी।

विदेशी खरपतवारो का वन्यजीवों पर प्रभावः एक चिंता का विषय

अर्चना अनोखे[1], मोगली रम्मैया[2], बबिता यादव[2] एवं दीक्षा एम.जी.[1]
[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद–निदेशालय खरपतवार अनुसंधान, जबलपुर (म.प्र.)
[2]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

परिचय :

कृषि में लगने वाले कुल नुकसान का लगभग एक तिहाई हिस्सा खरपतवारों के कारण होता है। व्यावसायिक कृषि में खरपतवारों के कारण 5 प्रतिशत तक उपज हानि, अर्ध–व्यावसायिक कृषि में 10:, निर्वाह खेती में 20 प्रतिशत और शुष्क भूमि कृषि में 37–79 प्रतिशत तक उपज हानि होने की जानकारी है। उपज हानि का सबसे कम अनुमान 10 प्रतिशत होने पर भी लगभग 25 मिलियन टन खाद्यान्न का नुकसान होगा, जिसकी कीमत लगभग 13 बिलियन अमेरिकी डॉलर बताई गई है। भारत में 826 खरपतवार प्रजातियों से उपज में कमी का कारण बनने की सूचना है, जिनमें से 80 को बहुत गंभीर और 198 को गंभीर खरपतवार माना जाता है इस लेख में हमने आक्रामक खरपतवार प्रजातियों और फसल उत्पादन में उनकी कमियों पर चर्चा की है।

आक्रामक विदेशी प्रजातियां या इनवैसिव एलियन प्रजाति (IAS) का प्रसार पिछले कुछ वर्षों में तेजी से बढ़ रहा है, जो अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और वैश्विक परिवहन उद्योग की वजह से बढ़ रहा है। प्रकृति के संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय संघ (IUCN) एक विदेशी प्रजाति को एक प्रजाति, उप–प्रजाति, या निम्न वर्गीकरण के रूप में परिभाषित करता है जिसे उसकी प्राकृतिक सीमा और फैलाव क्षमता के बाहर पेश किया गया है, यानी उस सीमा के बाहर जो वह स्वाभाविक रूप से रखता है या मानवों द्वारा जान बूझकर या अनजाने में परिचय या देखभाल के बिना कब्जा नहीं कर सकता है (IUCN 2000)। एक विदेशी प्रजाति जिसे विदेशी, परिचित, विदेशी, गैर–स्वदेशी या गैर–देशी के रूप में भी जाना जाता है, उसे मनुष्यों द्वारा जान बूझकर या अन्यथा मानवीय एजेंसी के माध्यम से या गलती से एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में फैलाया गया है। एक विदेशी प्रजाति जब आक्रामक हो जाती है तब जैविक विविधता, खाद्य और आर्थिक सुरक्षा, और मानव स्वास्थ्य और कल्याण को खतरा देती है। भारत, एक तेजी से बढ़ती विकासशील अर्थव्यवस्था वाला देश है जो अपनी मेगा जैव विविधता और चार वैश्विक जैव विविधता हॉटस्पॉट के लिए जानी जाती है, ने अभी तक इस प्रकृति का एक व्यापक राष्ट्रीय संश्लेषण नहीं देखा है। भारत में कई हज़ार गैर–देशी प्रजातियों के दस्तावेजीकरण के बावजूद, यहां तक कि सबसे पुराना अनुमान भी 173 आक्रामक पौधों की प्रजातियों की उपस्थिति का संकेत देते हैं।

हाल के अध्ययनों में, यह उल्लेख किया गया था कि आक्रामक विदेशी प्रजातियां हमारी देशी वनस्पति और वन्यजीवों के लिए खतरा हैं। उदाहरण के लिए, एक विशाल संवेदनशील पौधे, *मिमोसा डिप्लोट्राईका* (*Mimosa diplotricha*) का आक्रमण असम के काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान में एक बड़ा खतरा बनकर उभरा है। मिमोसा की पेचीदा और कांटेदार वृद्धि जंगली जानवरों जैसे एक सिंग वाले गैंडे जो एक लुप्तप्राय प्रजाति है, एशियाई हाथी, दलदली हिरण, और बाघ, के लिए भोजन और अन्य संसाधनों तक पहुंच और गति को बाधित करती है। पूर्वोत्तर भारत में काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान। इसी तरह, रस्तोगी और अन्य द्वारा किए गए हाल के एक अध्ययन में बताया गया है कि *लैंटाना कैमरा* और *पोगोस्टेमोन बेंगालेंसिस* के सह–अस्तित्व के परिणामस्वरूप देशी पौधों की संरचना में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ, पौधों की समृद्धि और बहुतायत में गिरावट, मिट्टी में पोटेशियम की मात्रा में वृद्धि हुई, देशी प्रमुख वृक्ष प्रजातियों के पुनर्जनन में गिरावट, खाद्य चारा पौधों की बहुतायत में गिरावट और मध्य प्रदेश के कान्हा टाइगर रिज़र्व में देशी चारे पर शाकाहारी दबाव में वृद्धि। अध्ययन बताता है कि इस तरह के कई आक्रमणों के बार–बार होने से भविष्य में शाकाहारी पशुओं की आबादी में गिरावट आ सकती है। पश्चिमी घाट जैव विविधता के मामले में देश के सबसे समृद्ध वनों में से एक है, और संभवतः एशियाई हाथी, गौर, बाघ और जंगली कुत्ते का सबसे बड़ा प्रजनन स्थल है। वायनाड वन्यजीव अभयारण्य में हाथी का आवास तेजी से सेंना स्पेक्टेबिलिस (*Senna spectabilis*) द्वारा लिया जा रहा है और देशी वनस्पति को बाधित कर रहा है। यह तेजी से बढ़ता है, और जानवर इसके पत्ते नहीं खाते हैं क्योंकि कुचलने पर यह दुर्गंध देता है। जहां इस पौधे की बहुतायत होती है वहाँ हाथी और अन्य जानवर उन क्षेत्रों से बचते हैं।

भारत में वर्तमान में IAS से निपटने के लिए कोई विशेष कानून या नीति नही है। पौध संरक्षण संगरोध और भंडार निदेशालय (DPPQ&S) विदेशी कीटों, कवक या अन्य विषाणु प्रजातियों के प्रवेश, स्थापना और

प्रसार को रोकने के लिए पौधा संगरोध (भारत में आयात का विनियमन) आदेश, 2003 के माध्यम से विनाशकारी कीट और पेस्ट अधिनियम (DIPA), 1914, भारत में कृषि, बागवानी और वन वृक्षों की रक्षा के लिए के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार है।

हालांकि, आक्रामक प्रजातियों के प्रभाव के बारे में वैश्विक जागरूकता व्यापक है, फिर भी कम विकसित और विकासशील देशों में उन्हें नियंत्रित करने के प्रयास अक्सर न्यूनतम होते हैं। भारत के मामले में, लगभग 1,600 आक्रामक पौधों की प्रजातियां पहले ही शुरू हो चुकी हैं, और यह संख्या भविष्य में बढ़ने की उम्मीद है। इसलिए, सावधानीपूर्वक निगरानी, विदेशी पौधों की प्रजातियों की स्थिति की समय पर रिपोर्टिंग और हमारे देशी वनस्पतियों और जीवों को बचाने के लिए किए जाने वाले संभावित कार्यों की आवश्यकता है।

आक्रामक विदेशी प्रजातियों के प्रवेश और प्रसार को रोकने के लिए निम्नलिखित कार्रवाई की जानी चाहिए:

- आक्रामक प्रजातियों के प्रबंधन के लिए एक व्यापक राष्ट्रीय विनियामक ढांचा स्थापित करना, जिसमें कड़े संगरोध प्रोटोकॉल शामिल हैं।
- पड़ोसी क्षेत्रों में आक्रामक प्रजातियों के प्रसार को प्रभावी ढंग से रोकने के लिए घरेलू संगरोध प्रक्रियाओं को बढ़ाना।
- आकस्मिक आगमन को रोकने और आक्रामक प्रजातियों के प्रसार को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने के लिए क्रॉस–सेक्टर सहयोग को बढ़ावा देना।
- पूरे भारत में आक्रामक प्रजातियों के रिपोर्ट किए गए मामलों को सूचीबद्ध करने के लिए एक राष्ट्रीय डेटाबेस बनाना और बनाए रखना।
- आक्रामक प्रजातियों के नए दर्शन को तुरंत संबोधित करने के लिए एक उत्तरदायी प्रारंभिक चेतावनी और जागरूकता प्रणाली विकसित करना।
- आक्रामक प्रजातियों के प्रबंधन पर आधारभूत शोध का समर्थन करने के लिए प्राथमिकता वाले धन का आवंटन करना।
- विभिन्न स्तरों पर क्षमता निर्माण पहल की सुविधा, विशेष रूप से आक्रामक प्रजातियों के प्रबंधन के लिए स्थानीय स्तर की गतिविधियों पर जोर देने के साथ।
- जहां भी संभव हो, स्थानीय रूप से अनुकूलित देशी प्रजातियों का उपयोग करके, क्षीण पारिस्थितिकी प्रणालियों की बहाली को प्रोत्साहित करना।
- समान संगरोध उपायों को अपनाने और आक्रामक विदेशी प्रजातियों को रोकने के लिए क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ावा देना।

हिन्दी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है।

- स्वामी दयानंद

मृदा का खरपतवार आधारित फाइटोरेमेडिएशन

सुरभि होता[1], योगिता घरड़े[1], जीतेन्द्र कुमार सोनी[1] एवं कृष्ण कुमार मौर्य[2]
[1]भाकृअनुप- खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]भाकृअनुप- राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, क्षेत्रीय केंद्र, जोरहाट (असम)

सारांश

फाइटोरेमेडिएशन, एक ऐसी तकनीक है, जिसमे पौधों का उपयोग कर मृदा को उपचारित किया जाता है। यह मृदा प्रदूषण के लिए एक स्थायी समाधान प्रदान करने वाला एक उभरता हुआ क्षेत्र है। खरपतवार, जिन्हें अक्सर अवांछित माना जाता है, मिट्टी के उपचार के लिए एक अद्वितीय और बड़े पैमाने पर प्रयुक्त संसाधन प्रस्तुत करते हैं। यह लेख फाइटोरेमेडिएशन में खरपतवारों की क्षमता, उनके लाभों, क्रिया विधि और सफल अनुप्रयोगों के व्यष्टि अध्ययन पर प्रकाश डालता है। खरपतवारों की प्राकृतिक लचीलापन और अनुकूलन क्षमता का उपयोग करके, हम इन अवांछित पौधों को मिट्टी प्रदूषण की दशा में प्रभावशाली उपायों के रूप में उपयोग कर सकते हैं।

परिचय

मृदा का प्रदूषण एक गंभीर पर्यावरणीय मुद्दा है, जो औद्योगिक गतिविधियों, कृषि गतिविधियाँ और अपशिष्ट पदार्थों के अनुचित निस्तारण से होता है। मिट्टी के उपचार के पारंपरिक तरीके, जैसे कि खुदाई और रासायनिक उपचार, अक्सर महंगे और पर्यावरण के लिए आक्रामक होते हैं। फाइटोरेमेडिएशन, प्रदूषकों को अवशोषित करने, अलग करने और डिटॉक्सीफाई करने के लिए पौधों का उपयोग, एक पर्यावरण-अनुकूल और लागत-प्रभावी विकल्प के रूप में उभरा है। फाइटोरेमेडिएशन के लिए उपयोग किए जाने वाले पौधों की विविध श्रेणी में, खरपतवार -जिन्हें आमतौर पर अवांछनीय माना जाता है, अप्रत्याशित रूप से लाभकारी साबित हो रहे हैं।

विवरण

मृदा प्रदूषण का दायरा

मृदाप्रदूषण कई स्रोतों से उत्पन्न होता है, जिसमें औद्योगिक निस्तारण, कृषि अपवाह, अपशिष्ट का अनुचित निपटान और आकस्मिक रिसाव शामिल हैं। इन प्रदूषक में भारी धातुएँ जैसे सीसा, कैडमियम और पारा, कार्बनिक प्रदूषक जैसे कीटनाशक, हाइड्रोकार्बन और सॉल्वैंट्स और अन्य खतरनाक पदार्थ शामिल हो सकते हैं। दूषित मिट्टी मानव स्वास्थ्य, वन्यजीवों और पर्यावरण के लिए गंभीर जोखिम पैदा करती है, क्योंकि वे खाद्य श्रृंखला में विषाक्त पदार्थों के संचय, पारिस्थितिकी तंत्र के क्षरण और जल आपूर्ति के प्रदूषण का कारण बन सकती हैं। मिट्टी की खुदाई और निष्कासन, तापीय उपचार और रासायनिक स्थिरीकरण जैसे पारंपरिक उपचार विधियाँ अक्सर महंगी और श्रम-गहन होती हैं और पर्यावरण को और अस्तव्यस्तकर सकती हैं। फाइटोरेमेडिएशन एक हरित विकल्प प्रदान करता है, जो पौधों की प्राकृतिक प्रक्रियाओं का लाभ उठाकर लागत-प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल तरीके से दूषित मिट्टी को ठीक करता है।

खरपतवार-आधारित फाइटोरेमेडिएशन के लाभ

अनुकूलनशीलता और कठोरता

खरपतवार कठोर वातावरण में पनपने की अपनी क्षमता के लिए जाने जाते हैं, जहाँ कई अन्य पौधे विफल हो सकते हैं। यह लचीलापन उन्हें फाइटोरेमेडिएशन के लिए विशेष रूप से उपयुक्त बनाता है, क्योंकि दूषित स्थलों में अक्सर खराब मिट्टी की गुणवत्ता और प्रतिकूल बढ़ती परिस्थितियाँ होती हैं। खरपतवार खुद को जल्दी से स्थापित कर सकते हैं, एक तेज़ आवरण प्रदान करते हैं जो मिट्टी को स्थिर करता है और कटाव को कम करता है, जबकि साथ ही साथ दूषित पदार्थों के अवशोषण और क्षरण की प्रक्रिया शुरू करता है।

तेजी से विकास

कई खरपतवार तेजी से बढ़ते हैं, जो फाइटोरेमेडिएशन परियोजनाओं के लिए फायदेमंद है, जिन्हें तेजी से परिणाम की आवश्यकता होती है। तेजी से बढ़ने वाले पौधे कम समय में बड़े क्षेत्रों को कवर कर सकते हैं, जिससे उपचार प्रक्रिया की दक्षता बढ़ जाती है। इस त्वरित विकास का मतलब यह भी है कि एक ही बढ़ते मौसम में कई कटाई की जा सकती है, जिससे दूषित पदार्थों को हटाने के लिए खरपतवारों की कई साइकिल प्राप्त होती है।

उच्च बायोमास उत्पादन

खरपतवार आमतौर पर जमीन के ऊपर और नीचे दोनों जगह बायोमास की एक महत्वपूर्ण मात्रा का उत्पादन करते हैं। यह उच्च बायोमास उत्पादन फाइटोरेमेडिएशन के लिए फायदेमंद है क्योंकि यह पौधे की दूषित पदार्थों को अवशोषित करने और उन्हें अलग करने की क्षमता को बढ़ाता है। व्यापक जड़ प्रणाली मिट्टी की बड़ी मात्रा का पता लगा सकती है, अधिक प्रदूषकों तक पहुँच सकती है और उन्हें अवशोषित कर सकती है, जबकि प्रचुर मात्रा में पत्ते हवा में मौजूद दूषित पदार्थों को पकड़ सकते हैं और मिट्टी के स्थिरीकरण को बढ़ा सकते हैं।

लागत-प्रभावशीलता:

फाइटोरेमेडिएशन के लिए खरपतवारों का उपयोग करने का एक प्रमुख लाभ उनकी लागत-प्रभावशीलता है। खरपतवार आम तौर पर तेज़ी से फैलते हैं और उन्हें न्यूनतम रखरखाव की आवश्यकता होती है, जिससे फाइटोरेमेडिएशन परियोजनाओं से जुड़ी कुल लागत कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त, क्योंकि खरपतवारों को अक्सर अवांछनीय और प्रचुर मात्रा में देखा जाता है, इसलिए उपचार प्रयासों के लिए पौधों की सामग्री प्राप्त करना अपेक्षाकृत सस्ता है।

खरपतवार-आधारित फाइटोरेमेडिएशन की क्रिया विधि :

खरपतवार कई तंत्रों के माध्यम से दूषित मिट्टी को ठीक कर सकते

हैं, जिनमें से प्रत्येक अपने जीव विज्ञान और पारिस्थितिकी के विभिन्न पहलुओं का लाभ उठाता है। इन तंत्रों में फाइटोएक्स्ट्रैक्शन, फाइटोस्टेबिलाइज़ेशन, फाइटोडिग्रेडेशन और राइज़ोफ़िल्ट्रेशन शामिल हैं।

फाइटोएक्स्ट्रैक्शन :

फाइटोएक्स्ट्रैक्शन में पौधे की जड़ों द्वारा मिट्टी से दूषित पदार्थों को अवशोषित करना, उसके बाद पौधे के ऊपरी ऊतकों में उनका स्थानांतरण और संचयन शामिल है। थ्लास्पी कैरुलेसेन्स (अल्पाइन पेनीक्रेस) और एलिसम म्यूरेल जैसे हाइपरएक्यूमुलेटर खरपतवार, कैडमियम, लजक और निकल जैसी भारी धातुओं को निकालने में विशेष रूप से प्रभावी हैं। ये पौधे अपने ऊतकों में धातुओं की उच्च सांद्रता जमा कर सकते हैं, जिन्हें फिर काटा जा सकता है और साइट से हटाया जा सकता है, जिससे मिट्टी में कुल दूषित पदार्थों का भार कम हो जाता है।

फाइटोस्टेबिलाइज़ेशन:

फाइटोस्टेबिलाइज़ेशन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा पौधे मिट्टी में दूषित पदार्थों को स्थिर करते हैं, उनके प्रसार को रोकते हैं और उनकी जैव उपलब्धता को कम करते हैं। व्यापक जड़ प्रणाली वाले खरपतवार दूषित मिट्टी को स्थिर कर सकते हैं, जिससे प्रदूषकों का क्षरण और रिसाव कम हो सकता है। उदाहरण के लिए, कुछ घास, जैसे कि वेटिवेरियाज़िज़ानियोइड्स (वेटीवर घास), दूषित मिट्टी में सीसा और आर्सेनिक को स्थिर करने में प्रभावी हैं, जिससे इन धातुओं को जल निकायों में प्रवेश करने या अन्य पौधों द्वारा अवशोषित होने से रोका जा सकता है।

फाइटोडिग्रेडेशन:

फाइटोडिग्रेडेशन में चयापचय प्रक्रियाओं के माध्यम से पौधों द्वारा कार्बनिक प्रदूषकों का विघटन शामिल है। खरपतवार कई प्रकार के कार्बनिक प्रदूषकों, जैसे कि कीटनाशकों, हाइड्रोकार्बन और सॉल्वैंट्स को चयापचय कर सकते हैं, उन्हें कम हानिकारक यौगिकों में परिवर्तित कर सकते हैं। यह प्रक्रिया पौधे के ऊतकों में या राइज़ोस्फीयर (जड़ गतिविधि से प्रभावित मिट्टी का क्षेत्र) में हो सकती है, जहाँ जड़ से निकलने वाले स्राव सूक्ष्मजीवी गतिविधि को उत्तेजित करते हैं और दूषित पदार्थों के क्षरण को बढ़ाते हैं।

राइज़ोफ़िल्ट्रेशन:

राइज़ोफ़िल्ट्रेशन जलीय स्रोतों से दूषित पदार्थों को अवशोषित करने, केंद्रित करने और अवक्षेपित करने के लिए पौधों की जड़ों का उपयोग है। व्यापक जड़ प्रणाली वाले खरपतवार मिट्टी में पानी से दूषित पदार्थों को प्रभावी ढंग से फ़िल्टर कर सकते हैं, प्रदूषित जल निकायों को साफ कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, जलकुंभी (इचोर्निया क्रैसिप्स) पानी से भारी धातुओं और कार्बनिक प्रदूषकों को हटाने की अपनी क्षमता के लिए जानी जाती है, जो इसे राइजोफिल्ट्रेशन के लिए एक मूल्यवान उपकरण बनाती है।

क्रं.	खरपतवार	प्रदूषक	क्रिया विधि	व्यष्टि अध्ययन
1.	लास्पी कैरुलेसेन्स (*अल्पाइन पेनीक्रेस*)	जिंक, कैडमियम और निकल	फाइटोएक्सट्रैक्शन	जिंक और कैडमियम–दूषित क्षेत्रों में अल्पाइनपेनीक्रेस का उपयोग किया गया है, जिससे मिट्टी में इन धातुओं की सांद्रता में काफी कमी आई है।
2.	रीडकैनरी ग्रास (*फलारिस अरुंडिनेशिया*)	सीसा और आर्सेनिक	फाइटोस्टेबिलाइज़ेशन	इस घास का उपयोग खनन स्थलों में टेलिंग को स्थिर करने और आसपास के वातावरण में भारी धातुओं के प्रसार को रोकने के लिए किया गया है।
3.	पिगवीड (*अमरंथस रेट्रोफ्लेक्सस*)	सीसा, कैडमियम और निकल	फाइटोएक्सट्रैक्शन	पिगवीड का उपयोग औद्योगिक क्षेत्रों में भारी धातुओं को निकालने, प्रदूषण के स्तर को कम करने और मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए किया गया है।
4.	कॉमनटैन्सी (*टैनेसेटमवल्गेरे*)	कीटनाशक और हाइड्रोकार्बन	फाइटोडिग्रेडेशन	कीटनाशक प्रदूषण वाले कृषि क्षेत्रों में, आम टैन्सी का उपयोग अवशिष्ट रसायनों को कम करने, मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार करने और विषाक्तता को कम करने के लिए किया गया है।
5.	क्लोवर (*ट्राइफोलियम स्पीशीज*)	भारी धातुएँ और नाइट्रेट	फाइटोएक्सट्रैक्शन और फाइटोडिग्रेडेशन	क्लोवर का उपयोग कृषि अपवाह क्षेत्रों में नाइट्रेटप्रदूषण को कम करने और फाइटोरेमेडिएशन और नाइट्रोजन फिक्सेशन के माध्यम से मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाने के लिए किया गया है।
6.	कोचिया (*कोचिया स्कोपरिया*)	क्रोमियम और सेलेनियम	फाइटोएक्सट्रैक्शन और फाइटोस्टेबिलाइज़ेशन	कोचिया का उपयोग लवणीय और धातु–दूषित मिट्टी में लवणता के स्तर को कम करने और भारी धातुओं को स्थिर करने, भविष्य में उपयोग के लिए मिट्टी की स्थिति में सुधार करने के लिए किया गया है।
7.	बरमूडा घास (*सिनोडोन डेक्टीलॉन*)	सीसा और आर्सेनिक	फाइटोस्टेबिलाइज़ेशन	भारी धातुओं से दूषित मिट्टी को स्थिर करने के लिए औद्योगिक और खनन क्षेत्रों में बरमूडा घास का उपयोग किया गया है, जिससे उन्हें आस–पास की भूमि और जल निकायों में जाने से रोका जा सके।

चुनौतियाँ और सीमाएँ

खरपतवार– आधारित फाइटोरेमेडिएशन कई लाभ तो प्रदान करता है, परन्तु दूसरी ओर कई चुनौतियाँ और सीमाएँ भी हैं जिन्हें समझने एवं उनके प्रबंधन करने की आवश्यकता है:–

1. **प्रदूषक जैव उपलब्धता:** फाइटोरेमेडिएशन की प्रभावशीलता मिट्टी में प्रदूषकों की जैवउपलब्धता पर निर्भर करती है। कुछ प्रदूषक मिट्टी के कणों से कसकर बंधे हो सकते हैं या ऐसे रूपों में मौजूद हो सकते हैं जिन्हें पौधे आसानी से ग्रहण नहीं कर पाते हैं। मिट्टी के सुधार, जैसे कि चेलेटिंग एजेंट, का उपयोग प्रदूषकों की जैव उपलब्धता बढ़ाने के लिए किया जा सकता है, लेकिन इससे उपचार परियोजनाओं की लागत और जटिलता बढ़ सकती है।

2. **प्रदूषक विषाक्तता:** प्रदूषकों की उच्च सांद्रता पौधों के लिए विषाक्त हो सकती है, जिससे उनकी वृद्धि बाधित हो सकती है और फाइटोरेमेडिएशन में से उनकी प्रभावशीलता कम हो सकती है। कुछ खरपतवारों में कुछ प्रदूषकों के प्रति अधिक सहनशीलता हो सकती है, लेकिन अन्य के लिए सहनशील पौधों की प्रजातियों के उपयोग या प्रदूषक विषाक्तता को कम करने के उपायों के कार्यान्वयन की आवश्यकता हो सकती है।

3. **दूषित बायोमास का निपटान:** फाइटोरेमेडिएशन में उपयोग किए जाने वाले खरपतवारों का बायोमास उनके द्वारा अवशोषित किए गए प्रदूषकों से दूषित हो सकता है। पर्यावरण में दूषित पदार्थों को फिर से छोड़ने से रोकने के लिए इस दूषित बायोमास का उचित निपटान या उपचार आवश्यक है। इसमें खाद बनाना, जलाना या मूल्यवान धातुओं को निकालना और पुनः प्राप्त करना जैसी विधियाँ शामिल हो सकती हैं।

4. **साइट–विशिष्ट परिस्थितियाँ:** फाइटोरेमेडिएशन की सफलता विभिन्न साइट–विशिष्ट कारकों, जैसे मिट्टी के प्रकार, जलवायु और दूषित पदार्थों की प्रकृति पर निर्भर करती है। खरपतवार–आधारित फाइटोरेमेडिएशन की उपयुक्तता निर्धारित करने और उपयुक्त पौधों की प्रजातियों और उपचार तकनीकों का चयन करने के लिए एक संपूर्ण साइट मूल्यांकन आवश्यक है।

5. **दीर्घकालिक निगरानी और रखरखाव:** फाइटोरेमेडिएशन आम तौर पर पारंपरिक उपचार विधियों की तुलना में एक धीमी प्रक्रिया है, और इसकी प्रभावशीलता सुनिश्चित करने के लिए दीर्घकालिक निगरानी और रखरखाव की आवश्यकता होती है। प्रगति की निगरानी करने और उपचार रणनीति में कोई भी आवश्यक समायोजन करने के लिए दूषित पदार्थों के स्तर के लिए मिट्टी और पौधे की नियमित निगरानी आवश्यक है।

6. **विनियामक और सार्वजनिक स्वीकृति:** फाइटोरेमेडिएशन परियोजनाओं को विनियामक चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है और पर्यावरण एजेंसियों से अनुमोदन की आवश्यकता हो सकती है। इसके अतिरिक्त, उपचार के लिए खरपतवारों के उपयोग की सार्वजनिक धारणा और स्वीकृति भिन्न हो सकती है, और ऐसी परियोजनाओं के लिए समर्थन प्राप्त करने के लिए प्रभावी संचार और शिक्षा प्रयासों की आवश्यकता है।

भविष्य की दिशाएँ और अवसर

चुनौतियों के बावजूद, खरपतवार– आधारित फाइटोरेमेडिएशन को आगे बढ़ाने और इसके अनुप्रयोगों का विस्तार करने के लिए कई संभावनाएं और अवसर हैं:–

1. **जेनेटिक इंजीनियरिंग और प्लांट ब्रीडिंग:** जेनेटिक इंजीनियलरग और प्लांट ब्रीलडग में प्रगति का उपयोग फाइटोरेमेडिएशन क्षमताओं के साथ खरपतवार प्रजातियों को विकसित करने के लिए किया जा सकता है। इसमें प्रदूषकों के प्रति उनकी सहनशीलता बढ़ाना, प्रदूषकों के उनके अवशोषण और संचय में सुधार करना और उनकी वृद्धि और बायोमास उत्पादन को बढ़ाना शामिल है।

2. **सहक्रियात्मक दृष्टिकोण:** खरपतवार– आधारित फाइटोरेमेडिएशन को अन्य उपचार तकनीकों, जैसे कि माइक्रोबियलबायोरेमेडिएशन या रासायनिक संशोधनों के साथ संयोजित करने से मिट्टी की सफाई की समग्र प्रभावशीलता बढ़ सकती है। सहक्रियात्मक ष्टिकोण व्यक्तिगत विधियों की सीमाओं को संबोधित कर सकते हैं और मिट्टी के प्रदूषण के लिए अधिक व्यापक समाधान प्रदान कर सकते हैं।

3. **उभरते हुए प्रदूषकों का फाइटोरेमेडिएशन:** जैसे–जैसे नए प्रदूषक सामने आ रहे हैं, जैसे कि फार्मास्यूटिकल्स, व्यक्तिगत देखभाल उत्पाद और नैनोमटेरियल, इन पदार्थों के उपचार में खरपतवारों की क्षमता का पता लगाने की आवश्यकता बढ़ रही है। खरपतवारों द्वारा उभरते हुए प्रदूषकों के अवशोषण, संचय और क्षरण पर शोध फाइटोरेमेडिएशन के दायरे का विस्तार करने में मदद कर सकता है।

4. **एकीकृत भूमि प्रबंधन:** कृषि वानिकी, शहरी हरियाली और आवास बहाली जैसे व्यापक भूमि प्रबंधन प्रथाओं में खरपतवार आधारित फाइटोरेमेडिएशन को एकीकृत करने से अतिरिक्त पर्यावरणीय और सामाजिक–आूथक लाभ मिल सकते हैं। इसमें मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार, जैव विविधता को बढ़ाना और समुदायों के लिए हरित स्थान बनाना शामिल है।

5. **नीति और प्रोत्साहन:** फाइटोरेमेडिएशन परियोजनाओं का समर्थन करने के लिए नीतियों और प्रोत्साहनों का विकास खरपतवार आधारित उपचार प्रथाओं को अपनाने को प्रोत्साहित कर सकता है। इसमें अनुसंधान और विकास के लिए वित्त पोषण, उपचार परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता और फाइटोरेमेडिएशन के उपयोग को सुविधाजनक बनाने वाले विनियामक ढांचे शामिल हैं।

निष्कर्ष :

खरपतवार आधारित फाइटोरेमेडिएशन मिट्टी के प्रदूषण को कम करने के लिए एक आशाजनक, सतत दृष्टिकोण प्रदान करता है।

खरपतवारों की प्राकृतिक शक्तियों–अनुकूलनशीलता, तेजी से विकास और लचीलापन–का लाभ उठाकर हम मिट्टी के उपचार के लिए लागत प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल समाधान विकसित कर सकते हैं। जैसे–जैसे इस क्षेत्र में अनुसंधान आगे बढ़ता है, खरपतवार आधारित फाइटोरेमेडिएशन के संभावित अनुप्रयोगों का विस्तार होने की संभावना है, जो दुनिया भर में स्वच्छ, स्वस्थ मिट्टी के लिए नई आशा प्रदान करेगा। इन अवांछित पौधों को विरोधियों के बजाय सहयोगी के रूप में अपनाना मिट्टी के प्रदूषण से निपटने के लिए नवीन रणनीतियों का मार्ग प्रशस्त कर सकता है, जो अंततः अधिक टिकाऊ भविष्य में योगदान देता है। निरंतर अनुसंधान, सहयोग और नीति समर्थन के माध्यम से, खरपतवार आधारित फाइटोरेमेडिएशन हमारे पर्यावरण को बहाल करने और उसकी रक्षा करने के वैश्विक प्रयास में एक मूल्यवान कारकबन सकता है।

खण्ड-ख

कृत्रिम बुद्धिमता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) का महत्व एवं आधुनिक कृषि में बढ़ती उपयोगिता

पी.के. सिंह, चेतन सी.आर., योगिता घरडे, एस.के. पारे, इति राठी एवं संतोष कुमार
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

सम्पूर्ण विश्व बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लक्ष्य से कृषि उत्पादकता को बढ़ाने की दिशा में नयी–नयी तकनीकों का उपयोग हो रहा है। संयुक्त राष्ट्र के एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2050 तक विश्व की जनसंख्या में दो अरब लोगों की वृद्धि होने की संभावना है जिनके पोषण के लिए खाद्य उत्पादकता में लगभग 60 प्रतिशत तक वृद्धि करना आवश्यक है। कृत्रिम बुद्धिमता तथा मशीन लर्निंग की सहायता से इन आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है। वास्तव में कृत्रिम बुद्धिमता, मशीन लर्निंग तथा आईओटी एसेंसर अल्गोरिदम के लिए रियल टाइम आंकड़े प्रदान करते हैं। इससे न केवल कृषि उत्पादकता को बढ़ाने में सहायता मिलेगी, अपितु इनके प्रयोग से हम कृषि उत्पादों की उत्पादन लागत में भी काफी हद तक कमी ला सकते हैं। मौसम, धूप, वर्षा, पशु–पक्षी, कीटों व रोगजनकों के प्रवासी पैटर्न, उर्वरकों व कीटनाशी रसायनों का उपयोग, सिंचाई चक्र सभी उत्पादकता को प्रभावित करते हैं, जिसके बारे में सटीक जानकारी कृत्रिम बुद्धिमता की सहायता से प्राप्त की जा सकती है।

प्राचीन काल से ही यांत्रिक या "औपचारिक" तर्क का अध्ययन गणितज्ञों के साथ शुरू हो चुका था। गणितीय तर्क के अध्ययन द्वारा "एलन ट्यूरिंग" नामक कंप्यूटर वैज्ञानिक ने "कंप्यूटर सिद्धान्त" को जन्म दिया जिसके अनुसार मशीन, "0" (शून्य) और "1"(एक) जैसे सरल चिन्ह को जोड़–तोड़ के कोई भी बोधगम्य गणना की जा सकती है। यद्यपि जॉन मैकार्थी को कृत्रिम बुद्धिमता का जनक माना जाता है जो 1950 के दशक में ही आरंभ हो चुका था, परंतु 1970 के दशक में इसके महत्व को नई पहचान मिली। जापान देश का इस परियोजना को आगे बढ़ाने में अहम योगदान रहा है जिसने वर्ष 1981 में "फिफ्थ जेनरेशन" नामक योजना का श्री गणेश किया। "फिफ्थ जनरेशन" या पाँचवी पीढ़ी की अवधि 1984–1990 तक मानी गई है। इस पीढ़ी में वर्तमान के कम्प्यूटरों को और भविष्य में आने वाले कम्प्यूटरों को सम्मिलित किया गया है। इससे कम्प्यूटर मनुष्यों की भांति कार्य करते हैं। वे C, C++ तथा जावा जैसी उच्च–स्तरीय भाषा का उपयोग करते हैं। इसमें सुपरकम्प्यूटर के विकास के लिए दस वर्षीय कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुति के बाद अन्य दशों ने भी इस ओर ध्यान दिया। ब्रिटिश सरकार ने भी "एल्वी" नामक एक परियोजना बनाई थी, जो सूचना प्रौद्योगिकी का एक अनुसंधान कार्यक्रम था जो वर्ष 1984 से 1990 के मध्य तक चला। यह कार्यक्रम जापानी पाँचवी जेनरेशन परियोजना की प्रतिक्रिया थी, जिसका उद्देश्य वृहद स्तर पर समानांतर कम्प्यूटिंग/प्रसंस्करण का उपयोग करके एक कम्प्यूटर बनाना था। कार्यक्रम रोबोटिक्स जैसी किसी विशिष्ट तकनीक पर केंद्रित नही था, बल्कि यह ज्ञान इंजीनियरिंग में अनुसंधान का समर्थन करना था। इसके बाद यूरोपीय संघ के देशों ने भी एस्प्रिट नामक एक कार्यक्रम आरंभ किया। वर्ष 1983 में कुछ निजी संगठनों के संस्थानों ने संयुक्त रूप से कृत्रिम बुद्धिमता पर लागू होने वाली उन्नत तकनीकों जैसे–बहुत बड़े पैमाने पर एकीकृत सर्किट का विकास करने के लिए एक संघ माइक्रो–इलेक्ट्रोनिक्स एण्ड कम्प्यूटर टेक्नोलॉजी की स्थापना की।

कृत्रिम बुद्धि अनुसंधान के उद्देश्यों में तर्क, ज्ञान की योजना बनाने, सीखने, धारणा और वस्तुओं में हेरफेर करने की क्षमता आदि समाहित है। वर्तमान में, इस लक्ष्य तक पहुंचने के लिए सांख्यिकीय विधियों, कम्प्यूटेशनल बुद्धि और पारंपरिक खुफिया पद्धतियां सम्मिलित हैं। कृत्रिम बुद्धि, प्रौद्योगिकी उद्योग का अत्यंत महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य अंग बन चुका है। वर्तमान में आत्म–जागरूकता के लिए भी कृत्रिम बुद्धिमता मशीन तैयार करने का प्रयत्न हो रहा है। यह मशीने भीतर की भावनाओं की पहचान करने में सक्षम होगी। जैसे–जैसे कम्प्यूटर साइंस और तकनीक का विकास हो रहा है, वैसे ही कृत्रिम बुद्धिमता के क्षेत्र में भी नए–नए प्रयोग हो रहे हैं। आने वाले दिनों में कृत्रिम बुद्धिमता के क्षेत्र में कई और भी नवाचार देखने को मिल सकते हैं।

कृत्रिम बुद्धिमता के प्रकार

कृत्रिम बुद्धिमता को निम्नलिखित चार चरणों में वगीकृत किया जा सकता है।

1. **प्रतिक्रियाशील मशीनें**– ये मशीने स्थितियों पर प्रतिक्रिया कर सकती है। ये मशीने सभी संभावित विकल्पों का विश्लेषण करके सर्वश्रेष्ठ को चुनती है। परंतु ऐसी मशीनों में याद्दाश्त की कमी होती है। ये मशीनें भविष्य के अनुप्रयोगों को करने के लिए पिछले अनुभवों का उपयोग नही कर सकती है। जैसे कि एप्पल का सिरी और गूगल का वॉयस सिस्टम।
2. **परिसीमित मैमोरी**– ये कृत्रिम बुद्धिमता सिस्टम भविष्य के लोगों को सूचित करने के लिए पिछले अनुभवों का उपयोग करने में सक्षम हैं। सेल्फ ड्राइविंग वाहन इसका एक अच्छा उदाहरण है। ऐसे वाहनों में

स्वतः निर्णय लेने की प्रणाली होती है जिससे कि वाहन स्वतः ही लेन बदल लेने का निर्णय कर लेते हैं।

3. **मस्तिष्क का सिद्धांत**– इस प्रकार की तकनीक दूसरों को समझने के लिए संदर्भित होती है। जैसे कि इरादें, इच्छाएं और राय। यद्यपि इस प्रकार की कृत्रिम बुद्धिमता अभी तक मौजूद नही हैं।

4. **आत्म–जागरूकता**– आत्म–जागरूकता कृत्रिम बुद्धिमता का सबसे उच्चतम और परिष्कृत स्तर है। इस प्रकार की तकनीक में स्वयं की भावना, जागरूकता और चेतना होती है। हालांकि यह तकनीक अभी मौजूद नहीं है, इस पर कार्य प्रगति में है, लेकिन भविष्य मे उपलब्ध होने पर यह निश्चित रूप से क्रांतिकारी सिद्ध होगी।

वर्तमान समय में कृत्रिम बुद्धिमता की भारत में स्थिति

भारत में लगभग 40,000–42,000 कृत्रिम बुद्धिमता विशेषज्ञ वर्तमान में कार्यरत है। कर्नाटक की राजधानी बैंगलोर कृत्रिम बुद्धिमता का प्रमुख केंद्र बन चुकी है जहां लगभग एक हजार से भी अधिक कंपनियां कृत्रिम बुद्धिमता का प्रयोग अपने दिन–प्रतिदिन के कार्यों में सफलतापूर्वक कर रही है। आज समावेशी वित्तीय विकास में कृत्रिम बुद्धिमता तकनीक अत्यंत सफल सिद्ध हो रही है। जैसे कि कृषकों को सामयिक सलाह प्रदान करने और बढ़ती उत्पादकता की दिशा में अप्रत्याशित कारकों को सम्मिलित करने में कृत्रिम बुद्धिमता काफी उपयोगी सिद्ध हुआ है। भारत में किसानों एवं उनके परिवारों की अजीविका सुरक्षा सुनिश्चित करने में कृषि महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। भारत में कृषि तकनीक, स्टार्ट–अप जैसे क्रॉपइन, देहात, फसल तथा बीजक सदृश्य कंपनियां विभिन्न फसलों से अधिकाधिक उपज प्राप्त करने हेतु तकनीकी सहायता उपलब्ध करा रही हैं। क्रॉपइन एग्रीटेक के संस्थापक ने मौसम विश्लेषण तैयार करने के लिए स्मार्टफोन अनुप्रयोग विकसित किया है। कंपनी एप का प्रयोग करने वाले कृषकों को सटीक आंकड़े उपलब्ध कराने के लिए एआई तथा इंटरनेट ऑफ थिंग्स का उपयोग कर रही है। कंपनी ने लगभग 40 लाख किसानों की मदद की है। देहात भी किसानों के लिए ऑनलाइन कम्यूनिटी प्रदान करता है। मौसम पूर्वानुमान की रिपोर्ट, डेली क्रॉप रिमाइन्डर, फसल, कीट, मृदा एवं बीज को लेकर सलाह जैसे कई अन्य कृषि सेवाएं प्रदान करता हैं। स्मार्टफोन नहीं रखने वाले किसानों के लिए कंपनी दैनिक हेल्पलाइन की सुविधा भी उपलब्ध कराती है। इस स्टार्टअप ने भी भारत के लाखों किसानों की सहायता की है। क्रॉपइन व देहात जैसे इन स्टार्ट–अप के आने से देश में खेती करने का पारंपरिक तरीका ही बदल गया है।

नैसकॉम और फिक्की की एक रिपोर्ट के अनुसार कृत्रिम बुद्धिमता के द्वारा औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों में तकनीकी विस्तार को और प्रोत्साहन मिलेगा। ज्ञातव्य है कि कृत्रिम बुद्धिमता के कारण सूचना प्रौद्योगिकी, रिटेल, वित्त, वस्त्र और ऑटो क्षेत्र में बड़ी संख्या में रोजगार के नए अवसरों का सृजन हो सकेगा। वैश्वीकरण एवं भूमंडलीकरण के वर्तमान दौर में आज भारत की ई–कॉमर्स कंपनियां उपभोक्ताओं को आकर्षित करने के लिए कृत्रिम बुद्धिमता का सफलता पूर्वक सदुपयोग कर रही है। हाल ही में कृत्रिम बुद्धिमता रिसर्च रिपोर्ट में जी–20 में शामिल कुछ देशों के लिए कृत्रिम बुद्धिमता के आर्थिक प्रभाव का मूल्यांकन किया गया। रिपोर्ट के अनुसार कृत्रिम बुद्धिमता के माध्यम से भारत की वार्षिक वृद्धि दर वर्ष 2035 तक 1.3 प्रतिशत तक बढ़ायी जा सकती है। इस समय गूगल, फेसबुक और लिंक्डइन जैसी तकनीकी क्षेत्र की अग्रणी कंपनियां कृत्रिम बुद्धिमता तकनीक में पैसे का भारी निवेश करके बेरोजगारों के लिए रोजगार के नए अवसरों को सृजित कर रही है।

कृत्रिम बुद्धिमता से संबंधित सरकारी नीतियां

कृत्रिम बुद्धिमता एवं संबंधित प्रौद्योगिकियों का लाभ आम जनता तक पहुंचाने के उद्देश्य से भारत सरकार ने कुछ अहम योजनाओं की शुरूआत की। जैसे–कृत्रिम बुद्धिमता, डिजिटल मैन्यूफैक्चरिंग, बिग डाटा इंटेलिजेंस, रोबोटिक्स, रियल टाइम डाटा तथा क्वांटम कम्यूनिकेशन के क्षेत्र में शोध, प्रशिक्षण, मानव संसाधन और कौशल विकास को बढ़ावा देना। वर्तमान बजट में सरकार ने 5वीं जेनरेशन टेक्नोलॉजी की शुरूआत के लिए 480 मिलियन डॉलर का प्रावधान किया है जिसमे कृत्रिम बुद्धिमता, मशीन लार्निग, इंटरनेट ऑफ थिंग्स, 3–डी प्रिंटिंग और ब्लॉक चेन सम्मिलित है। केंद्र सरकार का थिंकटैक (नीति आयोग) राष्ट्रीय कृत्रिम बुद्धिमता कार्यक्रम की राष्ट्रीय स्तर पर रूपरेखा तैयार कर रहा है। सर्वविदित है कि नीति आयोग कृत्रिम बुद्धिमता द्वारा देश में व्यवसाय करने के तरीके को परिवर्तित करने के लिए गूगल की साझेदारी से कई प्रशिक्षण शुरू करने जा रहा है जिससे कृत्रिम बुद्धिमता तकनीक के प्रयोग को और प्रोत्साहन मिलेगा।

कृत्रिम बुद्धिमता का महत्व

(क) **कृषि क्षेत्र में**– कृत्रिम बुद्धिमता को कृषि क्षेत्र में सुचारू रूप से प्रयोग कर सकते है जैसे कि कीटनाशकों तथा उर्वरकों के दुरूपयोग के समाधान में वह काफी सहायक हो रहा है। कृत्रिम बुद्धिमता तकनीकी पर आधारित कृषि उपकरण निम्न प्रकार है:

1. **ड्रोन**– गहन क्षेत्र विश्लेषण, बड़े स्तर के क्षेत्रफल की फसल में छिड़काव और उच्च दक्षता वाली फसल निगरानी के माध्यम से फसल की उपज में वृद्धि करने के नए उपाय सुझाने जैसे कारणों से ड्रोन तकनीक समय के साथ तेजी से कृषकों के लिए लाभप्रद होती जा रही है।

2. **चालक रहित ट्रैक्टर**– सेंसर, रडार तथा जीपीएस सिस्टम जैसी 'ऑफ–द–शेल्फ' तकनीकों के साथ और अधिक परिष्कृत सॉफ्टवेयर का संयोजन, किसान जल्द ही इस पुराने कृषि मशीनरी को रोबोट को सौंपने में सक्षम होंगे।

3. **स्वचालित सिंचाई प्रणाली**– स्वचालित सिंचाई प्रणाली को औसत उपज बढ़ाने, वांछित मिट्टी की स्थिति को लगातार बनाए रखने तथा रियल–टाइम मशीन लर्निंग का उपयोग करने के लिए इसे डिजाइन किया गया है।

4. **मृदा स्वास्थ्य निगरानी**– पारंपरिक फसल स्वास्थ्य निगरानी के तरीके काफी समय लेने वाले होते हैं और सामान्यतया प्राकृतिक रूप से स्पष्ट होते है। कृत्रिम बुद्धिमता, मशीन लर्निंग, इन–ग्राउंड सेंसर, इंफ्रारेड इमेजरी तथा रियल टाइम वीडियो एनालिटिक्स उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकते हैं। फसलों की गुणवत्ता में मृदा की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है। हालांकि उर्वरकों के अतिशय प्रयोग एवं वनों की कटाई में वृद्धि के कारण मृदा की गुणवत्ता में गिरावट आ रही हैं। ऐसे में मृदा की उर्वरता में गिरावट आना स्वाभाविक है। ऐसी स्थिति में मृदा की गुणवत्ता का स्तर ज्ञात करना एक दुष्कर कार्य हो जाता है। जर्मनी के बर्लिन स्थित टेक स्टार्टअप (पीईटी) ने प्लांटिक्स नामक कृत्रिम बुद्धिमता आधारित एक गहन शिक्षण अनुप्रयोग विकसित किया है जो कथित तौर पर मृदा में उपस्थित कीटों व रोगजनकों की स्थिति सहित संभावित रोगो और पोषक तत्वों की कमी की सुगमता से पहचान करता है। जिससे किसानों को आवश्यकतानुसार उर्वरक का प्रयोग करके फसल की गुणवत्ता में सुधार करने में सहायता मिल सकती है।

5. **फसल की निगरानी**– स्काईस्क्रेल टेक्नोलॉजीज फसल स्वास्थ्य की निगरानी हेतु ड्रोन आधारित एरियल इमेजिंग समाधान प्रस्तुत करता है। इस प्रौद्योगिकी के अंतर्गत ड्रोन खेतों से आंकड़े एकत्रित करके आंकड़ो को यूएसबी ड्राइव के माध्यम से ड्रोन से कम्प्यूटर में स्थानांतरित करता है। कंपनी कैप्चर की गई इमेज का विश्लेषण करने के लिए अल्गोरिदम का उपयोग करके विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत करती है। यह कृषकों को जीवाणुओं, रोगाणुओं एवं कीटों की पहचान करने में किसानों की अत्यंत सहायता करता है। भारत में भी उद्योगो ने कृत्रिम बुद्धिमता संचालित फसल उपज भविष्यवाणी मॉडल विकसित करने हेतु सरकार के साथ हाथ मिलाया है। यह प्रणाली फसल उत्पादकता बढ़ाने, कीट अथवा रोगों के प्रकोप की चेतावनी देने के लिए कृत्रिम बुद्धिमता आधारित तकनीक का प्रयोग करती है। किसानों को सटीक जानकारी देने के लिए कंपनियां भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के द्वारा उपलब्ध कराए गए रिमोट सेन्सिंग आंकड़े, मृदा स्वास्थ्य कार्ड के आंकड़े, मौसम विभाग की भविष्यवाणी, मृदा के तापमान व नमी की जानकारी का विश्लेषण करके उपयुक्त तरीके से उपयोग करती है।

6. **खेतों की निगरानी**– हम सबने गांवो में फसलों को पक्षियों से बचाने हेतु किसानों को खेतों में मचान बनाकर रखवाली करते देखा है, परंतु अब फसलों को पक्षियों द्वारा होने वाली क्षति से बचाने हेतु कृत्रिम बुद्धिमता तथा मशीन लर्निंग जैसी तकनीक का प्रयोग किया जाने लगा है। इससे रियल टाइम वीडियों फीड मॉंनीटरिंग प्रणाली के जरिए तुरंत एलर्ट प्राप्त किया जा सकता है।

7. **फसलों की भविष्यवाणी**– जलवायु परिवर्तन तथा प्रदूषण के मद्देनजर किसानों के लिए बीज बोने का सही समय निर्धारित करना एक मुश्किल कार्य होता जा रहा है। कृत्रिम बुद्धिमता की सहायता से किसान मौसम के भविष्यवाणी का उपयोग करके सही स्थिति का विश्लेषण कर सकते है जिससे उन्हें विभिन्न फसलों की योजना बनाने में सहायता मिल सकती है। जैसे कि बीज कब बोना है तथा कब नही? विभिन्न कृत्रिम बुद्धिमता तथा मशीन लर्निंग टूल्स के माध्यम से कीटों के आक्रमण आदि को लेकर भी एलर्ट प्राप्त किया जा सकता है। कृत्रिम बुद्धिमता की सहायता से किसान वास्तविक समय में विभिन्न प्रकार के आंकड़े जैसे मौसम का तापमान तथा वर्षा की स्थिति, जल के उपयोग, मृदा की स्थिति आदि का विश्लेषण करके समस्याओं की पहचान कर सकते हैं। इससे समय पर उचित निर्णय लेने में सुगमता रहेगी। फसल एग्रोटेक कंपनी कृषकों को अधिक लाभ पहुंचाने के लिए सटीक अनुमान लगाने में सहायता करती हैं। कंपनी द्वारा खेती के आंकड़ो को एकत्रित करने के लिए एप विकसित किया गया है। इसके अतिरिक्त, फसल सेंस नामक आईओटी डिवाइस विकसित किया है जो खेत की निगरानी व

आंकड़े एकत्र करने में मदद करता है। कृत्रिम बुद्धिमता के माध्यम से कंपनी खेत के दृष्टिकोण से फसल उगाने की सलाह देती है।

8. **फार्म शॉट्स**– हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग और 3डी लेजर स्कैनिंग, व्यक्तिगत भूखंडो और पौधें को चित्रित करने के लिए स्थानिक संकल्प के साथ हजारों एकड़ में तेजी से बढ़ी हुई जानकारी और प्लांट मेट्रिक्स प्रदान करने में सक्षम हैं और बढ़ते चक्र के दौरान परिवर्तनों को ट्रैक करने का अस्थायी लाभ भी प्राप्त होता है।

(ख) **चिकित्सा क्षेत्र में**–कृत्रिम बुद्धिमता को चिकित्सा क्षेत्र में सुचारू रूप से प्रयोग किया जा सकता हैं। जैसे कि ऑपरेशन में, कृत्रिम प्रत्यारोपण में और ग्रामीण क्षेत्रों में जहां संचार की सुविधाओं की समस्या है तथा प्रशिक्षित कर्मियों की कमी है वहां कृत्रिम बुद्धिमता की सहायता से चिकित्सा की जा सकती है।

(ग) **विनिर्माण और उत्पादन के क्षेत्रों में**–बहुराष्ट्रीय कंपनियां तथा संगठन कृत्रिम बुद्धिमता का प्रयोग विनिर्माण और उत्पादन के क्षेत्रों में कर रहे हैं तथा इन्होने इन क्षेत्रों में करोड़ो का निवेश किया है। क्योंकि कृत्रिम बुद्धिमता मशीनों द्वारा गलतियों की संभावना कम रहती है और मनुष्यों की तुलना में इन मशीनों से लंबे समय तक कार्य लिया जा सकता है।

(घ) **सुरक्षा के क्षेत्र में**–सुरक्षा दृष्टिकोण से भी कृत्रिम बुद्धिमता अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उदाहरणार्थ सेना के जवानों के स्थान पर भी रोबोट का प्रयोग किया जा सकता है। वर्तमान में साइबर सुरक्षा के क्षेत्र में धोखाधड़ी का पता लगाने, वित्तीय लेन–देन में होने वाली अनियमितता, ट्रेडिंग पैटर्न पर निगरानी जैसे मामलों में कृत्रिम बुद्धिमता का प्रयोग किया जा रहा है। वित्तीय संस्थानों और बैकिंग संस्थानो द्वारा आंकड़ों को व्यवस्थित करने के लिए कृत्रिम बुद्धिमता का उपयोग किया जा रहा है। स्मार्टकार्ड सिस्टम में भी कृत्रिम बुद्धिमता का उपयोग किया जा रहा है।

(ड) **खनिजों के खनन में**– समुद्र तल की गहराई में खनिज, पेट्रोल और ईधन की खोज, गहरी खानों में खुदाई अत्यंत कठिन, दुष्कर तथा जटिल होता है। समुद्र की तलवटी में पानी का गहन दबाव होता है। ऐसे में कृत्रिम बुद्धिमता की सहायता से ईधन की खोज एवं खुदाई की जाती है।

(च) **खेल जगत में**– कृत्रिम बुद्धिमता का प्रयोग क्रिकेट, फुटबॉल, बेसबॉल, शतरंज जैसे खेलों की तस्वीरें लेने में प्रमुख रूप से किया जा रहा है। क्रिकेट के क्षेत्र में भी संगणक का उपयोग विभिन्न परिस्थितियों में निर्णय लेने में किया जाता है।

(छ) **अन्य उपयोग**– अंतरिक्ष से जुड़ी खोजों में भी कृत्रिम बुद्धिमता का उपयोग सफलतापूर्वक किया जा रहा है। जीवन को उच्च गुणवत्ता प्रदान करने हेतु नए विकसित स्मार्ट शहरों और बुनियादी ढॉचे में कृत्रिम बुद्धिमता का प्रयोग किया जा सकता है। कृत्रिम बुद्धिमता के संभावित उपयोग में, स्वचालित ड्राइवर ऑटोनोमस ट्रैकिंग, डिलीवरी तथा बेहतर यातायात प्रबंधन हो सकते है।

कृत्रिम बुद्धिमता की कमियां–

कृत्रिम बुद्धिमता कृषि क्षेत्र, रोबोटिक्स, खनिजों के खनन, सुरक्षा, विनिर्माण और उत्पादन, चिकित्सा तथा खेल के विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण तथा उपयोगी योगदान दे सकता है लेकिन इसके नकारात्मक प्रभाव से भी इंकार नहीं किया जा सकता है। बैंक, एटीएम, अस्पताल, कारखानों किसी भी जगह कृत्रिम बुद्धिमता से युक्त मशीन लगाना अत्यंत महंगा पड़ता है। इन मशीनों के खराब हो जाने पर इसको ठीक करना भी सुगम तथा सस्ता नहीं होता है। साथ ही इन मशीनों का रख–रखाव भी अत्यंत खर्चीला होता है। मशीनों में भावना या नैतिक मूल्य मौजूद नहीं होता है तथा ये उचित एवं अनुचित कार्य में अंतर नहीं कर सकती है। विशेषज्ञों का कहना है कि सोचने–समझने वाले रोबोट यदि किसी कारणवश अथवा विशेष परिस्थिति में मनुष्य को अपना शत्रु मानने लगें, तो यह मानवता के लिए अत्यंत खतरनाक सिद्ध हो सकता है। अत: विपरीत परिस्थितियों होने पर कृत्रिम बुद्धिमता तकनीक से युक्त मशीनें उचित निर्णय लने में असमर्थ रहती है।

निष्कर्ष

आज समावेशी वित्तीय विकास में कृत्रिम बुद्धिमता तकनीक अत्यंत सफल सिद्ध हो रही है। जैसे कि कृषकों को सामयिक सलाह प्रदान करने और बढ़ती उत्पादकता की दिशा में अप्रत्याशित कारकों को संबोधित करने में कृत्रिम बुद्धिमता काफी उपयोगी सिद्ध हुई है। कृत्रिम बुद्धिमता विगत कई दशकों से एक ज्वलंत विषय है। कृत्रिम बुद्धिमता का बाजार वर्ष 2025 में 200 बिलियन डॉलर तक जा सकता है। आज तकनीक के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व अत्यंत तीव्रता से परिवर्तित हो रहा है। आज प्रत्येक क्षेत्र में विकास को गति देने और नागरिकों को बेहतर सुख–सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिये अत्याधुनिक तकनीक का भरपूर उपयोग किया जा रहा है। इस संदर्भ में भारत सरकार ने 2017 में एग्री–उड़ान नाम की योजना शुरू की थी, जिसका उद्देश्य ही कृषि क्षेत्र के स्टार्ट–अप को मार्गदर्शन देना और संभावित निवशकों को साथ जोड़ना था। इस योजना के कारण कई नई कंपनियां कृषि क्षेत्र में उतरी है जिससें कृषि क्षेत्र में नए निवेश हो रहे हैं जिससे अन्य तकनीकों के साथ कृत्रिम बुद्धिमता द्वारा निर्मित कृषि उपकरण भी अधिक सस्ते मूल्यों पर कृषकों को उपलब्ध हो सकेंगे। समय की मांग के अनुरूप यह अत्यंत आवश्यक भी है क्योंकि खेती–किसानी के उज्जवल भविष्य का मार्ग कृत्रिम बुद्धिमता द्वारा काफी हद तक प्रशस्त हो सकता है।

खाद्य पदार्थों में पशु जनित जैव प्रतिरोधक दवाइयों के अवशेषों की उपस्थिति का महत्व

शोभा सोंधिया, सौम्या मिश्रा एवं नीलम राजपूत
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

जैव प्रतिरोधक दवाइयों का उपयोग सामान्यता विभिन्न उद्योगों में विकास को बढ़ावा देने और बीमारियों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। जैव प्रतिरोधक के उपयोग से पशु जनित पदार्थ जैसे कि मांस, दूध और अंडों में इन दवाओं से संबंधित अवशेष जैसे मूल दवा और मेटाबोलाइट्स रहने की संभावना होती है। जैव प्रतिरोधक दवाओं के अत्यधिक उपयोग और दुरुपयोग से जैव प्रतिरोधकता हो सकती है, जोकि एक प्रमुख स्वास्थ्य चिंता का विषय है। इसलिए, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और जैवप्रतिरोधक के प्रसार को रोकने के लिए विभिन्न खाद्य उत्पादों में मुख्यत: पशु आधारित जैव उत्पाद में जैव प्रतिरोधक दवाओं की उपस्थिति का पता लगाना महत्वपूर्ण है। खाद्य पदार्थों में जैव प्रतिरोधक अवशेष स्ट्रेप्टोमाइसिन पशु मूल के खाद्य पदार्थों में इस जैव प्रतिरोधक के अवशेष कई स्रोतों से उत्पन्न हो सकते हैं।

खाद्य पदार्थों में जैव प्रतिरोधक अवशेष अनेक स्रोतों से उत्पन्न हो सकते हैं जिनमें निम्न प्रमुख हैं :-

1. खाद्य पदार्थों में जैव प्रतिरोधक दवाइयों मे अवशेषों की उपस्थिति:-

खाद्य पदार्थों विशेषत: पशु मूल में जैव प्रतिरोधकों का खाने योग्य जानवरों में बीमारियों के उपचार और रोकथाम के लिए उनकी चिकित्सा में उपयोग किया जाता है। जानवरों में जैव प्रतिरोधक मौखिक रूप से या प्रवेश प्रक्रिया के माध्यम से दिए जाते हैं और उनके अवशेष पशु आधारित खाद्य पदार्थों जैसे कि मांस, दूध और अंडे सहित जानवरों के ऊतकों में जमा हो सकते हैं।

2. जैव प्रतिरोधक दवाइयों की ऊतकों में उपस्थिति का पालन:

सामान्यत: जैव प्रतिरोधकों का पूर्ण अपघटन न होना भी जैव प्रतिरोधक दवाओं की उपस्थिति का कारण होता है अत: जानवरों को तब तक नहीं मारा जाना चाहिये जब तक कि जैव प्रतिरोधकके अवशेष उनके ऊतकों से पूर्णत: समाप्त न हो जाएं। यदि जैव प्रतिरोधक दवाओं कि पूर्णत: अपघटन की अवधि का पालन नहीं किया जाता है और अपघटन की अवधि समाप्त होने से पहले जानवरों को मार दिया जाता है या दूध निकाला जाता है, तो पशु मूल के खाद्य पदार्थों में जैव प्रतिरोधक अवशेष मौजूद हो सकते हैं।

3. पर्यावरण प्रदूषण:

जैव प्रतिरोधक दवाइयों के अवशेष पर्यावरण में प्रदूषण कृषि पद्धतियों से भी हो सकते हैं, जैसे कि जैव प्रतिरोधक दवाओं से उपचारित या अन्य माध्यमों से पशु खाद का उपयोग या औद्योगिक प्रक्रियाओं से जैसे दवा उत्पादन विधि से जैव प्रतिरोधक युक्त अपशिष्ट का निर्वहन आदि।

4. खाद्य प्रसंस्करण के दौरान क्रॉस-संदूषण:

खाद्य प्रसंस्करण के समय क्रॉस-संदूषण के कारण जैव प्रतिरोधक दवाइयों के अवशेष खाद्य पदार्थों में भी उपस्थित हो सकते हैं, क्योकि दूषित मांस के लिए उपयोग किए जाने वाले काटने या पैकेजिंग उपकरण का उपयोग अदूषित मांस के लिए भी किया जाता है। अत: खाद्य पदार्थों में जैव प्रतिरोधक अवशेषों की उपस्थिति को रोकना आवश्यक है क्योंकि वे मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव, जैसे कि जैव प्रतिरोधक प्रतिरोधी बैक्टीरिया का विकास और अति संवेदनशील व्यक्तियों में एलर्जी प्रतिक्रियाओं आदि है। इसलिए, जैव प्रतिरोधक अवशेषों की समस्या को कम करने के लिए उचित उपाय, जैसे पुन: उपयोग की अवधि सुनिश्चित लागू करना और नियमों का अनुपालन सुनिश्चित करना, आदि उचित कदम उठाए जाने चाहिए।

5. पशु मूल के खाद्य पदार्थों मैं जैव प्रतिरोधक अवशेष के विश्लेषण की महत्ता:

पशु मूल के खाद्य पदार्थों में जैव प्रतिरोधक अवशेषों का विश्लेषण विभिन्न तरीकों का उपयोग करके किया जा सकता है जिसमें सूक्ष्मजीव विज्ञानी प्रतिरोध और उच्च दवाब तरल क्रोमेटोग्राफी और तरल क्रोमेटोग्राफी टेंडम मास जैसी क्रोमेटोग्राफिक तकनीकें शामिल हैं। विश्लेषणात्मक विधि का चुनाव कई कारकों पर निर्भर करता है। जिसमें जैव प्रतिरोधक की प्रकृति, मेट्रिक्स की जटिलता, आवश्यक संवेदनशीलता और विधि की विशिष्टता शामिल है।

यहाँ कुछ सामान्य जैव प्रतिरोधक के वर्ग एवं उनका महत्व दिया गया है:-

1. बीटा:

लेक्टम: बीटा लेक्टम जैव प्रतिरोधी दवाओं का एक व्यापक वर्ग है, जो जीवाणु कोशिका भित्ति संश्लेषण को रोकता है; बीटा- लेक्टम के उदाहरणों में पेनिसिलिन, एम्प्लिसिलिन, अमोक्सिलिन, सेफ्लिस्कोरिन (एमिपेनिम-मेरोपेनिम) शामिल हैं। बीटा-लेक्टम ग्राम पॉजिटिव जीवाणु जैसे- स्ट्रेप्टोकोकस और स्टेफिलोकोकस और कुछ ग्राम -नेगेटिव जीवाणु जैसे एस्चेरिचिया कोलाई के प्रति प्रभावी है।

2. मैक्रोलाइड:

मैक्रोलाइड जैव प्रतिरोधक जीवाणुवीय राइबोसोम से जुड़कर बैक्टीरियल प्रोटीन संश्लेषण को रोकते हैं। मैक्रोलाइड्स के उदाहरणों में एरिथ्रोमाइसिन, एज़िथ्रोमाइसिन और क्लैरिथ्रोमाइसिन शामिल हैं। मैक्रोलाइड्स स्ट्रेप्टोकोकस और स्टैफिलोकोकस जैसे ग्राम-पॉजिटिव बैक्टीरिया के साथ-साथ हीमोफिलस इन्फ्लुएंजा जैसे कुछ ग्राम-नकारात्मक बैक्टीरिया के विरुद्ध प्रभावी हैं।

3. टेट्रासाइक्लिन:

टेट्रासाइक्लिन जैव प्रतिरोधक जीवाणु राइबोसोम से जुड़कर जीवाणुवीय प्रोटीन संश्लेषण को रोकते हैं। टेट्रासाइक्लिन के उदाहरणों में डॉक्सीसाइक्लिन, मिनोसाइक्लिन और टेट्रासाइक्लिन शामिल हैं। टेट्रासाइक्लिन ग्राम-पॉजिटिव और ग्राम-नेगेटिव जीवाणु की एक विस्तृत श्रृंखला के साथ-साथ क्लैमाइडिया और माइकोप्लाज्मा जैसे कुछ असामान्य जीवाणु के खिलाफ प्रभावी हैं।

4.अमीनो-ग्लाइकोसाइड :

अमीनो-ग्लाइकोसाइड जैव प्रतिरोधक जीवाणु राइबोसोम से जुड़कर जीवाणु प्रोटीन संश्लेषण को रोकते हैं। एमिनोग्लाइकोसाइड्स के उदाहरणों में जेंटामाइसिन, टोब्रामाइसिन और एमिकासिन आदि हैं। अमीनोग्लाइकोसाइड्स, स्यूडोमोनास, एरुगिनोसा और एस्चेरिचिया कोलाई जैसे ग्राम-नकारात्मक जीवाणु के विरुद्ध प्रभावी हैं।

- **फ़्लोरोक्विनोलोनः**

फ़्लोरोक्विनोलोन जैव प्रतिरोधक जीवाणुवीय डीएनए गाइरेज़ और टोपोइज़ोमेरेज़ की गतिविधि में रूकावट करके डीएनए संश्लेषण को रोकते हैं। इनके उदाहरणों में फ़्लोरोक्विनोलोन में सिप्रोफ्लोक्सासिन, लेवोफ़्लोक्सासिन और मोक्सीफ़्लोक्सासिन आदि सम्मिलित हैं। फ्लोरोक्विनोलोन ग्राम-नकारात्मक और ग्राम-पॉजिटिव जीवाणु की एक विस्तृत श्रृंखला के प्रति प्रभावी हैं।

- **सल्फोनामाइड्सः**

सल्फोनामाइड जैव प्रतिरोधक एंजाइम डायहाइड्रोपटेरो- एटसिन्थेस की गतिविधि को अवरुद्ध करके जीवाणुवीय फोलिक एसिड संश्लेषण को रोकते हैं। सल्फोनामाइड्स के उदाहरणों में सल्फामेथोक्साज़ोल और ट्राइमेथोप्रिम - सल्फामेथॉक्साज़ोल शामिल हैं। सल्फोनामाइड्स ग्राम-पॉजिटिव और ग्राम-नेगेटिव जीवाणु के विरुद्ध प्रभावी हैं।

अवशेष विश्लेषण के लिए जैव प्रतिरोधक वर्ग का महत्व इस तथ्य में निहित है कि विभिन्न जैव प्रतिरोधक में अलग-अलग भौतिक रासायनिक गुण होते हैं, जो इसे प्रभावित कर सकते हैं। कुछ जैव प्रतिरोधक अम्लीय होते हैं, जबकि अन्य क्षारीय होते हैं, जो एचपीएलसी विश्लेषण के लिए उपयोग किए जाने वाले क्रोमैटोग्राफिक कॉलम और गतिशील चरण को प्रभावित कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, कुछ जैव प्रतिरोधक, नमूना तैयार करते समय विश्लेषण के दौरान अपघटन या परिवर्तन प्रक्रियाओं से प्रभावित होते हैं, जो परिणामों की सटीकता और विश्वसनीयता को प्रभावित कर सकता है। इसलिए, जैव प्रतिरोधक अवशेषों के विश्लेषणात्मक, मूल खाद्य पदार्थों के लिए विश्वसनीय और सटीक तरीकों को विकसित करने के लिए विभिन्न जैव प्रतिरोधक वर्गों के गुणों को समझना आवश्यक है। तरल क्रोमैटोग्राफी-टेंडेम मास स्पेक्ट्रोमेट्री (एलसी-एमएस/एमएस) एक शक्तिशाली विश्लेषणात्मक तकनीक है जिसका उपयोग भोजन और पशु-व्युत्पन्न उत्पादों में जैव प्रतिरोधक अवशेषों का पता लगाने और मात्रा निर्धारित करने के लिए अवशेषों के स्तर की निगरानी और नियामक सीमाओं का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए नियामक और अनुसंधान प्रयोगशालाओं में इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है ।

निम्नलिखित कुछ सामान्य जैव प्रतिरोधक दवायें हैं जो आमतौर पर उनके संबंधित आर पी ए/सहिष्णुता सीमा (यदि लागु हो) के साथ, खाद्य जानवरों में प्रतिबंधित है।

1. **क्लोरैम्फेनिकॉल** - इसके संभावित कार्सिनोजेनिक उत्परिवर्तन प्रभावों के कारण खाद्य जानवरों में निषिद्ध है।
2. **नाइट्रोफ्यूरन्स** - नाइट्रोफ्यूरन्स (फ़राज़ोलिडोन, फ़्यूराल्टाडोन, नाइट्रोफ्यूराज़ोन, और नाइट्रोफ्यूरेंटोइन) संभावित कार्सिनोजेनिक उत्परिवर्ती प्रभावों के कारण खाद्य जानवरों में निषिद्ध है।
3. **नाइट्रोइमिडाज़ोल (मेट्रोनिडेज़ोल, डिमेट्रिडाज़ोल, आईप्रोनिडाज़ोल और रोनिडाज़ोल)** - उनके संभावित कैंसर जन्य और उत्परिवर्तन प्रभावों के कारण इसका उपयोग खाद्य जानवरों में निषिद्ध है।
4. **मैलाकाइट हरा** - इसके संभावित कार्सिनोजेनिक और उत्परिवर्तन प्रभावों के कारण इसका उपयोग खाद्य जानवरों में निषिद्ध है।
5. **फ़्लोरोक्विनोलोन**- फ़्लॉक्सासिन, (एनरो सिप्रोफ़्लोक्सासिन, नॉरफ़्लॉक्सासिन, और ओफ़्लॉक्सासिन) जैव प्रतिरोधक के बारे में प्रतिकूल प्रभावों के कारण खाद्य पशुओं में इनका उपयोग प्रतिबंधित है।
6. **टेट्रासाइक्लिन (ऑक्सीट-ट्रासाइक्लिन, क्लोरेटेट्रासाइक्लिन, और डॉक्सीसाइक्लिन)** - प्रतिरोध संबंधी प्रतिकूल प्रभावों के कारण खाद्य पशुओं में इनका उपयोग प्रतिबंधित है।
7. **बीटा**- एगोनिस्ट (क्लेनब्यूटेरोल और रेक्टोपामाइन) - मानव स्वास्थ्य पर संभावित प्रतिकूल प्रभावों के कारण खाद्य पशुओं में इनका उपयोग प्रतिबंधित है।

अतः यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि आरपीए/सहिष्णुता सीमा देश या क्षेत्र के आधार पर भिन्न होती है और विभिन्न पशु प्रजातियों या खाद्य उत्पादों के लिए भिन्न हो सकती है। इसलिए, सबसे सटीक जानकारी के लिए सम्बंधित देश या क्षेत्र के प्रासंगिक नियमों और दिशा निर्देशों का संदर्भ लेना आवश्यक है। पशु मूल के खाद्य पदार्थों में एंटीबायोटिक दवाओं के लिए अधिकतम अवशेष सीमा या सहनशीलता सीमा दुनिया भर के विभिन्न नियामक निकायों, जैसे कोडेक्स एलिमेंटेरियस कमीशन, यूरोपीय संघ, संयुक्त राज्य खाद्य एवं औषधि प्रशासन (यूएसएफडीए), आदि द्वारा स्थापित की जाती है। अधिकतम अवशेष सीमा देश, पशु प्रजातियों और खाद्य उत्पाद के आधार पर भिन्न हो सकते हैं। भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (FSSAI) ने पशु मूल के खाद्य पदार्थों में कुछ जैव प्रतिरोधक दवाओं के लिए एमआरएल भी स्थापित किए हैं।

निष्कर्ष-

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि एमआरएल (MRL) या सहनशीलता सीमाएं समय के साथ बदल सकती हैं, और देश या क्षेत्र में प्रासंगिक नियमों और दिशा निर्देशों का अनुपालन करना महत्वपूर्ण है। पशुपालन में चिकित्सीय और रोगनिरोधी उद्देश्यों के लिए जैव प्रतिरोधक दवाओं का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है, और यह संभावित रूप से पशु-व्युत्पन्न खाद्य उत्पादों को दूषित कर सकता है, जिससे मानव स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा हो सकता है। पशु-व्युत्पन्न खाद्य उत्पादों में जैव अवशेषों का पता लगाना खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और प्रतिरोधक विकास को रोकने के लिए महत्वपूर्ण है। जैव प्रतिरोधक दवाओं के लिए अधिकतम अवशेष सीमा या सहनशीलता सीमा का उत्पादकों द्वारा पालन किया जाना चाहिए और नियामक एजेंसियों द्वारा निगरानी की जानी चाहिए। भोजन उत्पादक विशेषकर जानवरों में प्रतिबंधित जैव प्रतिरोधक दवाओं का उपयोग सख्त वर्जित है, और खाद्य उत्पादों में उनकी उपस्थिति अवैध है और इससे गंभीर स्वास्थ्य जोखिम हो सकते हैं अतः जैव प्रतिरोधक अवशेषों को रोकने और यह सुनिश्चित करने के लिए कि खाद्य उत्पाद मानव उपभोग के लिए सुरक्षित हैं, प्रभावी निगरानी और नियंत्रण कार्यक्रम रखना महत्वपूर्ण है।

सहजन (*मोरिंगा*) एक गुणकारी औषधीय पेड़

मुकेश कुमार मीणा एवं जी.आर. डोंगरे
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

सहजन एक बहु उपयोगी पेड़ है। जिसका वानस्पतिक नाम ''*मोरिंगा ओलिफेरा*''(*Moringa oleifera*) हैं। इसे भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग नामों से जाना जाता है जैसे ड्रमस्टिक, सहजना, सेंजन, सुजना और मुनगा आदि। सहजन का पेड़ भारत के सभी क्षेत्रों में आसानी से उग जाता है। इसकी यह भी विशेषता है कि इसको ज्यादा पानी की जरुरत नही पड़ती है, इसलिए यह सूखी जगह में भी उग सकता है। इस पेड़ के विभिन्न भाग पोषक तत्वों से भरपूर पाये गये हैं, इसलिए इसके विभिन्न भागों को अनेक प्रकार से उपयोग में लाया जाता है।

सहजन का इस्तेमाल सदियों से आयुर्वेद में हो रहा है। कई बीमारियों से छुटकारा दिलाने में ये मददगार है। मधुमेह, गठिया, हृदय रोगों, थायराइड, कमजोर इम्यूनिटी, अस्थमा, पाचन विकार जैसे रोगों के इलाज और रोकथाम के लिए इसका उपयोग किया जाता है। सहजन पेड़ की फलियों, पत्तियों, फूल एवं बीज का उपयोग कई तरह से किया जाता है। सहजन पेड़ के फायदे सेहत से जुड़े हुए हैं, इसीलिए सहजन पेड़ के हर हिस्से को खाया जा सकता है। इसमें विटामिन ए, विटामिन सी, विटामिन बी1, बी2, बी3, बी6, फोलेट, कैल्शियम, पोटेशियम, आयरन, मैग्नीशियम, फास्फोरस और जिंक जैसे पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते है, जो सेहत के लिए बहुत आवश्यक एवं लाभकारी होते है। एक रिसर्च में ये जानकारी सामने आई है कि सहजन में संतरे की तुलना में सात गुना ज्यादा विटामिन सी पाया जाता है एवं केले के मुकाबले 15 गुना ज्यादा पोटेशियम पाया जाता है और गाजर की तुलना में दस गुना ज्यादा विटामिन ए पाया जाता है।

सहजन के लाभः–

1. सहजन रोग प्रतिरोधक क्षमता (इम्यूनिटी) बढ़ाने के लिए

सहजन शरीर की प्रतिरक्षा को मजबूत बनाने में बहुत कारगर होता हैं। सहजन में ऐसे गुण पाये जाते है जो एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होते हैं, और ये एंटीऑक्सीडेंट इम्यूनिटी को मजबूत, दिल तथा आंखो का स्वास्थ्य बनाये रखने में सहायक होते है। इसलिए प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए भी सहजन का उपयोग किया जाता हैं।

2. सहजन के लाभ एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर

सहजन के फायदे एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होते हैं जो बीमारी से बचाकर रखने में मदद करते हैं। एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर डाइट फ्री रेडिकल से बचाव करती है। फ्री रेडिकल आपके शरीर के स्वस्थ कोशिका को खराब करते है जो बीमार होने का मुख्य कारण होता है। लेकिन अगर शरीर में एंटीऑक्सीडेंट की सही मात्रा है तो यह एंटीऑक्सीडेंट फ्री रेडिकल को खत्म करने में मदद करते हैं और मानव को बीमार होने से बचाकर रखते हैं।

3. सहजन के लाभ विटामिन और मिनरल्स से भरपूर

सहजन के फायदे में यह सबसे ज्यादा लोकप्रिय है कि यह विटामिन और मिनरल्स से भरपूर होते हैं। इसके अलावा सहजन में कैल्शियम, आयरन, प्रोटीन, अमिनो एसिड आदि भी पाए जाते हैं।

4. गठिया के दर्द में आराम देने के लिए

सहजन का उपयोग कुछ हद तक गठिया में होने वाले दर्द से राहत देने के लिए होता हैं। सहजन की पत्तियों के अर्क से गठिया में होने वाली सूजन एवं दर्द में आराम मिलता है।

5. सहजन के लाभ मधुमेह में

सहजन की पत्तियों में ऐसे कैमिकल पाए जाते हैं जो मधुमेह को सामान्य बनाए रखने में मदद कर सकते हैं।

6. हड्डियों को मजबूत करने के लिए

सहजन में कैल्शियम और फास्फोरस पाया जाता है जो हड्डियों को मजबूत बनाने में मदद करते हैं।

7. सहजन के लाभ सामान्य ब्लड प्रेशर के लिए

सहजन को ब्लड प्रेशर को सामान्य बनाए रखने के लिए भी उपयोग में लिया जाता हैं। सहजन में ऐसे कंपाउंड पाए जाते हैं जो ब्लड प्रेशर को बढ़ने नहीं देते हैं जिस कारण से दिल भी स्वस्थ रहता है।

8. सहजन के फायदे त्वचा और बालों के लिए

सहजन के फायदे त्वचा और बालों को स्वस्थ बनाए रखने के लिए भी जाने जाते हैं। सहजन के तेल में ऐसे प्रोटीन पाए जाते हैं जो त्वचा को फ्री रेडिकल द्वारा खराब होने से बचाव करने में मदद करते हैं। इसके साथ ही सहजन का तेल त्वचा और बालों को पोषण देने में भी मदद करता है।

9. आंखो को स्वस्थ रखने के लिए

एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होने के कारण सहजन के फायदे आंखो को स्वस्थ बनाए रखने के लिए भी कारगर है। सहजन आंखो की रोशनी को बनाये रखने में लाभदायक हैं।

10. सहजन खाने के अन्य लाभ

- सहजन हिमोग्लोबिन को बेहतर बनाने में मदद करता है
- सहजन ब्लड प्रेशर और कोलेस्ट्रॉल को कंट्रोल करता है
- सहजन लीवर और किडनी को डिटॉक्स करता है
- सहजन खून साफ करने के साथ चर्म रोगों को दूर करता है
- सहजन वजन घटाने में मदद करता है
- सहजन मेटाबॉलिज्म को बेहतर बनाता है

सहजन के नुकसानः-

अधिक मात्रा में या फिर गलत तरीके से सहजन का सेवन करने से नुकसान हो सकते हैं। अधिक मात्रा में मोरिंगा का सेवन करने से ब्लड प्रेशर लो हो सकता है इसलिए सेवन करने से पहले विशेषज्ञ से सलाह जरुर लें।

स्तनपान कराने वाली महिलाओं को सहजन से बचना चाहिए क्योंकि इसकी कुछ सामग्रियाँ शिशुओं के लिए अच्छी नही हो सकती हैं। एस्प्रिन जैसी रक्त पतला करने वाली दवाओं का सेवन करने वाले लोगों को नियमित रूप से सहजन का सेवन नही करना चाहिए। सहजन बीज के अर्क से बचना चाहिए क्योंकि वे प्रतिरक्षा कोशिकाओं में विषाक्तता पैदा कर सकते हैं।

सहजन के बीजों को खाली पेट नही खाना चाहिए। बहुत अधिक बीज खाने से रेचक प्रभाव हो सकता है। यदि कोई लंबे समय तक सहजन के बीज खाने का विकल्प चुनता है, तो उसे प्रति दिन 3 या 4 बीजों से अधिक नही खाने की सलाह दी जाती है।

सहजन का पेड़ ऐसा पेड़ है जिसके अधिकतर भाग जैसे कि पत्तियां, बीज, जड़ आदि सभी का उपयोग किसी ना किसी तरह से किया जा सकता है, इसीलिए सहजन के इतने सारे फायदे चिकित्सा रूप में भी लाभदायक हैं: लेकिन चिकित्सा के रूप में इसका उपयोग करने से पहले किसी विशेषज्ञ की सलाह जरुर लेनी चाहिए एवं उसके बाद ही इसका उपयोग करें।

बाजरे की खेती उन्नत तकनीक से कैसे करें ?

पवन कुमार पारा[1], पंकज शुक्ला[1] एवं किरण शर्मा[2]
[1]भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

बाजरा का लोकप्रिय नाम पर्ल मिलेट है। यह एक अनाज है जो अविश्वसनीय रूप से पौष्टिक और पचाने में आसान है। यह सीलिएक रोग और ग्लूटेन एलर्जी वाले लोगों के लिए एक स्वस्थ विकल्प है क्योंकि यह गैर–चिपचिपा है। लोहा, फास्फोरस, मैग्नीशियम और जस्ता के साथ–साथ कार्बोहाइड्रेट, महत्वपूर्ण अमीनो एसिड, एंटीऑक्सिडेंट और कई विटामिन जैसे थायमिन, राइबोफ्लेविन, फोलिक एसिड नियासिन और बीटा कैरोटीन सहित खनिजों से भरपूर होते हैं।

परिचय

- लोकप्रिय रूप से मोती बाजरा के रूप में जाना जाता है
- पारिवारिक ग्रामीण, वानस्पतिक नाम पेनिसेटम ग्लोकम, सामान्य नाम बाजरा इसकी उत्पत्ति अफ्रीका और भारत में है।
- यह भारत में ज्यादातर 10 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में उगाया जाता है।
- जिसमें 791 किग्रा हेक्टेयर की उपज और 7.9 मिलियन टन का उत्पादन होता है।
- यह एक मोटे अनाज की फसल है और इसे लगभग 100 मिलियन ग्रामीण निवासियों के भरण–पोषण का प्राथमिक स्रोत माना जाता है।
- यह प्रोटीन 6–12 प्रतिशत, फाइबर 12 प्रतिशत, वसा और कार्बोहाइड्रेट 60–70 प्रतिशत से भरपूर है।
- इसका उपयोग एशिया और अफ्रीका में चारे के रूप में भी किया जाता है।

लोकेशन

- सबसे अधिक उत्पादन करने वाला राज्य राजस्थान है उसके बाद महाराष्ट्र, हरियाणा, गुजरात और उत्तर प्रदेश हैं।
- तमिलनाडु सबसे अधिक उपज देने वाला राज्य है।

स्थानीय नाम

- इसे आम तौर पर विभिन्न भाषाओं में कई नामों से जाना जाता है, जैसे सज्जलू तेलुगु, पर्ल बाजरा अंग्रेजी, बाजरा (हिंदी, उर्दू, पंजाबी) हज्ज कन्नड, कंबु तमिल, कंबम मलयालम और बजरी राजस्थानी, गुजराती, मराठी।

स्वास्थ्य सुविधाएं

- बाजरा ऊर्जा का एक अच्छा स्रोत है और हृदय स्वास्थ्य के लिए अच्छा है।
- बाजरा वजन कम करने और पाचन विकारों में मदद करता है।
- बाजरा मधुमेह रोगियों के लिए अच्छा है क्योंकि यह रक्त शर्करा को नियंत्रित करता है और कैंसर को रोकने में मदद कर सकता है।

मौसम

- यह राजस्थान, उत्तर प्रदेश और गुजरात के कुछ हिस्सों में फरवरी–मई के महीने में गर्मी के मौसम में उगाया जाता है।
- इसे गुजरात और महाराष्ट्र में छोटे पैमाने पर नवंबर–फरवरी के महीने में बारिश के मौसम के बाद भी उगाया जाता है, जिसे रबी सीजन के रूप में भी जाना जाता है।

जलवायु

- यह गर्म और शुष्क परिस्थितियों में सबसे अच्छा बढ़ता है।
- यह एक सूखा सहिष्णु फसल है जिसके लिए 40 – 60 सेमी की कम वार्षिक वर्षा की आवश्यकता होती है।

मिट्टी की आवश्यकता

- इसे विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाया जाता है।
- यह काली कपास मिट्टी, बलुई दोमट मिट्टी जिसमें जल निकासी की अच्छी व्यवस्था हो, में सबसे अच्छा उगता है।
- अम्लीय और जलभराव वाली मिट्टी को प्राथमिकता नहीं दी जाती है।
- इसकी खेती के लिए,संतृप्त मिट्टी से बचें।
- फसल कम पीएच रेंज वाली मिट्टी में अच्छी तरह से बढ़ती है।
- यह अम्लीय मिट्टी के प्रति संवेदनशील है।

भूमि की तैयारी

- खेत की 2–3 हैरो से जुताई करके एक जुताई करनी चाहिए।
- भूमि की तैयारी के दौरान यदि कोई खरपतवार हो तो उसे नष्ट कर देना चाहिए।

बीज उपचार

जैव कीटनाशकों ट्राइकोडर्मा हार्जियानम 4 ग्राम/किग्रा या थीरम 75 धूल 3 ग्राम/किग्रा– बीज के साथ बीज उपचार से मृदा जनित रोगों के खिलाफ मदद मिलेगी। 300 मेश गंधक चूर्ण 4 ग्राम/किग्रा बीज से उपचारित करने से कंडुआ रोग नियंत्रित होता है। अरगोट प्रभावित बीजों को हटाने के लिए उन्हें 10 प्रतिशत नमक के घोल में भिगोया जाता है। मेटालैक्सिल एप्रन 3एसडी 6 ग्राम/किग्रा के साथ बीज उपचार। राजस्थान, हरियाणा और गुजरात के कच्छ ए1 जोन के शुष्क–पश्चिमी मैदानों के लिए, मोती बाजरा को 60 सेंटीमीटर की दूरी पर पंक्तियों में लगाया जाना

चाहिए, कम पौधों की आबादी को बनाए रखना चाहिए। 100 से 125 लाख, 450 मिमी जोन ए और बी से अधिक वर्षा प्राप्त करने वाले क्षेत्र के लिए, फसल बीज नियंत्रण वाली फफूंदी होनी चाहिए। नाइट्रोजन और फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ाने के लिए बीजों को एजोस्पिरिलम 600 ग्राम और फॉस्फोबैक्टीरियम से उपचारित किया जाता है।

उच्च उपज देने वाली संकर और किस्मों का चयन

अधिकांश मोती बाजरा क्षेत्र संकर के साथ उगाया जाता है, जबकि सूखा पारिस्थितिकी में किस्मों को प्राथमिकता दी जाती है। संकर और मोती बाजरा की नवीनतम सूची नीचे दी गई है।

मध्य प्रदेशः– खरीफ ऋतु

केबीएच 108, जीएचबी 905, 86एम89, एमपीएमएच 17, कावेरी सुपर बश्वस बायो 448, एमपी 7872, एमपी 7792, 86एम86, 86एम66, आरएचबी–173 जेबीवी 4,जेबीवी 3, पीसी 383, आईसीएमवी

बुआई का समय : भारत में इसे तीन मौसमों में उगाया जाता है

1. खरीफ– जून–अक्टूबर (वर्षा आधारित)
2. शीत ऋतु– नवम्बर–फरवरी (वर्षा आधारित)
3. ग्रीष्म– मार्च–जून

- यह एक सिंचित फसल के रूप में गर्मियों के दौरान तमिलनाडु, कर्नाटक, पंजाब और गुजरात में उगाया जाता है।
- देश के उत्तर और मध्य भागों में मानसून की शुरुआत के साथ यानी जुलाई के पहले पखवाड़े में बुवाई की जानी चाहिए।
- ग्रीष्म मोती का अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए जनवरी के अंतिम सप्ताह से फरवरी के प्रथम सप्ताह तक इसकी बुआई कर देनी चाहिए।
- तमिलनाडु में रबी मौसम के लिए अक्टूबर का पहला पखवाड़ा उपयुक्त है।
- बाजरा बोने का उपयुक्त समय जुलाई के मध्य से अंतिम सप्ताह तक है।

बीज दर

- डिब्लिंग विधि के लिए बीज दर 3-3.5 किग्रा/हेक्टेयर होनी चाहिए।
- ड्रिलिंग विधि के लिए बीज दर 4–5 किग्रा/हेक्टेयर होनी चाहिए।

स्पेसिग

- पंक्ति की दूरी 40–45 सेमी रखनी चाहिए।
- पौधे से पौधे की दूरी 10–12 सेमी रखनी चाहिए।
- गहराई 2–3 सेंटीमीटर होनी चाहिए।

सिंचाई

- यह अत्यधिक सूखा सहिष्णु फसल है और इसके लिए 300–350 मि.मी.पानी की आवश्यकता होती है।
- उपलब्ध मिट्टी की नमी 50 या आदर्श अनुपात 0–4 पर सिंचाई पर्याप्त है। कल्ले निकलना और फूल आना महत्वपूर्ण चरण हैं।
- पुष्पगुच्छ की शुरुआत के लिए सीमित नमी की स्थिति में बुवाई सिंचाई के अलावा तीन सिंचाई,झंडा पत्ती और फूल की सिफारिश की जा सकती है।
- आम तौर पर 5 सिंचाइयों की सिफारिश की जाती है।
- गर्मियों में सिंचित बाजरे की अधिक पैदावार के लिए 6 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

खाद और उर्वरक

- यदि कोई व्यावसायिक संकर बाजरा की खेती कर रहा है, तो बाजरे को भी कुछ पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है।
- बाजरा की स्थानीय किस्मों के उर्वरक की आवश्यकता के लिए प्रति हेक्टेयर 10–15 टन कम्पोस्ट या गोबर की खाद का प्रयोग आवश्यक है।
- अधिक से अधिक लाभ के लिए मृदा परीक्षण मूल्य के आधार पर खाद देना चाहिए।
- बीज के लगभग 3–5 से.मी. नीचे नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा लगानी चाहिए।
- बरनी की स्थिति में 3 प्रतिशत यूरिया के पत्तों पर छिड़काव की भी संस्तुति की जाती है।

खरपतवार प्रबंधन

बुवाई के 15 और 30–35 दिनों के बाद खुरपी से हाथ से निराई और गुड़ाई की जाती है,इससे उचित वातायन और फसल की अच्छी स्थापना में मदद मिलती है। खरपतवारों को रसायनों से नियंत्रित करने के लिए निम्नलिखित खरपतवारनाशकों का प्रयोग किया जा सकता है: एट्राजीन 1.25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हल्की से मध्यम मिट्टी में बुवाई के 48 घंटे के भीतर प्रयोग करें। बहुत कठोर खरपतवारों के लिए पेंडामेथिलीन 30 ग्राम 2–5 लीटर एट्राजीन के साथ मिलाएं ताकि खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सके।

हार्वेस्टिंग

- जब अनाज कठोर हो जाता है और उसमें नमी भी होती है, तो फसल कटाई के लिए तैयार हो जाती है।
- बालियां काटना या डंडों से पूरे पौधों को काटना 2 तरीके हैं जिनका पालन कटाई में किया जा सकता है।
- 4–5 दिनों तक धूप में दानों को सुखाने के लिए कटे हुए पौधों का डंठल लगा दें।
- बालियों को पीटकर दानों को अलग किया जा सकता है।

उपज

- अनाज 23–35 क्विंटल/हेक्टेयर, चारा–100–120 क्विंटल/हेक्टेयर, सिंचित दशा में।
- अनाज 12–15 क्विंटल/हेक्टेयर, चारा–70–75 क्विंटल/हेक्टेयर, बारानी परिस्थितियों में।

ड्रैगनफल (कमलम) की उत्पादन तकनीकी

रोहित कुमार कुमावत[1], सत्येंद्र ठाकुर[1], अंकित भारती[1] एवं अल्पना कुम्हरे[2]
[1]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

ड्रैगन फल एक उष्णकटिबंधीय फल है जो कुछ वर्षों में भारतीय बाजार में तेजी से लोकप्रिय हो गया है। ड्रैगन फल का वैज्ञानिक नाम *हायलोकेरियस अंडेटस* है। यह दक्षिण अमेरिका और मध्य अमेरिका में पाई जाने वाली जंगली नागफनी की एक प्रजाति है। यह एक किस्म की बेल पर लगने वाला फल है, जो कैक्टेसि कुल से संबंधित है। कैक्टेसि कुल को आमतौर पर कांटेदार पौधों के लिए जाना जाता है। ऐसे में, यह जानकर हैरानी हो सकती है कि नागफनी परिवार से संबंधित ड्रैगन फल दुनियाभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है।

ड्रैगन फल की खेती हाल के वर्षों में भारत के गुजरात, पंजाब, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में की जा रही है। गुजरात सरकार ने इस फल को 'कमलम' नाम दिया है, क्योकि यह फल दिखने में कमल के फूल जैसा दिखाई देता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद–राष्ट्रीय अजैविक तनाव प्रबंधन संस्थान, बारामती (महाराष्ट्र) के एक हालिया अनुमान में पाया गया कि, भारत के विभिन्न राज्यों में 3,000–4,000 हेक्टेयर में ड्रैगन फलों की खेती की जाती है और देश में हर साल लगभग 12,000 टन फल का उत्पादन होता है।

भारत में, किसान मुख्यत: तीन किस्मों (त्वचा एवं गूदे के रंग के आधार पर) की खेती करते हैं:

1. गुलाबी त्वचा एवं सफेद गूदे वाला फल
2. गुलाबी त्वचा एवं लाल गूदे वाला फल
3. पीली त्वचा एवं सफेद गूदे वाला फल

जलवायु

ड्रैगन फल को उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र की विभिन्न कृषि–जलवायु में उगाया जाता है। ड्रैगनफल की खेती के लिए उष्ण जलवायु जिसमें, निम्नतम वार्षिक वर्षा 50 से.मी. और अनुकूलतम तापमान 18 से 30 डिग्री सेल्सियस जिसमें सापेक्ष आर्द्रता का स्तर अच्छा हो, सर्वोत्तम मानी जाती है। इसकी खेती के लिए अत्यधिक धूप एवं तापमान उपयुक्त नही है।

मृदा

ड्रैगनफल की खेती रेतीली दोमट मृदा से लेकर दोमट मृदा जैसी विभिन्न प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है, परन्तु इसकी खेती के लिए कार्बनिक पदार्थ से भरपूर, उचित जल निकास वाली काली मृदा, जिस का पी.एच मान 5.5 से 7 हो, अच्छी मानी जाती है।

प्रवर्धन

ड्रैगनफल का व्यावसायिक प्रवर्धन मुख्यत: कलम (कटिंग) द्वारा किया जाता हैं क्योंकि बीज से पौधे तैयार करने से पौधे फलने में अधिक समय लगता हैं। कटिंग से इसका प्रवर्धन करने हेतु एक साल पुरानी गहरे हरे रंग की 20–25 सें.मी. की कलम को काटलें, कटिंग लेने के बाद कटे हुए सिरों पर फफूंदनाशक लगादें और कटिंग को धूप में दो–तीन दिन के लिए सूखने दें। जब कलम कीटिप्स सफेद हो जाए तब कलम को फफूंदनाशी तथा इंडोल ब्यूटायरिक ऐसिड (आई.बी.ए.) से उपचारित कर पहले गमले/पॉलीबैग अथवा उठी हुईं क्यारी में लगाया जाता है, इसके लिए गमलों में सूखे गोबर, बलुई मृदा तथा रेत को 1:1:2 के अनुपात से भरकर छाया में रख दिया जाता है। कलम लगाने के 20 से 30 दिन बाद उसमें अंकुरण प्रारंभ हो जाता हैं। पौधो को 45 से 50 दिन बाद मुख्य खेत में स्थानांतरित कर दें।

सिंचाई

ड्रैगनफल एक ऐसा पौधा हैं जिसकी जल मांग कम होती है, परन्तु कम गहरी जड़ों के कारण इसको सिंचाई की आवश्यकता होती है, इसके लिए बूंद बूंद सिंचाई प्रणाली सबसे उपयुक्त है। इसको मार्च से मई माह में सूर्य की तपन से बचाने हेतु कम सिंचाई की आवश्यकता होती है।

पोषक तत्व प्रबंधन

अच्छी उपज हेतु 15 किलो ग्राम गोबर की खाद 250 से 300 ग्राम नीम की खली प्रतिपोल मिट्टी में मिला देना चाहिए। प्रथम ओर दितीय वर्ष में 500 ग्राम नाइट्रोजन, 500 ग्राम फास्फोरस, 300 ग्राम पोटास को 4 भाग में तीन महीने के अंतराल पर देना चाहिए। तीसरे साल के उपरान्त 10 कि. ग्रा. गोबर की खाद व 700 ग्राम नाइट्रोजन, 800 ग्राम फास्फोरस, 600 ग्राम पोटास को 4 भाग में तीन महीने के अंतराल पर देना चाहिए।

छंटाई एवं कटाई

ड्रैगन फल एक तेजी से बढ़ने वाला बेल है जिसे शीर्ष पर एक रिंग के साथ लम्बवत खंभे जैसे सहारे की आवश्यकता होती है। ड्रैगन फल का आर्थिक जीवनकाल 20 वर्ष से अधिक है और पूर्ण फल देने की अवधि के दौरान पौधे फलों से लद जाते हैं।

इस प्रकार इसे बहुत मजबूत और टिकाऊ सहायक संरचनाओं की आवश्यकता होती है। प्रबलित सीमेंट कांक्रीट (आरसीसी) कास्ट पोल, ऊंचाई में दो मीटर, शीर्ष पर एक वर्गाकार/आयताकार प्लेट के साथ पौधों को सहारा देने के लिए उपयोग किया जाता है। 2.5x2 मीटर, 3x1.5 मीटर, 3x3 मीटर और 4x3 मीटर जैसे विभिन्न स्थानों पर आरसीसी पोल की संरचना खड़ी की जा सकती है।

पुष्प कार्यिकी एवं परागण

ड्रैगन फल में खास यह है कि इसके फूल बहुत ही सुगंधित होते हैं, जो रात में ही खिलते हैं और सुबह जल्दी बंद हो जाते हैं, ड्रैगन फल के फूल का वर्तिकाग्र परागकोशों से दूर फैला हुआ है, जो संभावित स्व–बाँझपन के कारण पर–परागण को बढ़ाता है। ये पर–परागण के लिए चमगादड़, पतंगे या मधुमक्खियों पर अत्यधिक निर्भर होते हैं।

ड्रैगन फल में हस्त–परागण एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है

फलों की तुड़ाई

मई जून में इसमें फूल आते हैं। फूल आने के 30–35 दिन बाद फल तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। अच्छी तरह से प्रबंधित बगीचों में पौधे, रोपण के पहले वर्ष बाद से ही फल देना शुरू कर सकते हैं, लेकिन महत्वपूर्ण आर्थिक फलों की पैदावार तीसरे वर्ष से शुरू होती है। प्रबंधन की विधियों के आधार पर प्रत्येक फल का वजन लगभग 200 से 700 ग्राम होता है। औसत उपज 5 टन प्रति एकड़ तक हो सकती है।

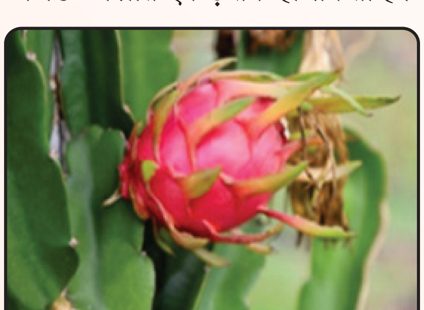

फलों का भंडारण

ड्रैगनफल को तोड़ने के बाद फलों को कमरे के तापमान यानी 25 डिग्री सेल्सियस पर 5 से 7 दिन तक संग्रह किया जा सकता है। फलों को 8 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 20–25 दिन तक भंडारण किया जा सकता हैं।

जिसके लिए जब आपका ड्रैगन फल फूल लगभग पूरी तरह से खुल जाए (मध्य रात्री लगभग 10–12बजे), एक ब्रश लें और ब्रश के ब्रिसल्स को पंखों के खिलाफ रगड़ें। इसे सुबह के बजाय रात में करें ब्रश में उपस्थित सभी पराग को स्टिग्मा पर रगड़ें। जितना हो सके पूरे स्टिग्मा को कोट करना सुनिश्चित करें, और कई बार दोहराएं, क्योंकि यह वह जगह है जहां पराग अंडाशय में नीचे जाते हैं, निषेचन की अनुमति देते हैं और इस प्रकार फल बनते हैं।

इस फल के पोषक मूल्य के कारण महानगरीय शहरों में फलों की अत्यधिक मांग है। मुंबई, पुणे और सूरत के बाजारों में फलों के दाम 50 रुपये से लेकर 120 रुपये प्रति किलो तक हैं। खुदरा विक्रेता स्थानीय बाजार में 60 रुपये से 100 रुपये प्रति फल के हिसाब से फल बेचते हैं।

पौध संरक्षण उपाय

रोगः

1. एन्थ्रेक्नोजः कटाई से पहले मैन्कोजेब 2 ग्राम/लीटर या कार्बन्डाजिम 1 ग्राम/लीटर का छिड़काव करें। क्लोरोथालोनिल 2 ग्राम/लीटर, 15 दिनों के अंतराल पर 3 बार छिड़काव लेने से एन्थ्रेक्नोज नियंत्रित होगा।
2. नरमसड़न (सॉफ्टरॉट): बीमारी से प्रभावित तनों की छंटाई कर पौधे से अलग कर दे तथा कॉपर सल्फेट–सफेदी का छिड़काव करें। बीमारी की रोकथाम हेतु बीमारी की शुरुआत से पहले समय पर तांबा आधारित कवकनाशी का छिड़काव करें। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2%) इस बीमारी के प्रबंधन के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है।

पोषण गुणवत्ता

ड्रैगनफल में प्रोटीन, फाइबर, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, फास्फोरस, आयरन आदि पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

पोषक तत्व	मात्रा (प्रति 100 ग्राम ताजा फल में)
पानी	84 ग्राम
ऊर्जा	57 किलो कैलोरी
कार्बोहाइड्रेट	15.2 ग्राम
प्रोटीन	0.36 ग्राम
कुल लिपिड (वसा)	0.14 ग्राम
शर्करा	9.75 ग्राम
कुल फाइबर	3.1 ग्राम
पोटेशियम	116 मिलीग्राम
कैल्शियम	9 मिलीग्राम
मैग्नीशियम	7 मिलीग्राम
फॉस्फोरस	12 मिलीग्राम
आयरन	0.18 मिलीग्राम
विटामिन सी (एस्कॉर्बिक एसिड)	4.3 मिलीग्राम

स्त्रोतः फूड डेटा सेंट्रल यू.एस.डी.ए.

स्वास्थ्य लाभ

- ड्रैगनफल में पोषक तत्वों के साथ ही विभिन्न प्रकार के एंटीऑक्सीडेंट भी भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं, जिनमें बीटालेंस, हाइड्रॉक्सी सिनामेट्स और फ्लेवोनोइड्स आदि मुख्य हैं ।
- ड्रैगनफल में पाए जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट मुक्त रेडिकल्स से कोशिकाओं को बचाते है, इसमें पाए जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने, कैंसर जैसी भयानक बीमारी को कम करने, लीवर को बढ़ने से रोकना तथा हृदयघात के जोखिम को कम करते हैं।
- ड्रैगनफल में प्रीबायोटिक फाइबर होता है जो पेट में लाभकारी बैक्टीरिया के विकास को बढ़ाता है, जिससे पाचनतंत्र को मजबूत करने, वजन को कम करने, लीवर में वसा को कम करने में मदद करता है।
- इसमें विटामिन बी1, बी2 और बी3 पाए जाते हैं, जो ऊर्जा उत्पादन, कार्बोहाइड्रेट चयापचय, भूख बढ़ाने, खराब कोलेस्ट्रॉल को कम करने में मदद करता है।
- इसके अलावा ड्रैगनफल इंसुलिन प्रतिरोध को कम करने, मधुमेह रोग में रक्त शर्करा को नियंत्रित करने, आंख की रोशनी बढ़ाने, चेहरे की लाली बढ़ाने, तनाव दूर करने आदि में भी काफी कारगर माना जाता है। कुल मिलाकर यह फल शरीर के लिए काफी उपयोगी है।

जैव संवर्धित किस्में एवं उनकी प्रमुख विशेषतायें

अमित तोमर
भाकृअनुप–कृषि विज्ञान केन्द्र गजरौला, अमरोहा
सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, मेरठ

बायोफोर्टिफिकेशन

''बायोफोर्टिफिकेशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पौध प्रजनन के जरिए फसलों में कुछ पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ा दी जाती है – चाहे वह पारंपरिक पद्धति से हो या फिर जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से'' यह पादप प्रजनन द्वारा फसलों की पोषक गुणवत्ता बढ़ाने की तकनीक है। बायोफोर्टिफिकेशन साधारण फोर्टिफिकेशन से अलग है, क्योंकि इसमें फसलों को अधिक पौष्टिक बनाया जाता है। बायोफोर्टिफाइड तकनीक द्वारा फसलों की पोषकता में बढ़ोतरी होती है। वैज्ञानिक इन फसलों मे विकास के दौरान उनके बीज में पोषक तत्व और विटामिन, जड़ द्वारा अवशोषित कर बायोफोर्टिफाइड कर रहे हैं। गौरतलब है कि देश में आर्थिक परिवर्तन और विकास पर ध्यान दिया जाता रहा है। लेकिन दूसरी ओर भुखमरी और कुपोषण की समस्या बढ़ रही है। पारंपरिक प्रजनन तकनीक या अनुवांशिक अभियांत्रिकी द्वारा वैज्ञानिक बायोफोर्टिफिकेशन फसली किस्मों की गुणवत्ता बढ़ा रहे हैं। कुपोषण और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने में इस तकनीक को नई क्रांति के रूप में देखा जा रहा है। बायोफोर्टिफिकेशन में जिस तरह से तकनीक, कुपोषित आबादी के लिए विशेष रूप से गरीब ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध सूक्ष्म पोषक तत्वों की रेंज का विस्तार कर सकती है, जहां औद्योगिक संरचना और शैक्षिक प्रयासों की कमी होती है या लागू करने में मुश्किल हो सकती है। दरअसल, पूरक, औद्योगिक फोर्टिफिकेशन या आहार विविधीकरण के माध्यम से विटामिन और खनिज की कमी से निपटने के लिए कई प्रयासों के बावजूद, दो अरब लोगों में कमी व्यापक है। यह विशेष रूप से विकासशील क्षेत्रों में है, जहां नीरस आहार, मुख्य रूप से या पूरी तरह से मुख्य फसलों से मिलकर, जनसंख्या का दैनिक कैलोरी सेवन प्रदान करते हैं। यहां बायोफोर्टिफाइड फसल में उपस्थित सूक्ष्म पोषक तत्व, कुपोषण के बोझ को कम करने के लिए एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक, कृषि आधारित रणनीति का माध्यम हो सकता हैं। पारंपरिक प्रजनन (जैव प्रौद्योगिकी दृष्टिकोण के साथ या इसके बिना, फसल मानचित्रण और मार्कर–समर्थित प्रजनन) या मेटाबोलिक इंजीनियरिंग के उपयोग के माध्यम से स्टेपल फसल की सूक्ष्म पोषक सामग्री का संवर्धन ही बायोफोर्टिफिकेशन कहलाता है।

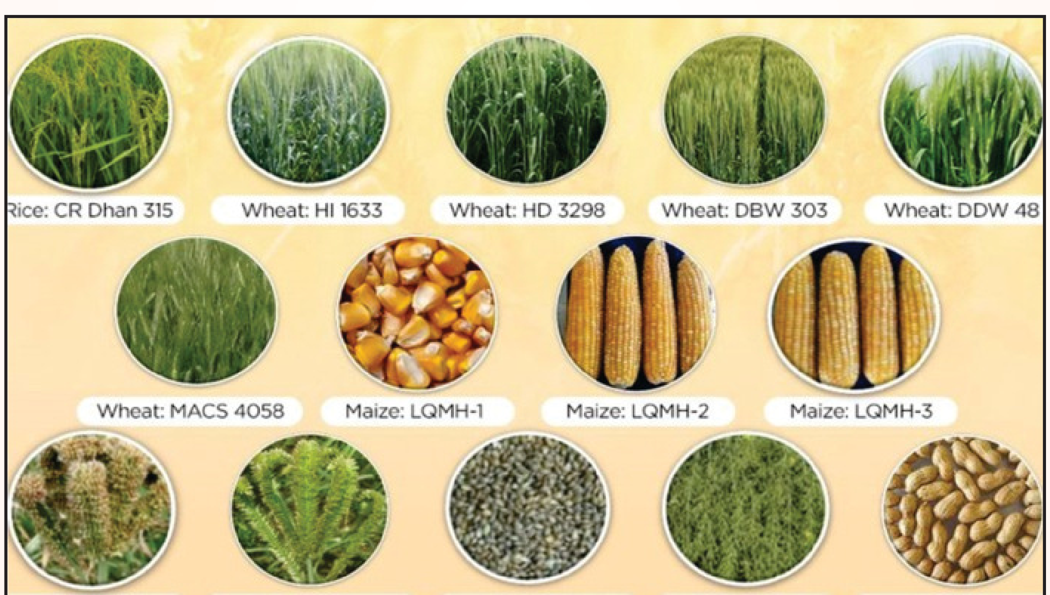

फसलों पर ऐसे करते है बायोफोर्टिफिकेशन

बायोफोर्टिफिकेशन तकनीक में परंपरागत पादप प्रजजन तकनीक से उच्च सूक्ष्म तत्व वाली किस्म का पता लगाया जाता है। इन किस्मों को उच्च उत्पादन देने वाली किस्म से संकरण करवाया जाता है। इससे इन किस्मों में उच्च उत्पादक गुणों के साथ–साथ उच्च मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्व और जरूरी विटामिन उपलब्ध हो सके, जो कि किसानों के लिए फायदेमंद हो सके।

ऐसे होता है बायोफोर्टिफिकेशन

धान : विटामिन ए, फोलिक एसिड, अधिक आयरन युक्त गोल्डन राइस पहली बायोफोर्टिफाइड फसल है। संकरण तकनीक से धान में बीटा केरोटीन जीन डाला गया है। यदि रोजाना 40 ग्राम गोल्डन चावला पकाकर खाए जो अंधापन नहीं होगा।

मक्का : विटामिन, आयरन, प्रो–विटामिन, विटामिन ई पोषक जरूरतों को पूरा करने के लिए क्यूपीएम (QPM) मक्का अच्छा विकल्प है। क्योंकि इसमें 3.3 से 4 ग्राम प्रति 100 ग्राम लाइसिन प्रोटीन पाया जाता है, जो साधारण मक्का से दोगुना है।

जैव संवर्धित किस्में एवं उनकी प्रमुख विशेषतायें

पोषक आहार मानव शरीर की सम्पूर्ण वृद्धि व विकास के लिए आवश्यक है। पोषक आहार नही मिलने से विभिन्न सूक्ष्म तत्वों की कमी शरीर को अनेक प्रकार से प्रभावित करती है जिसको सामान्य शब्दों में

कुपोषण कहा जाता है। सम्पूर्ण विश्व में लगभग 2 बिलियन जनसंख्या अपुष्ट आहार से प्रभावित है जबकि 795 मिलियन जनसंख्या कुपोषण की शिकार है। भारत में 194.6 मिलियन जनसंख्या कुपोषित है जिनमे से 44% महिलायें एनीमिया से ग्रसित है, 5 वर्ष से कम उम्र के 38.4% बच्चे छोटे कद व 35.7% बच्चे कम वजन के है। जैव संवर्धित किस्मों का विकास कर कुपोषण की स्थिति से बचा जा सकता है। यह सबसे सस्ता और सरल उपाय है। पारम्परिक प्रजनन (जैव प्रौद्योगिकी के साथ या इसके बिना, फसल मानचित्रण और मार्कर समर्थित प्रजनन) या मेटाबोलिक प्रौद्योगिकी के उपयोग के माध्यम से खाद्य फसल की सूक्ष्म पोषक तत्वों का संवर्धन जैव संवर्धन कहलाता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने जैव संवर्धित विधि से धान्य, दलहन, तिलहन, सब्जी और फल वाली फसलो में उच्च पैदावार व उच्च पोषक गुणवत्ता वाली विभिन्न जैव संवर्धित किस्मों का विकास किया है। इन किस्मों के बारे में संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है:

धान की जैव संवर्धित किस्में

1. **सी आर धान 310:** यह किस्म राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक (2016) द्वारा विकसित की गयी है। इसमें प्रोटीन की मात्रा 10.30% होती है। यह 125 दिन में पककर तैयार हो जाती है तथा 45 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से औसत उपज देती है। यह उड़ीसा, मध्य प्रदेश व उत्तर प्रदेश के लिए अनुमोदित किस्म है ।
2. **डी आर आर धान 45:** इस किस्म को भारतीय चावल अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद (2016) ने विकसित किया है। इसके दानो में जिंक की मात्रा 6 पी.पी.एम. पाई जाती है। यह किस्म 125–130 दिन में पककर 50 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार देती है। यह कर्नाटक, तमिलनाडु, तेलंगाना व आंध्रप्रदेश राज्यों में बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है।

गेंहूँ की जैव संवर्धित किस्में

1. **डब्ल्यू बी 02:** इस किस्म को भारतीय गेंहूँ और जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा (2017) में विकसित किया गया। इसमें उच्च जिंक (42 पीपीएम) व आयरन (40 पीपीएम) की मात्रा पाई जाती है। यह किस्म सिंचित अवस्था में समय से बुवाई के लिए उपयुक्त है जो 142 दिन में पककर 51.6 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की औसत उपज देती है। यह पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान (कोटा और उदयपुर संभागो को छोड़कर), पश्चिमी उत्तर प्रदेश (झाँसी संभाग को छोड़कर), जम्मू-कश्मीर के जम्मू और कठुआ जिला, हिमाचल प्रदेश के पाओंटा घाटी तथा ऊना जिला और उत्तराखंड के तराई क्षेत्र के लिए उपयुक्त किस्म है।
2. **एच पी बी डब्ल्यू 01:** अखिल भारतीय गेंहूँ और जौ समन्वित अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियान के द्वारा (2017) इस किस्म को विकसित किया गया। इसमें अधिक जिंक (40 पीपीएम) व आयरन (40.6 पीपीएम) की मात्रा पाई जाती है। यह सिंचित अवस्था में समय से बुवाई के लिए उपयुक्त है और यह 141 दिन में पकने वाली किस्म है। यह एक हैक्टेयर में 51.7 क्विंटल तक औसत पैदावार देती है। यह पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान (कोटा और उदयपुर संभागो को छोड़कर), पश्चिमी उत्तर प्रदेश (झाँसी संभाग को छोड़कर), जम्मू-कश्मीर के जम्मू और कठुआ जिला, हिमाचल प्रदेश के पाओंटा घाटी तथा ऊना जिला और उत्तराखंड के तराई क्षेत्र के लिए अनुमोदित किस्म है।
3. **पूसा तेजस (एच आई 8759):** अखिल भारतीय गेंहूँ और जौ समन्वित अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियान के द्वारा इस किस्म को विकसित किया गया। इसमें अधिक प्रोटीन (12%), जिंक (42.8 पीपीएम) व आयरन (42.1 पीपीएम) की मात्रा पाई जाती है। यह सिंचित अवस्था में समय से बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है। यह एक हैक्टेयर में 50 क्विंटल तक औसत उपज देती है। यह मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, राजस्थान व उत्तरप्रदेश के लिए अनुमोदित किस्म है।
4. **पूसा उजाला (एच आई 1605):** यह किस्म आई.सी.ए.आर.-आई.ए.आर. आई., रीजनल स्टेशन, इंदौर, मध्य प्रदेश द्वारा विकसित की गयी है। इसमें 13 प्रतिशत प्रोटीन, 43 पीपीएम आयरन व 35 पीपीएम जिंक पाया जाता है। यह 30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर औसत उपज देती है तथा महाराष्ट्र, कर्नाटक व तमिलनाडु राज्यों के लिए अनुमोदित है।
5. **एम ए सी एस 4028 :** इसमें 14.7 प्रतिशत प्रोटीन, 1 पीपीएम आयरन व 40.3 पीपीएम जिंक पाया जाता है। यह 19.3 क्विंटल प्रति हेक्टेयर औसत उपज देती है तथा महाराष्ट्र, कर्नाटक व तमिलनाडु राज्यों के लिए अनुमोदित है।

मक्का की जैव संवर्धित किस्में

1 **पूसा विवेक क्यू.पी.एम.-9 उन्नत:** इसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष (2017) में विकसित किया। यह भारत की उच्च प्रोविटामिन-ए युक्त संकर मक्का की पहली किस्म है। इसमें उच्च प्रोविटामिन-ए (8.15 पीपीएम), लाइसिन (2.67%) एवं ट्रिप्टोफैन (0.74%) पाया जाता है। यह किस्म उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र में 93 दिन में पककर 55.9 क्विंटल प्रति हैक्टेयर औसत उपज तथा दक्षिण प्रायद्वीप क्षेत्र में 83 दिन में पककर 59.2 क्विंटल प्रति हैक्टेयर औसत उपज देती है। यह खरीफ मौसम में जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के पहाड़ी क्षेत्र, उत्तर पूर्वी राज्यों, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, तेलंगाना व आंध्रप्रदेश राज्यों बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है।

2 **पूसा एच.एम. 4 उन्नत:** भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष (2017) में इस किस्म को विकसित किया। इसमें अधिक ट्रिप्टोफैन (0.91%) व लाइसिन (3.62%) पाया जाता है। यह 87 दिन में पककर 64.2 क्विंटल प्रति हेक्टेयर औसत उपज देने वाली किस्म है। यह पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, उत्तराखंड (मैदानी क्षेत्र) व उत्तर प्रदेश (पश्चिमी क्षेत्र) में खरीफ में बुवाई हेतु उपयुक्त किस्म है।

3. **पूसा एच.एम. 8 उन्नत:** इस किस्म को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष (2017) में विकसित किया। इसमें अधिक ट्रिप्टोफैन (1.06%) व लाइसिन (4.18%) की मात्रा पाई जाती है। फसल के पकने का काल 95 दिन है और इससे औसत उपज 62.6 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से प्राप्त होती है। यह महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, तेलंगाना व आंध्रप्रदेश राज्यों खरीफ मौसम में बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है।

4. **पूसा एच.एम. 9 उन्नत :** इस किस्म को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष (2017) में विकसित किया। इस किस्म में ट्रिप्टोफैन (0.68%) व लाइसिन (2.97%) की मात्रा पाई जाती है। यह 89 दिन में पककर 52 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से पैदावार देती है। यह खरीफ मौसम में बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश (पूर्वी क्षेत्र) और पश्चिमी बंगाल में बुवाई हेतु अनुमोदित किस्म है।

बाजरा की जैव संवर्धित किस्में

1. **एच.एच.बी. 299:** इस किस्म को अखिल भारतीय समन्वित बाजरा अनुसंधान परियोजना के तहत चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिस्सार द्वारा इकरीसैट, हैदराबाद के सहयोग से वर्ष 2017 विकसित किया गया है। यह आयरन (73 पीपीएम)और जिंक (41 पीपीएम) से भरपूर संकर किस्म है। यह 81 दिन में पककर तैयार होने वाली किस्म है तथा इससे 32.7 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार होती है। यह हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, पंजाब, दिल्ली, महाराष्ट्र व तमिलनाडु राज्यों के लिए खरीफ मौसम में खेती के लिए उपयुक्त किस्म है।
2. **ए.एच.बी. 1200:** यह किस्म अखिल भारतीय समन्वित बाजरा अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत बसंतराव नाइक मराठवाड़ा कृषि विद्यापीठ, परभनी द्वारा इकरीसैट, हैदराबाद के सहयोग से वर्ष 2017 विकसित की है। इसमें आयरन (73 पीपीएम) की प्रचुर मात्रा पाई जाती है। यह 78 दिन में पककर 32 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार देती है। यह हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, पंजाब, दिल्ली, महाराष्ट्र व तमिलनाडु राज्यों के लिए खरीफ मौसम में बुवाई के लिए अनुमोदित किस्म है।

मसूर की जैव संवर्धित किस्में

1. **पूसा अगेती मसूर:** भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष 2017 में इस किस्म को विकसित किया है। इस किस्म में आयरन (65 पीपीएम) की उच्च मात्रा पाई जाती है। इसका बीज नारंगी रंग व मध्यम आकार का होता है और यह वर्षा सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्म है। यह 100 दिन में पककर 13 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की पैदावार देती है। यह उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व छतीसगढ राज्यों के लिए उपयुक्त किस्म है।
2. **आई.पी.एल. 220:** यह भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा वर्ष 2018 में विकसित की गयी है। इस किस्म में उच्च मात्रा में आयरन (73 पीपीएम) व जिंक (51 पीपीएम) पाया जाता है। यह बारानी क्षेत्रों में रबी मौसम में बुवाई हेतु उपयुक्त किस्म है। यह 121 दिन में पककर 13.8 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से पैदावार देती है। यह उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल व आसाम के लिए उपयुक्त किस्म है।

सरसों की जैव संवर्धित किस्में

1. **पूसा सरसों 30:** यह भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा (2013) विकसित किस्म है जिसमे इरुसिक अम्ल (टोक्सिक) की 2% से कम मात्रा पाई जाती है जो प्रचलित किस्मों में 40% से भी अधिक पाया जाता है। इसमें 37.7% तेल की मात्रा पाई जाती है और यह सिंचित क्षेत्रों में समय से बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है। यह 137 दिन में तैयार होकर 18.2 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से औसत पैदावार देती है। यह उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तराखंड व राजस्थान राज्यों में बुवाई हेतु उपयुक्त किस्म है।
2. **पूसा डबल जीरो 31:** यह भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा (2016) देश की पहली केनौला गुणवत्तायुक्त भारतीय सरसों की विकसित की गयी किस्म है। इसके तेल में इरुसिक अम्ल (टोक्सिक) की 2 प्रतिशत से कम और तेल रहित खली में ग्लुकोसिनोलेट 30 पीपीएम से कम पाया जाता है। यह सिंचित क्षेत्रों में समय से बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है। इसकी फसल 142 दिन में पाक जाती है तथा औसतन 23 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर उपज देती है। यह राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली पश्चिमी उत्तर प्रदेश, जम्मू व कश्मीर के मैदानी क्षेत्र तथा हिमाचल प्रदेश के लिए अनुमोदित किस्म है।

फूलगोभी की जैव संवर्धित किस्में

1. **पूसा बीटा केसरी 1:** देश की पहली जैव संवर्धित फूलगोभी की किस्म जो भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा वर्ष 2015 में विकसित की गयी है। इसमें 8 से 10 पीपीएम बीटा कैरोटीन पाया जाता है जो प्रचलित किस्मों में न के बराबर होता है। इससे 40–50 टन प्रति हैक्टेयर उपज प्राप्त होती है और यह दिल्ली में बुवाई के लिए अनुमोदित किस्म है।

शकरकंद की जैव संवर्धित किस्में

1. **भू सोना:** केन्द्रीय कंद फसल अनुसंधान संस्थान, तिरुवनंतपुरम द्वारा वर्ष 2017 में विकसित की गयी किस्म है। इसमें उच्च बीटा कैरोटीन 14 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम पाया जाता है। इसमें सुखा पदार्थ, स्टार्च व कुल शर्करा की मात्रा क्रमश: 27–29%, 20% व 2–2.4% पाई जाती हैं। इससे 19.8 टन प्रति हेक्टेयर कंद की पैदावार होती है और यह उड़ीसा के लिए अनुमोदित किस्म है।
2. **भू कृष्णा:** यह किस्म केन्द्रीय कंद फसल अनुसंधान संस्थान, तिरुवनंतपुरम द्वारा वर्ष 2017 में विकसित की गयी। इसमें 90 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम एन्थोसायनिन पाया जाता है। इसमें सुखा पदार्थ, स्टार्च व कुल शर्करा की मात्रा क्रमश: 24–25.5%, 5% व 1.9–2.2% पाई जाती है। यह लवणता के प्रति सहिष्णु किस्म है और 18 टन प्रति हेक्टेयर कंद की पैदावार देती है। यह उड़ीसा में बुवाई हेतु उपयुक्त किस्म है।

अनार की जैव संवर्धित किस्में

सोलापुर लाल: इस किस्म को राष्ट्रीय अनार अनुसंधान केंद्र, पुणे ने वर्ष 2017 में विकसित किया। इसके दानो में उच्च आयरन (5.6–6.1 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम), जिंक (0.64–0.69 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम) व विटामिन–सी (19.4–19.8 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम) पाए जाते है इससे 23–27 टन प्रति हेक्टेयर की दर से फल की पैदावार होती है। यह देश के अर्धशुष्कीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्म है।

खरीफ ऋतु में अरहर की जैविक खेती

राजीव कुमार[1], प्रदीप कुमार[2] एवं अवधेश कुमार[1]
[1]संस्कृति विश्वविद्यालय, मथुरा, (उ.प्र.)
[2]वीरकुंवर सिंह कृषि महाविद्यालय, डुमराव, बक्सर (बिहार एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, सबौर भागलपुर, बिहार)

सम्पूर्ण भारत में अरहर की दाल बड़े चाव से खाई जाती है, इसकी हरी फलियों की सब्जी भी बनाई जाती है। पौधों की हरी पत्तियां पशुओं के लिए स्वादिष्ट तथा पौष्टिक चारे के रूप में प्रयोग की जाती है एवं दाल के छिलके और अवशेषों का उपयोग पशुओं के लिए आहार के रूप में किया जाता है। दाना निकलने के बाद अरहर की सूखी लकड़ी का उपयोग घरों में खाना बनाने के लिए, आग जलाने के लिए तथा छप्पर बनाने के काम में लिया जाता है। अरहर एक दलहनी फसल होने के कारण भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के साथ–साथ भूमि के कटाव को रोकने में मदद करती है। अरहर की मूसला जड़ होने के कारण पौधों में सूखा सहन करने की क्षमता काफी अधिक होती है। भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान, भोपाल में पिछले कुछ वर्षो से अरहर की जैविक खेती पर शोध कार्य प्रारंभ किया गया है जिसके परिणामस्वरूप यह स्पष्ट हो गया है कि जैविक पद्धति द्वारा अरहर की खेती करके भरपूर उपज ली जा सकती है। तथा जैविक खेती से जो उत्पादन मिलता है उसका भोजन के रूप में प्रयोग करने से हमारे स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है क्योंकि इसमें किसी भी प्रकार का रसायन प्रयोग नहीं किया जाता तथा जैविक खेती से उत्पादन को बाजार में बेचने पर अधिक मूल्य मिलता है।

जलवायु – अरहर आर्द्र तथा शुष्क दोनों प्रकार के गर्म इलाकों में भली प्रकार से उगाई जा सकती है लेकिन शुष्क भागों में इसे हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है। फसल की प्रारम्भिक अवस्था में पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए नम जलवायु की आवश्यकता होती है। बहुत अधिक वर्षा वाले क्षेत्र में अरहर की फसल सफलता पूर्वक उगाई जा सकती है।

भूमि का चयन – अरहर की खेती के लिए बलुई दोमट व दोमट भूमि अच्छी होती है परन्तु इसकी खेती हर प्रकार की भूमि पर आसानी से की जा सकती है। वह भूमि जहां पर जल निकास का उचित प्रबंध हो और जिसका पी.एच. मान उदासीन हो, वह भूमि सर्वोत्तम होती है। लवणीय तथा क्षारीय भूमि में भी इसकी खेती की जा सकती है लेकिन उपज बलुई एवं दोमट मिट्टी की अपेक्षा कम मिलता है।

खेत की तैयारी – रबी फसल की कटाई के पश्चात् पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद दूसरी जुताई देशी हल से करनी चाहिए। इसके पश्चात् पाटा लगाकर खेत के ढेलों को तोड़कर मिट्टी को भुरभुरा करना चाहिए ताकि खेत समतल हो जाए एवं वर्षा ऋतु में जल निकास सही बना रहे।

किस्मों का चयन – जैविक पद्धति से खेती करते समय देशी/स्थानीय प्रजातियों का चयन करना चाहिए जो कि भूमि एवं जलवायु के अनुकूल होने के साथ–साथ कीटों एवं बीमारियों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता हो।

जैविक खेती के लिए उपयुक्त प्रजातिया जैसेः– नरेन्द्र–1, आशा, उपास–120, पूसा–अगेती, शारदा, मुक्ता, जवाहर–4, खरगौन–2, आई. सी.पी.एल.– 151, बसंत आदि।

बुआई का समय

जैविक खेती में फसल की बुआई समय से या अगेती करना लाभदायक रहता है, जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो वहां पर 1–15 जून तक फसल की बुआई कर देनी चाहिए। वर्षा पर निर्भर रहने वाले क्षेत्रों में बुआई जुलाई के प्रथम सप्ताह में ही कर देनी चाहिए। बुआई के समय का प्रभाव अरहर के उपज पर सीधा पड़ता है। जुलाई के प्रथम सप्ताह के बाद बुआई करने से उपज में कमी की संभावना होती है तथा पौधों को बीमारी एवं कीड़े से ग्रसित होने की संभावना बनी रहती है।

बीजोपचार एवं बुआई विधि

वातावरण की नत्रजन के प्रभावशाली जैवस्थिरीकरण के लिए अरहर के बीजों को राइजोबियम कल्चर (अरहर कल्चर/जीवाणुटी) से उपचारित करते हैं। प्रत्येक कि.ग्रा. बीज के लिए 5 ग्रा. कल्चर का उपयोग करना चाहिए। इसके लिए बीजों को बुआई से पहले गुड़ के घोल से नम करके उसे जीवाणु कल्चर के साथ अच्छी तरह मिलाते हैं और छाया में सुखाते हैं। फॉस्फोरस विलेयकारी जीवाणु (पी.एस.बी.) कल्चर से बीज को उपचारित करके भूमि में फॉस्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है। अरहर के बीजों को 4–6 से.मी. गहराई पर सीड ड्रील के द्वारा बोना चाहिए। बीज की मात्रा एवं फसल अंतरण फसल प्रजातियों पर निर्भर करती है।

बीज की मात्रा

1. देरी से पकने वाली किस्में–20 कि.ग्रा./हेक्टेयर
2. मध्यम पकने वाली किस्में–15 कि.ग्रा./हेक्टेयर
3. जल्दी पकने वाली किस्में–12–15 कि.ग्रा./हेक्टेयर

जब अरहर की फसल को किसी अन्य फसल के साथ मिश्रित रूप में बोया जाता है तो बीज की मात्रा को कम करते हुए 5–8 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से बोया जाता है। अरहर की अगेती फसल में 12–15 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर बीज की दर से बोया जाता है जिससे पंक्ति से पंक्ति की दूरी 75–90 से.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 25–30 से.मी. होनी चाहिए। अरहर की फसल को सदैव पंक्तियों में बोना चाहिए, मेढ़ पर फसल की बुआई करने से अधिक उपज प्राप्त होती है।

जैविक पोषण प्रबंधन

आमतौर पर यह धारणा है कि दलहनी फसलों में जैविक खादों जैसे गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट खाद देने की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु वास्तविकता यह है कि इन फसलों की जड़ें मूसला होती हैं जो कि काफी गहराई तक जाती हैं। इन जड़ों में लाखों की संख्या में लाभदायक जीवाणु पाये जाते हैं, जिनकी समुचित वृद्धि के लिए आवश्यक है कि खेत की मिट्टी भुरभुरी एवं हवादार रहे, जिससे जीवाणुओं को पर्याप्त ऑक्सीजन मिल सके एवं जीवाणुओं की सक्रियता बढ़ सके। जीवांशीय पदार्थो को भूमि में मिलाने से भूमि की जलधारण क्षमता बढ़ जाती है। इसके साथ ही

इन जैविक खादों के द्वारा सभी प्रकार के पोषक तत्व पौधों को पर्याप्त अवस्था में मिल जाते हैं। कुछ प्रमुख जैविक खादों में विद्यमान पोषक तत्वों के आधार पर अरहर के लिए जैविक खादों को निम्नवत बताया जा रहा है।

जैविक खाद में पोषक तत्वों की मात्रा

खाद	नत्रजन की मात्रा
देशी/गोबर की खाद	0.5–1.0
कुक्कुट खाद	1.5–2.0
केंचुआ खाद	1.0–1.5
फारकोकम्पोस्ट	0.5–1.0

कुक्कुट खाद का उपयोग करने से पहले 45–60 दिन तक उसे सड़ाना/कम्पोस्ट करना चाहिए। कभी भी कच्ची खाद का उपयोग न करें, इससे खेत में दीमक लगने की आशंका होती है। जीवांशीय खादों को बुआई से 10–15 दिन पूर्व ही खेत में बिखेरकर समान रूप से ऊपरी 15 से.मी. गहराई तक अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। जब जैविक खादों का सम्मिलित उपयोग हो रहा हो तो इस बात का प्रमुख रूप से ध्यान रखना चाहिए कि फसल को कुल मिलाकर 30 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर मिले। इन खादों के साथ ही रॉकफॉस्फेट की 50–100 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करना चाहिए।

फसल सुरक्षा – कीटों एवं बीमारियों के सफलता पूर्वक प्रबंधन के लिए प्रतिरोधक अथवा सहनशील किस्मों को उगाना चाहिए। अरहर की फसल में लगने वाले प्रमुख कीटफली बेधक, अरहर की फलीमक्खी एवं पत्ती लपेटक कीट हैं। इनसे बचाव के लिए बुआई के 60 एवं 90 दिन पर नीम के तेल (एजाडिरेक्टीन 0.03%) का छिड़काव करना चाहिए। अरहर की बुआई के समय बीज को ट्राइकोडरमा 2% से बीज शोधन एवं भूमि शोधन करके बुवाई करने से उकठा बीमारी के प्रकोप की समस्या कम हो जाती है।

कीट रोकथाम

फली छेदक इल्लियाँ

लक्षण–फली छेदक, छोटी इल्लियाँ तो फलों के हरे उत्तकों को खाती हैं, बड़े होने पर कलियों, फूलों, फल्लियों व बीजो पर नुकसान करती है। इल्लियाँ फलियों पर टेड़–मेढ़े छेद बनाती है, जिससे वह फली में प्रवेश करती है। इल्लियाँ आमतौर पर नरम–नरम दानों को खाती हैं।

प्लूम माथ

लक्षण– इस कीट की इल्ली फली पर छोटा सा गोल छेद बनाती है। प्रकोपित दानों के पास ही इसकी विष्टा देखी जा सकती है। कालान्तर में प्रकोपित दाने के आसपास लाल रंग की फंफूद आ जाती है।

फलीमक्खी

लक्षण– फलीमक्खी के अंडों से छोटे सफेद रंग के मेगट बाहर आते हैं और वृद्धिरत दानों को खाने लगते हैं, जिसके कारण दानों पर तिरछी सुरंग बन जाती है तथा दाने का आकार छोटा रह जाता है। प्रकोपित दाने न तो खाने के न ही बोने के काम आते हैं।

रोकथाम

1. प्रकाश प्रपंच का उपयोग कर प्रौढ़ कीटों को नष्ट करें।
2. फेरोमोनट्रेप लगावें।
3. पौधे के फूल अवस्था आने पर पक्षियों के बैठने का आश्रय स्थल की व्यवस्था करें।
4. नीम का तेल 1 से 1.5 प्रतिशत, चिपचिपा पदार्थ 5 प्रतिशत या एजाडिरेक्टा 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें।
5. नीम का तेल 1.5 प्रतिशत, करंज का तेल 1.5 प्रतिशत, निम्बिसडिन 5, सीताफल के बीज का सत 5 प्रतिशत, मदार के पत्ती का सत 5 प्रतिशत, का छिड़काव करें।
6. पक्षी आश्रय स्थल की व्यवस्था करना।
7. प्राकृतिक शत्रु– यूलोफिड एंव यूडेरस एग्रोमाइजी कीट फलीमक्खी के मे गट पर परोपजीवी है।
8. प्यूवेरियावेसियाना 2% का घोल बनाकर छिड़काव करें।

बीमारियाँ एवं उसकी रोकथाम – सरकोस्पोरा पत्ता धब्बा–भूरे या काले रंग को गोल से कोणीय धब्बे पत्तों पर प्रकट होते हैं। आर्द्रमौसम में इतने धब्बे पड़ते हैं कि वह आपस में मिलकर बड़े बेतरतीव धब्बे बनाते हैं। इस स्थिति में पत्ते मुरझा जाते हैं और सुखकर गिर जाते हैं।

रोकथाम

1. प्रायः स्वस्थ एवं रोगरोधी बीज का चयन करें।
2. गौमूत्र तथा छाछ के मिश्रण या पंचगव्य प्रत्येक का 10 प्रतिशत का छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करें।

चूर्ण आसिता– पत्तों पर सफेद चूर्णिल सी बढ़वार आती है जो तने व पौधे के अन्य भागों पर फैल जाती है।

रोकथाम– छाछ या गौमूत्र में हींग मिलाकर छिड़काव करें, 1 लीटर में 5 ग्राम की दर से।

फसल की कटाई एवं गहाई – अरहर की किस्म के अनुसार फसल 120–240 दिन तक पककर तैयार हो जाती है। अगेती फसल नवम्बर–दिसम्बर एवं देर से पकने वाली फसल मार्च–अप्रैल में काटी जाती है। फसल को अच्छी प्रकार सुखाकर डंडों से झड़ाई कर लेते हैं। इसके लिए पुलमैनथ्रेसर भी काम में लाया जा सकता।

उपज – प्रथम वर्ष में जैविक खेती की उपज रासायनिक खेती की अपेक्षा 5–7 प्रतिशत कम हो जाती है उसके बाद जैविक खेती की उपज में वृद्धि होती है। किस्मों के अनुसार दाने की उपज 15–30 क्विंटल/हेक्टेयर तक प्राप्त हो जाती है तथा साथ ही 50–60 क्विंटल/हेक्टेयर डंठल प्राप्त होती है। अरहर के दाने को भंडारित करने से पहले सुखाकर 10 से 12% नमी को रखना चाहिए।

अरहर के जैविक उत्पादन से लाभ :

1. मृदा के जैविक कार्बन एवं उर्वरता में सुधार होता है।
2. मृदा में होने वाली जैविक क्रियाओं में सुधार होता है।
3. जैविक खादों, कीटों तथा बीमारियों के रोकथाम में काम आने वाले उत्पादों का उत्पादन किसान अपने खेत पर ही कर सकता है जिससे उत्पादन लागत में कमी हो जाती है।
4. जैविक विधि द्वारा खेती करने से कचरे के उचित प्रबंधन के कारण प्राकृतिक संतुलन बना रहा है तथा साथ ही पर्यावरण प्रदूषण में भी कमी आती है।
5. अरहर की पत्तियां झड़कर खेती की मिट्टी में मिल जाती हैं और मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ने के साथ–साथ मिट्टी में कार्बन की मात्रा को बढ़ाती है।

गन्ने की वैज्ञानिक खेती से बढ़ेगी किसानों की आय

आर.एस. सेंगर, वर्षा रानी, आंकाक्षा सिंह, हुविष्का दत्त एवं शालिनी गुप्ता
सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

विश्व में गन्ना उत्पादन करने वाले देशों में भारत प्रथम स्थान पर है। विश्व में कुल गन्ना उत्पादन में भारत का योगदान 13.3 प्रतिशत जबकि एशियाई देशों में 41.1 प्रतिशत है वर्तमान में हमारे देश में 300 मिलियन टन गन्ना उगाकर 18.9 मिलियन टन चीनी का उत्पादन किया जा रहा है। देश में गन्ने की औसत उत्पादकता लगभग 65 टन प्रति हेक्टेयर है जबकि दक्षिण भारत में गन्ने की उत्पादकता 80 एवं 100 टन प्रति हेक्टेयर रहती है। गन्ने का प्रयोग गुड़, शक्कर व चीनी के अलावा इथेनॉल, औषधियों, कागज, शराब एवं अन्य पेय पदार्थो, कार्बनिक खादों, पेंट एवं सह–विद्युत उत्पादन में भी किया जाता है। गन्ने का अंगोला पशुओं के लिए स्वादिष्ट व पौष्टिक चारे के रूप में प्रयोग किया जाता है।

गन्ना एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। भारत में शर्करा वाली फसलों में गन्ने की खेती प्रमुख रूप से की जाती है। हमारे देश में गन्ने की खेती लगभग 41.8 लाख हेक्टेयर भूमि में होती है। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, हरियाणा, उत्तराखण्ड और बिहार प्रमुख गन्ना उत्पादक राज्य है। देश के कई राज्यों में गन्ना किसानों की आय के लिए एक महत्वपूर्ण नकदी फसल बन चुकी है। भविष्य में घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करने और चीनी की कीमतों को बढ़ने से रोकने के लिए चीनी का उत्पादन बढ़ाना नितान्त आवश्यक है अन्यथा जो भारत देश अब तक चीनी के मामले में आत्मनिर्भरता के साथ ही निर्यातक भी था। वह भविष्य में दूसरे देशों के आयात पर निर्भर रहने वाला देश बन कर रह जाएगा। अतः सुनियोजित ढंग से गन्ने की फसल में खाद, उर्वरक, सिंचाई व नवीनतम तकनीकी का प्रयोग किया जाये तो अधिक से अधिक उत्पादन लेकर भरपूर लाभ कमाया जा सकता है।

जलवायु:

हमारे देश में गन्ने की खेती विभिन्न जलवायु क्षेत्रों एवं परिस्थितियों के साथ–साथ विभिन्न ऋतुओं में की जाती है। गन्ना एक उष्ण कटिबन्धीय पौधा है। गन्ने की अच्छी वृद्धि व विकास के लिए साधारणतया अधिक आर्द्रता, अधिक तापमान एवं चमकीली धूप आवश्यक है। गन्ने में अधिक शर्करा निर्माण के लिए ठण्डी एवं शुष्क जलवायु भी आवश्यक है। गन्ना उपोष्ण जलवायु परिस्थितियों के कारण शरदकालीन, बसन्तकालीन एवं ग्रीष्मकालीन मौसमों में ज्यादा प्रचलित है। गन्ने के अच्छे विकास के लिए आमतौर पर 25–25 सेन्टीग्रेड तापमान उत्तम होता है।

खेत की तैयारी:

गन्ने की फसल खेत में वर्ष भर रहती है। अतः खेत की तैयारी ऐसी करनी चाहिए कि काफी गहराई तक मिट्टी भुरभुरी हो जाये। इसके लिए पलेवा करने के बाद जैसे ही खेत जुताई की दशा में आये तो प्रथम जुताई 9 इंच की गहराई पर मिट्टी पलटने वाले हल या हैरो से करनी चाहिए। इसके बाद तीन–चार जुताईयां कल्टीवेटर से करें। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगायें जिससे खेत को भुरभुरा एवं समतल करने में मदद मिलती है।

बुवाई का समय:

हमारे देश में गन्ने की बुवाई सामान्यतः वर्ष में चार बार करते है।

बसन्तकालीन बुवाई: बसन्तकालीन गन्ने की बुवाई 15 फरवरी से अन्तिम मार्च तक ही की जाती है। जबकि पूर्वी भारत में बुवाई 15 जनवरी से फरवरी के अन्त तक करते है।

ग्रीष्मकालीन बुवाई: गीष्मकालीन गन्ने की बुवाई सामान्यतः उत्तर–पश्चिम भारत में गेहूं की कटाई उपरान्त 1 अप्रैल से 15 मई तक की जाती है। वैसे इस समय बोये गये गन्ने का अंकुरण शीघ्र व बढ़वार अच्छी होती है।

वर्षाकालीन बुवाई: वर्षाकालीन गन्ने की बुवाई जून से अगस्त माह के मध्य तक की जाती है। यह गन्ना महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश एवं कर्नाटक में बोया जाता है। इस फसल की अवधि 18 महीने की होती है। कटाई दूसरे वर्ष दिसम्बर से जनवरी माह तक की जाती है।

शरदकालीन बुवाई: अक्टूबर माह में बोये गन्ने को शरदकालीन गन्ना कहते हैं। वर्षा ऋतु के बाद उचित नमी व तापमान (25 से 30 डिग्री सेन्टीग्रेड) मिलने से इस समय बोये गन्ने का अंकुरण अच्छा होता है। शरदकालीन बुवाई बिहार में ज्यादा प्रचलित है।

उन्नतशील प्रजातियां: गन्ने की प्रजातियों को अनकी आयु, रस में शर्करा की मात्रा तथा परिपक्वता के अनुसार दो भागों में विभक्त किया जा सकता है।

जल्दी पकने वाली प्रजातियां: ये प्रजातियां सामान्यतः 10 महीने में पककर तैयार हो जाती है। इनके रस में कम से कम 16 प्रतिशत शर्करा होती

है। इनमें प्रमुख रूप से को.से. 95435, 95436, 98231 करन–1 (को. 98014) को.शा. 8436, 95255, 96268, 687, 96436, 96237, 98231, सी.ओ.जे. 64, को. पन्त 84211 सम्मिलित हैं।

मध्यम एवं देर से पकने वाली प्रजातियां: गन्ने की ये प्रजातियां 12 से 14 महीने में पककर तैयार होती हैं। इस श्रेणी में को.शा. 8432, 88216, 90269, 21230, 92263, 91248, 86218, 94257, को. पन्त 84212 को. से. 92423, 93232, 93234, 95422, यू.पी. 9529, 9530, को.षा. 94270, 97264, 95222 एवं को.जे. 84 प्रजातियां प्रमुख हैं। इसके अलावा जिन क्षेत्रों में वर्षा ऋतु में पानी भर जाता है उन क्षेत्रों के लिए को. से. 96436 तथा यू.पी. 9529 तथा यू.पी. 9530 प्रजातियां लाभकारी पाई जाती हैं।

बीज गन्ना चुनाव: लगभग 8–10 माह की शुद्ध रोग रहित, कीट मुक्त व स्वस्थ फसल जिसमें पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व दिए गए हों। जिसका गन्ना बहुत पतला न हो, फसल जमीन पर गिरी हुई न हो, को बीज के लिए चुने। बुवाई हेतु ऊपरी 2/3 भाग ही प्रयोग करना चाहिए। इससे जमाव अच्छा व शीघ्र होता है। प्रत्येक कलम में कम से कम दो आंखे होनी चाहिए।

बीज की मात्रा: बीज की मात्रा बुवाई के समय व प्रजातियों के आधार पर निर्धारित की जाती है। गन्ने की शीघ्र पकनें वाली प्रजातियों के लिए 70.75 क्विंटल तथा देर से पकने वाली प्रजातियो के लिए 60.65 क्विंटल बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। इसके लिए औसतन दो से तीन आंखों वाली 40,000 बीज टुकड़ों की प्रति हेक्टेयर आवश्यकता होती है। नाली में दो आंखों वाले 10 कलमों को प्रति मीटर की दर से डालें।

बीजोपचार: कार्बेण्डाजिम के 0–1 प्रतिशत घोल (112 ग्राम दवा को 112 लीटर पानी) में 4–5 मिनट तक कलमों को डुबाना चाहिए या बीज को रोगों के प्रकोप से बचाने के लिए घुलनशील पारायुक्त रसायन या मेन्कोजेब के 0.25 प्रतिशत के घोल में बुवाई से पूर्व 4–5 मिनट तक डुबोए। घोल के लिए 250–300 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। इससे गन्ने का जमाव भी अच्छा होगा।

बुवाई की विधि: गन्ने की बुवाई की विधि का चुनाव मुख्य रूप से भूमि की किस्म, जल निकास व सिंचाई साधनों की उपलब्धता आदि के आधार पर किया जाता है। इसके लिए आमतौर पर निम्न विधियां प्रचलित हैं।

समतल विधि: यह गन्ने की बुवाई का सबसे आसान तरीका है। यह विधि साधारणतया उन क्षेत्रों में अपनाई जाती है जहां वर्षा कम होती है तथा जल स्तर काफी ऊंचा होता है। इस विधि में 90 से.मी. गहरे के अन्तराल पर 7 से 10 से.मी. गहरे कूड ट्रैक्टर अथवा हल से बनाकर गन्ने की बुवाई की जाती है। बुवाई के बाद पाटा लगा दिया जाता है जिससे गन्ने के बीज मिट्टी से ढक जाएं तथा भूमि में नमी बनी रहे। इस विधि में कलम से कलम व आंख से आंख के मध्य सर्वाधिक प्रतिस्पर्धा व कम जमाव होता है।

नाली विधि: यह विधि भरपूर खाद, पानी एवं श्रम की उपलब्धता वाली परिस्थिति के लिए उपयुक्त है। इस विधि में लागत अधिक आती है परन्तु उपज भी अच्छी प्राप्त होती है। इस विधि में बुवाई के एक माह पूर्व 90 से. मी. के अन्तराल पर 25 से.मी. गहरी एवं 25–30 से.मी. चौडी नालियां बना ली जाती है। इन नालियों में खाद, उर्वरक डालकर एवं गुड़ाई करके तैयार कर लिया जाता है। बाद में इन नालियों में गन्ने की बुवाई कर दी जाती है। फसल वृद्धि के साथ मेड़ो की मिट्टी नाली में गिराते रहते हैं जिससे अन्ततः मेडों के स्थान पर नाली एवं नाली के स्थान पर मेड़ बन जाती है। इसमें 80–90 प्रतिशत तक जमाव होता है।

रिज एवं फरो विधि: यह उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है जहां वर्षा सामान्य होती है परन्तु जल निकास की समस्या होती है इसमें 90 से.मी. की दूरी पर 15 से 20 से.मी. गहरी नालियां बनाई जाती है। इसके बाद निश्चित खाद एवं उर्वरक मिलाकर गन्ने की बुवाई की जाती है। इसके बाद गन्ने के बीजों को मिट्टी से ढक दिया जाता है। इससे खेत पुनः समतल नजर आता है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन: गन्ने की फसल वर्ष भर खेत में खडी रहती है। अतः खाद एवं उर्वरक प्रबंध पर विशेष ध्यान देना चाहिए। गन्ने की अच्छी पैदावार के लिए 150 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा.पोटाश प्रति हेक्टेयर आवश्यक है। नाइट्रोजन की 1/3 मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा को बुवाई के समय देना चाहिए। नाइट्रोजन का शेष 2/3 मात्रा दो बराबर भागों में बांटकर क्रमशः कल्ले फूटने के समय व जुलाई के पूर्व टॉप ड्रेसिंग के रूप में डालकर गुड़ाई कर देनी चाहिए। इसके बाद किसी प्रकार के नाइट्रोजन उर्वरकों का प्रयोग फसल में नही करना चाहिए क्योंकि इसके बाद दिए गए नाइट्रोजन उर्वरकों का फसल की उपज एवं गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जुलाई के बाद नाइट्रोजन उर्वरक देने से पौधों में पानी का अवक्षोषण बढ़ जाता है। साथ ही गन्ने के रस में पानी की मात्रा बढ़ जाती है। अधिक नाइट्रोजन देने से गन्ने में रेशे की मात्रा भी कम हो जाती है जिससे फसल के गिरने की संभावना बढ़ जाती है। मृदा परीक्षण के आधार पर यदि मृदा में जिंक की कमी हो तो बुवाई के समय 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से जिंक सल्फेट का प्रयोग करना चाहिए। यदि फॉस्फोरस की मात्रा डी.ए.पी. से दे रहे हैं तो तीन वर्ष में एक बार गन्धक चूर्ण 250 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में मिलाना चाहिए।

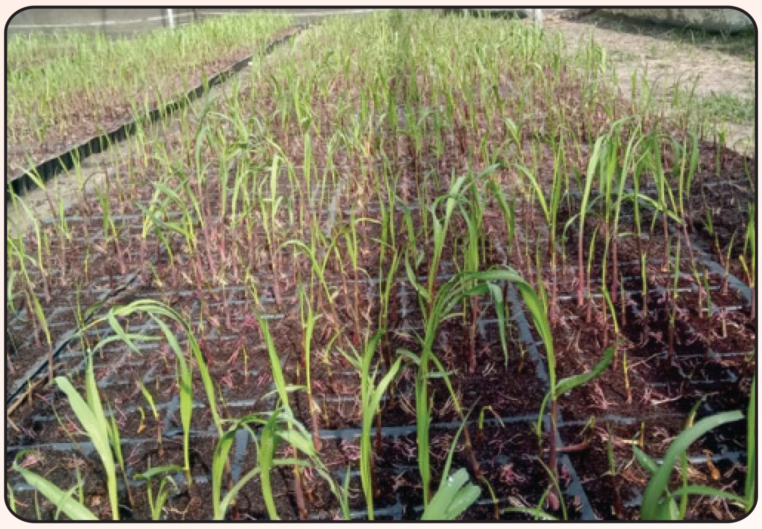

सिंचाई प्रबंधन एवं जल निकासः गन्ने की फसल को पानी की अधिक आवश्यकता होती है अतः गन्ने की खेती उन्ही क्षेत्रों में करनी चाहिए जहां सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था हो। गन्ने के अंकुरण अवस्था, कल्ले फूटने और बढ़वार के समय मृदा में पर्याप्त नमी होना अत्यंत आवश्यक है। गर्मी के दिनों में 15–20 दिनों के अन्तराल पर एवं वर्षा ऋतु में लगातार बारिश न होने पर 20 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। वर्षा ऋतु में गन्ने के खेत से आवश्यकता से अधिक पानी का निकालना भी उतना ही जरूरी है जितना सिंचाई देना।

खरपतवार नियंत्रणः बुवाई के 15–20 दिन बाद गन्ने के खेतों में एक बीज पत्ती व द्विबीज पत्ती खरपतवार पनपने लगते है। इनका प्रकोप जून–जुलाई तक बना रहता है जिससे गन्ने की वृद्धि, विकास और पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इससे गन्ने की पैदावार में लगभग 10–40 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है। यह फसल में खरपतवार की सघनता और उनके प्रकार पर निर्भर करती है। इन खरपतवारों में बथुआ, खरबथुआ, कृष्णनील, गजरी, दूबघास व हिरणखुरी प्रमुख हैं। वर्षा ;तु में घासकुल के खरपतवार पनपने लगते हैं। इनमें दूबघास, मकरा, जंगली चौलाई एवं कांटेदार चौलाई मुख्य हैं। इन खरपतवारों को नष्ट करने के लिए समय–समय पर फसल की गुड़ाई प्रत्येक सिंचाई के बाद बरसात शुरू होने तक की जा सकती है। शाकनाशी द्वारा खरपतवारों को नियंत्रण करने हेतु गन्ने की बुवाई के 50–60 दिन बाद 1 कि.ग्रा. 2.4–डी/हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर गन्ना जमाव से पहले छिड़काव करने से खरपतवार नियंत्रित किए जा सकते हैं। छिड़काव के समय मृदा में पर्याप्त नमी हो तथा तेज हवा न चल रही हों।

सहफसली खेतीः गन्ने की फसल की बुवाई के लगभग एक वर्ष बाद ही आय देती है। ऐसी स्थिति में गन्ने की फसल के साथ अन्य फसलों की सहफसली खेती अपनाना आवश्यक है। ऐसा करने से किसान भाईयों को फसल के मध्य में अतिरिक्त आय मिलेगी जो न केवल पारिवारिक आवश्यकताओं जैसे खाद्य, दलहन, तिलहन और चारा की आवश्यकता की पूर्ति करेगी बल्कि गन्ने की फसल में आने वाले खर्चो की भी आपूर्ति करेगी। इसके साथ ही गन्ने की एकल फसल से उत्पन्न दुष्प्रभावों को भी कम करेगी। बसंतकालीन गन्ने की दो लाईनों के बीच में उर्द, मूंग, लोबिया की एक–एक पंक्ति बोना चाहिए। इससे किसान भाई प्रति इकाई क्षेत्र से अतिरिक्त लाभ अर्जित कर सकते है। किसान भाई सह फसलों का चुनाव करते समय इस बात का ध्यान रखें कि फसल शीघ्र पकने वाली, कम फैलने वाली, सीधी बढ़ने वाली तथा गन्ने का अंकुरण व फुटाव धीमी होने के कारण इसकी बढ़वार शुरू के तीन–चार महीने तक न के बराबर होती है अर्थात् गन्ने का पौधा इस अवधि में सुषुप्तावस्था में रहता है। इन दिनों में रबी की कई अन्य फसलें जैसे गेहूं, चना, सरसों, आलू, लहसून, मटर, राजमा, फूलगोभी, प्याज या अन्य कोई सब्जी की शीघ्र पकने वाली फसल गन्ने की दो पंक्तियों के बीच बोई जा सकती है। इसके अलावा गेंदा व गन्ना की सहफसली खेती भी की जा सकती है। सहफसली खेती में उचित प्रजाति का चुनाव, समय पर बुवाई, उचित खाद व सिंचाई प्रबंधन अति आवश्यक है।

मिट्टी चढ़ानाः जड़ों की पूर्ण वृद्धि व विकास के लिए तथा बरसात के दिनों में फसल को गिरने से बचाने के लिए पौधों के दोनों ओर मिट्टी चढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। जून–जुलाई के महीनों में अंतिम निराई–गुड़ाई के समय पर्याप्त मिट्टी चढ़ाकर गन्ने को गिरने से बचाकर अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है। अगस्त–सितम्बर में तेज हवा चलने के कारण कभी–कभी मिट्टी चढ़ा गन्ना भी गिर जाता है। ऐसी स्थिति से बचने के लिए 8–10 गन्नों को एक साथ जमीन से एक मीटर की ऊंचाई पर सूखी पत्तियों से बांध देते है। जिससे गन्ना गिरता नही है।

कीट प्रबंधनः– गन्ने की फसल में लगने वाले कीटों में दीमक, सफेद लट, तना भेदक, जड़भेदक, चोटी भेदक, पायरिला तथा काला चिटका प्रमुख हैं।

दीमकः दीमक बहुभक्षी कीट होने के कारण गन्ने की फसल का सबसे बड़ा शत्रु है। यह वर्ष भर पौधों को हानि पहुंचाती रहती है। दीमक पौधों की जड़ों को काट देती है जिससे पौधों की बढ़वार रूक जाती है और अन्ततः पौधे सूख जाते है। दीमक से बचाव हेतु–खेतों में गोबर की कच्ची खाद का प्रयोग नही करना चाहिए, फसल में पानी की कमी नही होनी चाहिए, गर्मियों में खेतों की गहरी जुताई करना चाहिए जिससे दीमक के प्राकृतिक

शत्रु चिड़िया इत्यादि इन्हें खाकर नष्ट कर देती है, क्लोरपाइरीफॉस 20 इ. सी. के 0.5 प्रतिशत घोल में गन्ने की कलमों को डुबोकर बोएं।

सफेद लट: यह सफेद रंग के छोटे कीट होते है। इनका रंग मटमैला होता है। यह कीट पौधे की जड़ों को हानि पहुंचाते है जिसके परिणामस्वरूप पौधा सूख जाता है। इससे बचाव हेतु ग्रीष्मकालीन जुताई करनी चाहिए। (10 प्रतिशत दाने) 10 कि.ग्रा./हे. की दर से खेत में अन्तिम जुताई के समय मिलाना चाहिए।

तना बेधक: इसे गन्ने की सूंडी कहते है। इसका प्रकोप ग्रीष्म ऋतु में होता है। इसके प्रकोप से पौधे के ऊपर वाली पत्तियां सूख जाती है। यह सूंडी जमीन के पास छेद करके पौधों को खाती हुई ऊपर की तरफ बढ़ती है। इस कीट से बचाव हेतु उचित फसल चक्र अपनाएं, ग्रीष्मकालीन जुताई करें और सूखी व प्रभावित पत्तियों को खेत में जला दें।

पायरिला: इस कीट का प्रकोप अप्रैल से नवम्बर के मध्य होता है। यह पत्तियों का रस चूसता है जिससे पौधों की बढ़वार रूक जाती है तथा शर्करा की कमी हो जाती है। फसल पर अधिक प्रकोप होने पर 400 से 600 मि. ली. एण्डोसल्फान 35 ई.सी. का छिड़काव करें या क्विनालफॉस 800 मि. ली./हे. को 625 लीटर पानी में मिलाकर ग्रीष्मकाल में छिड़काव करें।

सफेद मक्खी: इस कीट का वयस्क सफेद रंग का होता है जबकि निम्फ कीट काले रंग के होते हैं। दोनों ही गन्ने का रस चूसते है जिससे गन्ने की पत्तियां पीली पड़ जाती है और अन्तत: पौधों की बढ़वार रूक जाती है। यह प्रकोप अगस्त से नवम्बर के बीच होता है इससे बचाव हेतु सूखी पत्तियों को खेत में जलाएं व उचित फसल चक्र अपनाएं। अधिक प्रकोप होने पर 800 मि.ली. डाईमेथोएट को 400 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें या मोनोक्रोटोफॉस 35 ई.सी. 1 लीटर दवा का छिड़काव करें।

प्रमुख बीमारियां:

वैसे तो गन्ने की फसल में अनेक बीमारियां लगती है परन्तु कवक जनित चार प्रमुख बीमारियां ही गन्ने की फसल को ज्यादा नुकसान पहुंचाती हैं। इनमें लाल सड़न रोग, म्लानि या उकठा रोग, कण्डुआ व गन्ने का पर्ण चित्ती रोग हैं। ये सभी बीमारियां बड़ी घातक हैं। भारत में ये बीमारियां सभी गन्ना उत्पादक क्षेत्रों में पाई जाती हैं। कभी–कभी इन बीमारियां की वजह से हजारों हेक्टेयर गन्ने की फसल बरबाद हो जाती है। इन बीमारियों के कारण गन्ने के उत्पादन में लगभग 0–12 प्रतिशत तक की हानि आंकी गई है। इन रोगों से सामान्यत: बरसात के बाद गन्ने की बढ़वार रूक जाती है जिसका शर्करा संश्लेषण की क्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उपयुक्त रोगों से बचाव हेतु रोगरोधी संस्तुत प्रजातियों का प्रयोग किया जाना चाहिए, गन्ने का बीज स्वस्थ एवं निरोग होना चाहिए, जिस खेत में इन बीमारियों का संक्रमण हो उस खेत में गन्ने की फसल नही लेनी चाहिए तथा कम से कम 0 वर्ष का फसल चक्र अपनाएं, खाद एवं उर्वरकों का संतुलित प्रयोग करें जिससे फसल स्वस्थ एवं रोग को सहन करने की क्षमता पैदा हो सके, संक्रमित खेत का पानी दूसरे खेतों में नही जाना चाहिए। गन्ने के बीज को उपचारित करके ही बोना चाहिए। जिसके लिए घुलनशील पारायुक्त रयायन 6 प्रतिशत की 250 ग्राम दवा को 100 लीटर पानी में कार्बेण्डाजिम की 100 ग्राम दवा को 100 लीटर पानी में घोलकर कम से कम 10 मिनट तक कलमों को उपचारित करके बोना चाहिए। इससे गन्ना की कलमों में उपस्थित रोगजनक के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

कटाई:

उत्तर भारत में गन्ने की कटाई नवम्बर से लेकर मार्च तक की जाती है। इस समय गन्ने में चीनी की मात्रा सर्वाधिक होती है। चीनी की मात्रा हैण्डरिफ्रेक्टोमीटर द्वारा ज्ञात की जा सकती है। यदि इस यंत्र का अंक 20 या इससे अधिक हो तो समझ लेना चाहिए कि फसल पककर तैयार है। कटाई जमीन से मिलाकर करें। अच्छी पेड़ी की फसल लेने हेतु गन्ने की कटाई फरवरी–मार्च में करनी चाहिए। कटाई के बाद सिंचाई अवश्य करें इससे फुटाव अच्छा होता है। फसल की समय पर कटाई करना स्वयं किसान के, चीनी मिलों के एवं राष्ट्रहित में लाभकारी होगा।

उपज:

फसल कर उचित देखभाल व उपयुक्त उत्पादन प्रौद्योगिकी अपनाने पर किसान उत्तर भारत में गन्ने की उपज लगभग 800–1000 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा दक्षिण भारत में 1000 से 1200 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त कर सकते हैं।

मसालों में हल्दी भारत की धरोहर

प्रमोद कुमार गुप्ता[1] एवं योगिता घरडे[2]
[1]जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

मनुष्य के जन्म से मरण तक, अनेक कार्यक्रम में हल्दी का उपयोग किया जाता है। हल्दी का उपयोग स्वास्थ्य एवं सौंदर्यवर्धन में हमेशा से किया जा रहा है। हल्दी का प्रयोग खाद्य एवं पेय पदार्थ बनाने एवं रंग प्रदान करने में होता है। हल्दी से भूख बढ़ती है, खून साफ होता है और शरीर में रोगाणुरोधी क्षमता बढ़ती है। इसका प्रयोग एलर्जी, दांत की बीमारी, पथरी के इलाज और त्वचा साफ करने में किया जाता है। हल्दी चोट में भी बहुत उपयोगी सिद्ध होती है। इसका उपयोग सर्दी जुकाम में फायदेमंद है।

परिचय –

प्राचीनकाल से ही हल्दी भारतीयों के सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक जीवन में रची बसी आ रही है। हल्दी के विभिन्न उपयोग से भारत का प्राचीन साहित्य भरा पड़ा है। हल्दी का उपयोग घाव, चोट, सर्दी, खांसी, सौन्दर्य प्रसाधनों धार्मिक कर्मकाण्ड आदि में किया जाता था। भारत, चीन तथा दक्षिण एशिया में हल्दी का उपयोग मसाला, खाद्य परिरक्षण तथा अभिरंजक (रंगने वाले) पदार्थ के रूप में प्राचीनकाल से ही होता आ रहा है।

हल्दी का नाम दुनियाभर की नजर में तब आया जब हाल ही में इसके औषधीय गुणों से संबंधित एक अमरीकी पैटेन्ट को चुनौती दी कि हल्दी का गुण तो भारत में आम आदमी जानता है, और इस के लिये पैटेन्ट सुरक्षा की जरूरत नहीं है। पैटेन्ट दफ्तर को जो दस्तावेज उपलब्ध कराये गयें उनमे कुछ प्राचीन आयुर्वेदिक पुस्तकें शामिल थी, जिनमें हल्दी के महत्वपूर्ण गुणों का वर्णन है, जो सदियों से आम भारतीय जानता है।

भाषाओं में नाम

हरिद्रा–कॉचनी, वरवर्णिनी, पीता (संस्कृत), हलुद, हरिद्रा, (मराठी), हलद (कोंकणी), मारीनालु (मलयालम), मंजाल (तमिल), हल्दी (उर्दू), हल्दील (ओड़िया), अरसीना (कन्नड़), पासुपु (तेलगू), जरदपोप (फारसी), डंरू–फुस–सुकुर (अरबी), टरमारिक (अंग्रेजी)।

हल्दी की उत्पत्ति दक्षिण पूर्व एशिया में भारत और चीन मानी जाती है। भारत में पूर्व हिमालय से श्रीलंका तक का क्षेत्र हल्दी की उत्पत्ति के सम्बन्ध में पहचाना जाता है। लेकिन अदरक का हल्दी से ज्यादा मसाले के रूप में उपयोग पहले से होता था। हल्दी को प्राचीन समय में पीलारंग और तीखे स्वादवाली अदरक के रूप में जाना जाता था। 17 वीं शताब्दी के पहले ही हल्दी का चीन में पहुंचने का उल्लेख मार्कोपोलो की यात्रा विवरण में मिलता है। डाई (रजक) के रूप में हल्दी का उपयोग पूर्व और पश्चिम अफ्रीका में 30 वीं शताब्दी तक होता था। दक्षिण एशिया में हल्दी का रंगने वाले पदार्थ के तौर पर उपयोग यूरोप में होने वाले कृत्रिम रंगों से पहले से होता आ रहा था।

हल्दी के उत्पादन एवं निर्यात में भारत का विश्व में एकाधिकार है, क्योंकि विश्व के कुल उत्पादन का 80 प्रतिशत से अधिक भाग भारत में पैदा होता है। भारत के कुल मसाला उत्पादन में 60 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल केवल हल्दी का है। भारत में हल्दी की खेती लगभग 173900 हैक्टयर क्षेत्रफल में होती है। जिसमें 8.5 लाख टन उत्पादन प्रतिवर्ष प्राप्त होता है। वर्ष 2020–21 में भारत ने 1676 करोड़ रूपये 62000 टन सूखी हल्दी का निर्यात करके प्राप्त किये थे। भारत के अलावा हल्दी उत्पादक प्रमुख देश बांग्लादेश, श्रीलंका, पाकिस्तान, थाईलैण्ड़, चीन, ताईवान, जमैका, तथा पेरू है। हल्दी की भारतीय प्रजातियों की मांग अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में उनके विशेष आकार रंग तथा स्वाद के कारण बहुत है।

हल्दी की औसत उत्पादकता 6500 किग्रा/हेक्टेयर है। भारत देश में हल्दी उत्पादक प्रमुख राज्य आन्ध्रप्रदेश (56822 हे.), उड़ीसा (23640 है.), तमिलनाडु (1728 है.), पश्चिम बंगाल (11731 है.), महाराष्ट्र (6644 है.), और कर्नाटक (6153 है.) है। इसमें राज्यों के अलावा गुजरात, केरल, बिहार, उ.प्र. तथा पूर्व राज्यों मे भी हल्दी की खेती की जाती है। आन्ध्र प्रदेश उत्पादन एवं उत्पादकता की दृष्टि से प्रथम स्थान पर है, जबकि तमिलनाडु दूसरे स्थान पर है।

भारत में हल्दी की औसत उत्पादकता 4286 क्रिग्रा/हैक्टयर (है.) है। देश में हल्दी उत्पादक प्रमुख राज्य आन्ध्रप्रदेश (56822 है.) उड़ीसा (23640 है.), तमिलनाडु (1728 है.), पश्चिम बंगाल (11731 है.), आसाम (12066 है.), महाराष्ट्र (6644 है.), और कर्नाटक (6153 है.) है। इन राज्यों के अलावा गुजरात, केरल, बिहार, उ.प्र. तथा पूर्व राज्यों में भी हल्दी की खेती की जाती है। आन्ध्रप्रदेश उत्पादन एवं उत्पादका की दृष्टि से प्रथम स्थान पर है, जब कि तमिलनाडु दूसरे स्थान पर है।

हल्दी एक बहुवर्षीय एवं अदरक कुल जिंजिबरेसी का पौधा है। लेकिन इसकी खेती फसल के रूप में की जाती है। हल्दी का वैज्ञानिक नाम कुरकुमा लौंगा है। भारत में हल्दी की 30 प्रजातियां पाई जाती है। पौधों की लम्बाई 60–90 सेंमी ऊंचाई तक हो सकती है। पौधे के भूमिगत तनों को (कन्द) हल्दी कहतें हैं। कन्द मोटे गोल, शाखीत, अंगुलियों या गोल आकार के होते हैं। कन्दों में चमकीला पीला रंग और एक विशेष प्रकार की महक तथा स्वाद होता है। कन्दों को ही ''हल्दी'' के रूप में उपयोग किया जाता है। पत्तियां 60–100 संख्या में, लम्बाई 1 मीटर तक जो मिलकर एक असत्य वायवीय तनों का निर्माण करती हैं। पत्तियां केन्द्रों में उपस्थित आँखों से निकलती है। पत्तियाँ लेंस के समान बीच में चौड़ी तथा आधार एवं शीर्ष पर संकरी तथा नुकीली होती है। इसमें पुष्पन बहुत कम होता है। पुष्पक्रम स्पाइक कहलाता है। फूल सफेद से पीले रंग के होते हैं। फल बहुत ही कम बनते है।

हल्दी की अंकुरण अवधि पौध रोपण के 30 दिन बाद लगभग एक माह होती है। इस प्रकार मध्य वानस्पतिक वृद्धि अवस्था 1 माह तेज वानस्पतिक वृद्धि अवस्था (2 माह) धीमी वानस्पतिक वृद्धि अवस्था (2 माह) और पूर्ण वानस्पतिक अवस्था पौध रोपण के 211–270 दिन बाद

आती है। कन्द रूपी जड़ें ताजा अथवा कच्ची हल्दी सब्जी के रूप में उपयोग की जाती है। सुखाने या उबालने पर हल्दी का रंग बदलकर पीला हो जाता है।

हल्दी में अनिवार्य तेल (5.8%), वसीय तेल (5.1%), खनिज पदार्थ (3.5%), कार्बोहाइड्रेट (61.4%), तथा हल्दी को पीला रंग प्रदान करने वाला करक्यूमिन (2–10%) तक पाया जाता है। करक्यूमिन में कई औषधीय गुण होते हैं। कच्ची हल्दी का रस एक से तीन चाय के चम्मच तक अथवा सूखी हल्दी का चूर्ण एक से चार ग्राम तक वयस्क व्यक्तियों या 500 मिली. ग्रा. से 1 ग्रा. तक का चूर्ण किशोरों के लिये और 50 मिली ग्रा. तक बच्चों के लिये निर्धारित है। हल्दी का कोई साइड इफेक्ट नहीं होता।

विविध उपयोगिता–

(क) रसोई में उपयोग–

घरेलू व्यंजनो को प्राकृतिक रंग एवं मसाले के रूप में बहुतायत उपयोग किया जाता है। हल्दी के टिंचर का इस्तेमाल खाद्य व्यंजनों को रंग देने के लिये किया जाता है। मुख्य रूप से चावल, सलाद, अण्डा, और पनीर के बने व्यंजनों में कृत्रिम रंग की जगह आज भी कुरकुमिन स्वास्थ्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। हल्दी भारतीय केसर कहलाती है। इण्ड़ोनेशिया में हल्दी की ताजी पत्तियों को खाद्य पदार्थो में खुशबू पैदा करने के लिये इस्तेमाल किया जाता है।

(ख) औषधीय उपयोग–

1. **कैंसर**– कुरकुमीन मुंह, वक्ष, त्वचा, पेट, फेफड़े आदि जगहों के ट्यूमरों और घावों को काफी हद तक रोक देता है। वैज्ञानिक अध्ययनों द्वारा यह प्रयोग किये जा चुके है, कि रोज एक चम्मच हल्दी लेने से कैंसर दूर हो सकता है।
2. **इस्नोफीलिया**– 2 से 3 ग्राम हल्दी का चूर्ण या 2 से 3 ग्राम अदरक के रस के साथ दिन में चार बार लेने से कुछ दिनों में ठीक हो सकता है।
3. **पेटगैस**– हल्दी का चूर्ण और नमक पांच-पांच ग्राम गरम पानी से लें।
4. **जुकाम**– एक चम्मच हल्दी चूर्ण गरम पानी से दिन में तीन बार लें। अथवा हल्दी का धुवां सूघने के बाद आधा घण्टे पानी न पियें । अथवा एक गिलास गर्म दूध में 10 ग्राम पिसी कालीमिर्च, आधा चम्मच पिसी हल्दी लें या हल्दी को बालू में सेंक कर पीस लें और चाय के चम्मच भर दो बार दिन में गरम पानी से लें।
5. **छाले**– 15 ग्राम हल्दी चूर्ण को एक लीटर पानी में डाल लें तथा ठण्डा करके सुबह शाम गरारा करने से लाभ होता है।
6. **बहुमूत्रता**– हल्दी चूर्ण एक चाय के चम्मच भर सुबह शाम ठण्ड़े पानी से लेने से लाभ होता है।
7. **सफेददाग**– 125 ग्राम हल्दी को पांच सौ ग्राम स्प्रिट में भरकर तीन दिन तक रखें फिर छान लें यह टिंचर बन जायेगा । इस टिंचर को लगायें तथा चम्मच भर हल्दी गाय के दूध के साथ दिन में दो बार लें।
8. **दांतों की सफाई**– 50 ग्राम हल्दी चूर्ण में 5 ग्राम भुनी फिटकरी या हल्दी चूर्ण में सरसों का तेल मिलाकर मंजन करें, अथवा भूनी हुई हल्दी दुखते दांतो पर मलें।
9. **सूजन**– एक गिलास गर्म दूध में एक चम्मच हल्दी चूर्ण तथा स्वादानुसार मिश्री मिलाकर पीने से लाभ होता है।
10. **पित्त**– हल्दीचूर्ण + गेंहू का आटा + घी + चीनी (1:2:1:2) चम्मचों में + आधा कप पानी में डालकर हलुवा बनाकर खायें तथा दूध पीयें।
11. **जलना**– पानी में हल्दी चूर्ण घोल कर लेप करें।
12. **विवाईयां**– कच्चे दूध में पिसी हल्दी मिलाकर त्वचा या विवाईयां में भरें।
13. **कण्ठमाला**– 8 ग्राम हल्दी चूर्ण सुबह शाम छान के तथा घिसकर लगायें।
14. **नासूर**– घाव पर पिसी हल्दी भरें घाव जल्दी ठीक हो जायेगा।

(ग) सौंदर्य प्रसाधन में उपयोग–

1. बेसन, हल्दी, नीबू, दही, तथा गुलाब जल को मिलाकर लेप तैयार कर के सप्ताह में एक बार पूरे शरीर पर लगायें ।
2. जौ का आटा पिसी हल्दी, सरसों का तेल मिलाकर उबटन बनाकर लगायें, फिर गर्म जल से स्नान करें ।
3. दो चम्मच खीरे के रस आधा चम्मच नींबू के रस में चुटकी भर हल्दी मिलाकर चेहरे पर लगायें ।
4. पिसी हल्दी और काले तिल बराबर मात्रा में पीसकर लेप लगायें ।
5. आधा कप दूध में बड़े चम्मच चने की दाल को रातभर भिगोकर रखें सुबह दाल पीसकर उसी दूध में मिलाकर उसमें चुटकीभर हल्दी व नींबू का रस मिलाकर लगायें ।

हल्दी का उत्पादन –

खेत की तैयारी–

खेत को 5–7 बार 22–25 सेमी गहराई तक जुताई करके तैयार कर लेना चाहिए। खेत खरपतवारों से रहित होना चाहिए। अच्छी तरह 40 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट प्रति हैक्टयर खेत में मिला देना चाहिए। रबी की फसल के बाद एक गर्मियों में जुताई जरूर करना चाहिए।

भूमि–

अच्छी जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि हल्दी के खेती के लिए उपयुक्त रहती है। जबकि इसकी खेती हल्की काली लाल दोमट भूमि में भी अच्छी तरह से की जा सकती है। कंकड़ पथरीली मृदा कन्दों के वृद्धि में सहायक होती है।

जलवायु–

हल्दी के पौधे के वृद्धि एवं कन्दों के विकास के लिये गर्म और नम जलवायु अच्छी रहती है। वार्षिक वर्षा 250–400 मिली वाले क्षेत्र पर हल्दी की खेती अच्छी रहती है। लेकिन सिंचाई के लिये पौधों की वृद्धि के समय पानी उपलब्ध होने पर 120 से 150 मि.मी वर्षा वाले क्षेत्रों पर भी इसकी खेती की जा सकती है।

बीज–

हल्दी का प्रवर्धन कन्दों द्वारा किया जाता है। स्वस्थ और रोग रहित कन्दों को अप्रैल के महीने में छांटकर जमीन में बने गड्डे के अन्दर

भण्डारण किया जाता है। 2–3 महीने बाद इन कन्दों में अंकुरण शुरू होने लगता है। तब कन्दों को सावधानी पूर्वक गड्डे से निकालते हैं ताकि अंकुर टुटने ना पाये। गड्डों में कन्दों के भण्डारण के पूर्व 0.3 प्रतिशत डाइथेन एम 45 या ट्राइकोडर्मा (5%) से कन्दों को उपचारित कर लेना चाहिये ।

बीजदर–

मातृ कन्दों की 2000–2500 किग्रा या प्राथमिक कन्दों की 1500–2000 या बागों में अन्तवर्तीय फसल के लिये 400–500 किग्रा प्रति हैक्टेयर कन्दों की आवश्यकता होती है ।

रोपण–

रोपण क्षेत्र एवं प्रजातियों के अनुसार अलग–अलग रहता है केरल एवं समुद्री तटों पर रोपण मई जून में पूर्व मानसून वर्षा के आने पर, वहीं आन्ध्रप्रदेश में 15 मई से 15 जून तक करते है। देर से बोने वाली प्रजातियों को 15 जुलाई तक बो सकते है।

रोपणान्तराल–

खेत को 1–1.5 से.मी. ऊंची क्यारियों में बांट लेना चाहिए। रोपणान्तराल काली भारी मृदा में 45–60 से.मी., 22.5 से.मी., लाल लोम मृदा में (30–45 से.मी.) या 45–60 से.मी. कतार से कतार तथा 22.5 से. मी. कन्द से कन्द की दूरी पर रोपाई करते है। क्यारी विधि में 54–80 अधिक उपज प्राप्त होती है। मेड़ नालीविधि से 23 से.मी. ऊंची मेड़ तथा नाली 46–60 से.मी. के अन्तराल पर बनाकर बीजरोपण करते है ।

फसल चक्र एवं मिश्रित खेती–

अन्तवर्तीय फसल के रूप में हल्दी की खेती नारियल तथा जल भराव वाली मृदाओं में धान, गन्ना, केला एवं सब्जियों के साथ की जाती है।

खाद एवं उर्वरक–

25–30 टन सड़ी हुई गोबर की खाद अन्तिम जुताई से पहले खेत में प्रति हेक्टेयर के हिसाब से मिला देना चाहिए। इसके अलावा नत्रजन 60 कि.ग्रा. (असिंचित), 125 कि.ग्रा. (सिंचित), फास्फोरस 30 कि.ग्रा. (असिंचित), 60 कि.ग्रा. (सिंचित), तथा पोटाश 60 कि.ग्रा. (दोनों दशाओं) के लिए प्रति हेक्टेयर आवश्यकता पड़ती है। सम्पूर्ण फास्फोरस एवं आधी पोटाश की मात्रा तथा 200 कि.ग्रा. नीम की खली को अन्तिम बुवाई के समय खेत में मिला देना चाहिये। 60 प्रतिशत नत्रजन बुवाई के 45 दिन बाद और शेष 40 प्रतिशत बुवाई के 90 दिन बाद बची हुई आधी पोटाश की मात्रा के साथ देना चाहिये ।

प्रमुख प्रजातियां :–

हल्दी में 96 प्रतिशत प्रजातियां कुरकुमा लौंग परिवार की है। अवधि के आधार पर जो प्रजातियां 9 महीने में पककर तैयार होती हैं जैसे–(तेकुरपेट, डुगिराला, अरमौर एवं मयडुकुररू), मध्यम अवधि (8 महीने में) कोथोपेट, कृष्णा और केसर कम अवधि (7 महीने) अमाला पुराग और डिंडग्राम है। डुसिराला भारी काली मृदा के लिये उपयुक्त किस्म है। अरमूर निजामाबाद की प्रसिद्ध प्रजाति है। कस्तूरी और केसर अधिक उपज देने वाली हल्दी की किस्में है। ''एल्लेप पेय'' केरल की अच्छी प्रजाति है ।

प्रजाति	अवधि (दिनों में)	उपज (कुन्टल/हे)	कुरकुमिन (प्रति.)	आवश्यक तेल (प्रति.)	विशेष गुण
सी.ओ.–1	285	5.9	3.2	3.2	कम वर्षा तथा क्षारीय भूमि वाले क्षेत्रों के लिये, कन्दो का आकार बड़ा तथा चमकीले पीले रंग युक्त
बी.एस.आर.–1	285	6.0	4.2	3.7	जल भराव वाले क्षेत्रों के लिये उपयुक्त चमकीले पीले रंग के कन्द
सुगुना	190	7.2	4.9	6.0	मोटे और मुलायम कन्द मध्यम आकार एवं गहरे पीले रंग के
सुपर्णा	210	4.6	4.0	7.0	....
सुहर्षना	190	7.3	7.9	7.0	मोटे और मुलायम कन्द
कृष्णा	255	4.0	2.0	2.0	
सुगंधा	210	4.0	3.1	2.7	कन्द गलन एवं पर्णदाग रोगों के प्रति मध्यम अवरोधी
रोमा	253	6.4	9.3	4.2	लाल–पीला रंग युक्त कन्द
सुरोमा	253	5.0	9.3	4.4	रोगों के प्रति सहनशीलता
राजेन्द्र सोनिया	225	4.5	8.4	5.0	गोल और मुलायम मातृ कन्द, लाल–भूरी त्वचा
रंगा	250	7.0	6.3	4.0	गहरे पीले रंग युक्त कन्द
रश्मि	240	7.8	6.4	4.4	गोल आकार का कन्द

मलचिंग–

रोपाई के बाद 15 टन हरी पत्तियां तथा इतनी ही मात्रा रोपाई के 50 दिन बाद क्यारियो को ढकने की जरूरत पड़ती है। प्रथम मलचिंग में अधिक पानी से कन्दों का बचाव एवं अंकुरण में मदद मिलती है।

सिंचाई–

अंकुरण आने तक सप्ताह में एक हल्की सिंचाई दें तथा जल भराव को रोकें ताकि कन्द सड़ने ना पाये। मौसम और भूमि के अनुसार सिंचाईयों की संख्या निर्भर करती है। भारी मृदा में 15 से 25 सिंचाईयां तथा हल्की भूमियों में 34–40 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

खरपतवार नियंत्रण–

हाथ द्वारा 60, 120 और 150 दिन पर बुवाई के बाद निंदाई–गुड़ाई कर सकते है। प्रारम्भिक अवस्था पर खरपतवार नियंत्रण हेतु 2,4 डी दवा का प्रयोग नहीं करना चाहिये। पौधे पर मिट्टी चढ़ाने का काम बुवाई के 60 दिन बाद करना चाहिये। सिमाजीन (2 कि.ग्रा.ए.आई./है.), या बैसालीन (1.5 कि.ग्रा. ए.आई./है.) बुवाई के बाद तथा अंकुरण से पहले खरपतवार रोकने के लिये किया जा सकता है।

प्रमुख रोग–

1. **पर्णदाग**– फफूंदी के द्वारा यह रोग फैलता है। पत्तियों पर भूरे–पीले रंग के धब्बे दोनों सतह पर बनते हैं। ऊपरी सतह पर धब्बों की संख्या ज्यादा होती है। धब्बे की संख्या बढ़ने पर पत्तियां सूख जाती है। 1 कि. ग्रा. कॉपर फफूंदनाशक की मात्रा प्रति लीटर पानी में मिलाकर भूमि के पास तनों को उपचारित करना चाहिये। कार्बोन्डाजिम मिलाकर या मैंकोजेब (2.5 ग्राम) + 1 मि.ली. ग्राम सेंडोबिट प्रति लीटर पानी में मिलाकर 7–10 दिनों के अन्तर पर छिड़काव करना चाहिये।

हल्दी का पर्णदाग

2. **कन्दसड़न**– प्रारंभिक अवस्था में सड़न भूमि के पास तने से शुरू होता है और धीरे–धीरे कन्दों तक पहुंच जाती है। कन्द सड़कर खराब हो जाते है। जिससे फसल को भारी क्षति होती है। बीज को बोने से पूर्व 3 ग्राम मात्रा डाईथेन एम–45 ट्राइकोडर्मा 10 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. बीज के हिसाब से उपचारित करके बोना चाहिये। खेत में क्यारियां उंची बनाना चाहिये तथा स्वच्छ कन्दों का ही बुवाई के लिये प्रयोग करना चाहिये अथवा मैंकोजेब (2.5 मि.ली./लीटर पानी) के हिसाब से मृदा को उपचारित करना चाहिये ।

हल्दी का कन्दसड़न

3. **सूत्रकृमि रोग**– जड़ गांठ सूत्रकृमि और खोखला करने वाले सूत्रकृमि द्वारा कन्दों और जड़ों को क्षति पहुंचती है जिससे पौधे छोटे, पत्तियां पीली होकर सूख जाती है। सूत्रकृमि नियंत्रक हेतु 10 कि.ग्रा. मात्रा फोरेट 10 जी की खेत की तैयारी के समय प्रति हेक्टेयर के हिसाब से मिलाना चाहिये।

हल्दी का जड़ गाठ सूत्रकृमि रोग

प्रमुख कीट–

1. **तना छेदक**– लार्वा तने में छेद कर के अन्दर का मुलायम भाग खाता है जिसके कारण बीच का प्ररोह सूख जाता है। वयस्क कीट काले धब्बे युक्त पंखों वाला संतरे के रंग की तरह होता है। मादा पत्तियों और पौधे के मुलायम भागों पर अण्डे देती है। लार्वा भूरे लाल रंग का तथा पूरे शरीर में काले धब्बे युक्त होता है। प्रभावित भागों को निकाल कर नष्ट कर देना चाहिये। नियंत्रण हेतु 2 मि.ली. मात्रा इमामेक्टिन बेन्जोएट दवा का प्रति ली. पानी में घोलकर छिड़काव करें ।

हल्दी का तना छेदक लार्वा

2. **लेन्सविंग बग**– छोटे, सफेद पारदर्शी पंखों युक्त बग कालोनियों के रूप में पत्तियों पर दिखाई देता है। बगों द्वारा चिपचिपा पदार्थ छोड़ने से अन्य बीमारियां पौधों पर उत्पन्न हो जाती है। 1–2 मि.ली. मात्रा इमामेक्टिन बेन्जोएट की प्रति ली. पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिये।

3. **थ्रिप्स**– मादा पत्तियों पर अण्डे देती हैं जो फूटने के बाद उत्पन्न हुये लार्वो द्वारा पत्तियों का रस चूसने से पत्तियां सूख जाती है। 0.5 मि. ली. मात्रा इमिडाक्लोरपिड की प्रति ली. पानी के साथ घोल बना कर छिड़काव करें।

4. **पत्ती मोड़क**– यह कीट पत्तियों का हरा भाग खाता है जिससे पत्तियां मुड़ जाती है मोम की तरह का पदार्थ कीटों द्वारा पत्तियों पर छोड़ा जाता है। अगस्त–अक्टूबर के महीने में 1–2 मि.ली. मात्रा इमामेक्टिन बेन्जोएट की प्रति ली. पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिये। हाथ द्वारा कीटों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें।

5. **कन्दस्केल**– खेत और भण्डारण दोनों जगह इस कीट द्वारा कन्दों को क्षति पहुंचती है। पौधों पर आक्रमण होने पर पौधे सूख जाते हैं और कन्द छोटे होकर सिकुड़ जाते हैं। कन्दों को भण्डारण या बोने से पहले 1–2 मि.ली. मात्रा इमामेक्टिन बेन्जोएट की प्रति ली. पानी में घोल कर 5 मिनट तक कन्दों को उपचारित करना चाहिए। इमामेक्टिन बेन्जोएट (2.5 मि.ली./ली. पानी) के घोल का खडी फसल पर छिडकाव करें।

6. **लालमकड़ी**– पत्तियों के निचले सतह पर कालोनी के रूप में पाई जाती है तथा पत्तियों का रसचूसने से पत्तियों का रंग पीला होता है। 3 ग्रा. सल्फर (बेटेबिल) या डाटकोफाल 5 मि.ली. + सैन्डोविट को मिलाकर प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोलकर छिड़काव करना चाहिये।

हल्दी का लेन्सविंग बग

मादा थ्रिप्स

पत्ती मोड़क कीट

लालमकड़ी

खुदाई–

हल्दी की खुदाई 9–10 महीनों में जब पत्तियां पीली पड़कर सूखने लगती हैं तब करना चाहिये। गांठों की खुदाई के समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि गांठे कटने न पायें। हल्दी की उपज मृदा की उर्वरा शक्ति/उगाई जाने वाली किस्म एवं फसल की देखभाल पर निर्भर करती है। सामान्यत: 200–250 क्विं. की कच्ची हल्दी और 40–50 क्विं. सूखी हल्दी प्राप्त होती है।

प्रसंस्करण–

मातृ कन्द से प्राथमिक कन्दों को अलग कर लिया जाता है। मातृ कन्द को बीज के लिये रख लिया जाता है। साफ खुली हल्दी को तांबे या जस्ते या लोहे की कलाईदार बर्तन या मिट्टी के बर्तन में रखकर इतना पानी डाला जाता है कि हल्दी के उपर 4 से 5 सें.मी. पानी भरा रहे एवं इसमें हल्दी के वजन के अनुसार 0.1 प्रतिशत चूना डालते हैं, जिससे हल्दी का रंग अधिक चमकीला एवं नारंगी हो जाता है। फिर 40 से 60 मिनिट तक उबालते हैं, उबालते समय जब बर्तन से झाग आना शुरू हो जाये, हल्दी की गन्ध आना शुरू हो जाये तो गांठो को बाहर निकालकर धूप में 10–15 दिनों तक सुखाते हैं। धूप में सुखाने के लिये 5–5 से.मी. मोटी हल्दी की तह को बांस की चटाई पर रखें। पतली तह नहीं बनाते हैं। क्योंकि सूखी हल्दी के रंग पर इसका विपरीत प्रभाव पडता है। रात के समय इसकी ढेरी लगा दी जाती है एवं ढक दिया जाता है। इससे 20 से 30 प्रतिशत हल्दी की सूखी मात्रा प्राप्त होती है । यह मात्रा स्थान एवं किस्मों के उपर निर्भर करती है।

पॉलिश–

सुखायी गयी हल्दी देखने में अच्छी नहीं लगती, जिसकी उपरी सतह खुरदरी एवं जड़ों के गड्ढे दिखाई पडते हैं इसकी सुंदरता बढाने के लिये तथा खुरदुरी सतह को अच्छा बनाने के लिये बाहरी सतह पॉलिश की जाती है। हाथ से पॉलिश करने के लिये सूखी हल्दी की फिंगरस को कठोर सतह पर रगडा जाता है या जूट की बोरी में लपेट कर पैरों से रौदते एवं कुचलते हैं।

रंग चढाना–

हल्दी का रंग हमेशा खरीददार को आकर्षित करता है। हल्दी को बाहर से पीला रंग देने के लिये सूखी एवं गीली विधि का प्रयोग करते है। सूखा विधि मेंहदी पावडर को पॉलिश ड्रम में 10 मिनट रखते है। गीली विधि में 100 कि. ग्रा. हल्दी को रंग के लिये 0.04 कि.ग्रा. फिटकरी, 2 कि. ग्रा. हल्दी पाउडर 0.14 कि.ग्रा. अरेण्डी बीज 30 ग्राम. सोडियम वाईसल्फेट, 30 मि.ली. सान्द्र हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की आवश्यकता पड़ती है। गीली विधि मेंहदी पाउडर को घोलकर पॉलिश बास्केट में बुरकते है। चमकीला रंग देने के लिये उबली सुखायी और आधी पॉलिश की गयी उंगलियों को बास्केट में रखकर पोल को डालकर लगातार हिलाते हैं। जब सभी उंगलियों पर समान रूप से घोल की परत चढ जाती है तो इसे धूप में सुखा लेते है।

बीज भण्डारण–

खुदाई द्वारा प्राप्त कंद उचित रूप से भण्डारित करना चाहिये। छायादार पेड़ के नीचे 2 मी., 2 मी., 1 मी गहरा गड्ढा खोदकर एवं उसमें चारों तरफ दीवार से सूखी हल्दी को पत्तियां लगाकर तथा तह में बिछाकर डाइथेन एम –45 एवं इमामेक्टिन बेन्जोएट दवा की उचित मात्रा मिलाकर भण्डारण करते है। हल्दी की एक तह बिछ जाये तो उस पर लकड़ी का बुरादा/बालू रेत, हल्दी की पत्तियां बिछायें एवं दवा का छिडकाव करें। इस विधि द्वारा गड्ढा भर जाये तो उपर थोड़ी जगह छोड़कर पतला लकड़ी का तख्ता रखते है, एवं उस पर मिट्टी का लेप करते है। इस बात का ध्यान रखें कि गड्ढे में पानी न जाये। इस विधि से 3–4 महीने तक हल्दी के बीज को सुरक्षित रखा जा सकता है। बीज भण्ड़ारण पूर्व बीजोपचार किया जाता है इसके लिये एक बड़े टब में पानी भरकर 3 ग्राम/लीटर पानी के हिसाब में डायथेन एम–45 एवं इमामेक्टिन बेन्जोएट 1 मि.ली. की मात्रा से टब में जितना पानी होता है इतनी दवा डाल दी जाती है। एवं इसमें कन्द को 1 घण्टे के लिये डुबोया जाता है, एक घण्टा बाद छाया में सुखाकर इसको गड्ढे में भण्डारित करते है।

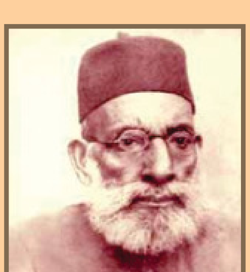

हिन्दी जैसी सरल भाषा दूसरी नहीं है ।

– मौलाना हसरत मोहानी

वर्टिकल फार्मिंग: भविष्य के लिए बेहतर विकल्प

अलीमुल इस्लाम[1] एवं रमण भारती[2]
[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, किशनगंज, बिहार
[2]बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर, बिहार

आधुनिक दौर में भारत हर दिन कुछ नया कर रहा है। साथ ही औद्योगिकीकरण में वृहद रूप से वृद्धि देखी जा रही है जिसके कारण कृषि योग्य भूमि अधिक जोखिम में हैं। भारत के संदर्भ में वर्टिकल फार्मिंग इन सभी समस्याओं का समाधान है । सबसे पहले 1915 में गिल्बर्ट एलिस बेली ने वर्टिकल फार्मिंग शब्द को जाना और उन्होंने इस पर एक किताब लिखी। इस आधुनिक अवधारणा को पहली बार वर्ष 1999 में प्रोफेसर डिक्सन डेस्पोमियर द्वारा प्रस्तावित किया गया था। उनकी अवधारणा इस विचार पर केंद्रित थी कि शहरी क्षेत्रों को अपना भोजन खुद उगाना चाहिये जिससे परिवहन के लिये आवश्यक समय और संसाधनों की बचत हो सके। वर्टिकल फार्मिंग में पारंपरिक खेती की तरह जमीन पर क्षैतिज रूप से खेती करने के बजाय ऊर्ध्वाधर रूप में खेती की जाती है तथा भूमि और जल संसाधनों पर अत्यधिक प्रभाव डाले बिना फसल उगाई जाती हैं। बड़े पैमाने पर संरक्षित खेती उपभोक्ता के नज़दीक भोजन उपलब्ध कराकर हमारी फार्म–टू–प्लेट आपूर्ति श्रृंखला को छोटा और अनुकूलित करने की एक विशाल क्षमता प्रदान कर सकती है तथा इस तरह हमारे देश के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में सुधार के लिये एक लंबा मार्ग तय कर आयात निर्भरता को कम कर सकती है ।

वर्टिकल फार्मिंग एक संतुलित वातावरण में फसल उगाने की प्रथा है, जैसे कि ग्रीनहाउस या इनडोर सुविधा। यह तरीका मौसम या मौसम की परवाह किए बिना साल भर उत्पादन की सहूलियत देता है। यह पानी और कीटनाशकों के उपयोग को भी कम करता है, और उन क्षेत्रों में फसलों के विकास की अनुमति देता है जो पारंपरिक खेती के लिए उपयुक्त नहीं हैं जैसे भारत के ठंडे पहाड़ी क्षेत्र।

वर्टिकल फार्मिंग का महत्त्व

वित्तीय व्यवहार्यता: यद्यपि ऊर्ध्वाधर खेती/वर्टिकल फार्मिंग में शामिल प्रारंभिक पूंजी लागत आमतौर पर अधिक होती है लेकिन यदि संपूर्ण फसल उत्पादन की परिकल्पना आवश्यकतानुसार उचित तरीके से की जाए तो यह प्रक्रिया पूरी तरह से लाभ प्रदान करने वाली बन जाती है और पूरे वर्ष या किसी विशिष्ट अवधि के दौरान एक विशेष फसल को ऊर्ध्वाधर खेती के माध्यम से उगाने, उसकी कटाई करने तथा उत्पादन करने में वित्तीय रूप से व्यवहार्य हो सकती है।

पानी की बचत: भारत जैसे देश के लिये, जिसमें दुनिया के जल संसाधनों का लगभग 4% हिस्सा है, ऊर्ध्वाधर कृषि–आधारित प्रौद्योगिकियाँ न केवल हमारे खाद्य उत्पादन की दक्षता व उत्पादकता को बढ़ा सकती हैं, बल्कि पानी की बचत के मामले में भी सुधार कर सकती हैं, जो बदले में अपने खाद्य उत्पादन पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर कार्बन–तटस्थता प्राप्त करने के भारत के महत्वाकांक्षी लक्ष्यों को समर्थन और प्रोत्साहन देगा।

बेहतर सार्वजनिक स्वास्थ्य: इसके अतिरिक्त चूंकि अधिकांश फसलें 'कीटनाशकों के उपयोग के बिना' उगाई जाती हैं, इससे 'समय के साथ–साथ बेहतर सार्वजनिक स्वास्थ्य की दिशा में सकारात्मक योगदान' प्रदान करता है; इसलिये उपभोक्ता शून्य–कीटनाशक उत्पादन की उम्मीद कर सकते हैं, जो ग्रह के लिये स्वस्थ, ताज़ा और टिकाऊ भी है ।

रोजगार: अंत में इस बात पर ज़ोर देना महत्त्वपूर्ण है कि संरक्षित खेती में हमारे देश के कृषि छात्रों के लिये नए रोज़गार, कौशल सेट और आर्थिक अवसर पैदा करने की क्षमता है, जो सीखने की अवस्था के अनुकूल होने के साथ तेज़ी से आगे बढ़ने में सक्षम है। इसके साथ साथ वर्टीकल फार्मिंग के और भी महत्त्व हैं जो निम्नवत है।

- खाद्य सुरक्षा के लिये मिट्टी रहित तकनीकों को प्रोत्साहित करना, भूख से लड़ने और कुपोषण के बोझ से निपटने के लिये खाद्य उत्पादन व वितरण प्रणाली को मज़बूत करना महत्त्वपूर्ण है ।
- एक्वापोनिक्स और हाइड्रोपोनिक्स के विकास में खाद्य सुरक्षा के सभी आयाम शामिल हैं।
- सरकार इन विधियों को पारंपरिक खेती के लिये व्यवहार्य विकल्प के रूप में मानती है और इन तकनीकों को बड़ी संख्या में किसानों के लिये सस्ती बनाने में सहायता प्रदान करेगी।

ज्ञान और कौशल प्रदान करना: हालाँकि इन वैकल्पिक तकनीकों का उपयोग विभिन्न हितधारकों द्वारा किया जा सकता है, घरेलू उपयोग के लिये कृषि करने वाले किसानों व छोटे से लेकर बड़े पैमाने पर खेती करने वाले किसानों तक सुरक्षित, सफल व टिकाऊ कार्यान्वयन हेतु उनमें विशिष्ट ज्ञान तथा कौशल विकसित किया जाना चाहिये।

सतत् खेती को सुगम बनाना: भारत जैसे देश में कृषि भूमि पर लगातार दबाव बना रहता है, अतः इसे अन्य विकल्प के रूप में उपयोग में लाया जाता है।

एरोपोनिक्स और हाइड्रोपोनिक्स: इस प्रणाली के तहत खेती द्वारा भूमि की कमी को दूर कर स्थायी कृषि तकनीकों पर अधिक ध्यान केंद्रित किया जा सकता है।

ऊर्ध्वाधर फार्मों के प्रकार

वर्टिकल फार्मिंग के प्रकार निम्नलिखित हैं :-

इमारतों में लंबवत फार्म – परित्यक्त इमारतों को ऊर्ध्वाधर खेती के लिए पुनर्निर्मित किया जाता है, लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि ऐसी इमारतों का अक्सर उपयोग किया जाए। आवश्यकताओं के आधार पर नई इमारतों का उपयोग ऊर्ध्वाधर खेतों के निर्माण के लिए भी किया जाता है।

शिपिंग-कंटेनर वर्टिकल फार्म – पुराने या पुनर्नवीनीकृत शिपिंग कंटेनर एलईडी लाइटिंग, लंबवत स्टैक्ड फार्म, जलवायु नियंत्रण और निगरानी सेंसर से सुसज्जित हैं। इस प्रकार के फार्म जगह बचा सकते हैं और इस प्रक्रिया में अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं।

भूमिगत ऊर्ध्वाधर फार्म – डीप फार्म के रूप में भी जाना जाता है, इस प्रकार के ऊर्ध्वाधर फ़ार्म भूमिगत सुरंगों, परित्यक्त खदान शाफ्ट या किसी भूमिगत वातावरण में बनाए जाते हैं। स्थिर तापमान और आर्द्रता का मतलब है कि उन्हें गर्म करने के लिए कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है और पानी की आपूर्ति के लिए भूमिगत जल स्रोत का उपयोग किया जा सकता है। ऐसे खेत पारंपरिक खेत की तुलना में 7 से 9 गुना अधिक भोजन का उत्पादन भी कर सकते हैं।

ऊर्ध्वाधर खेती की तकनीकें

हाइड्रोपोनिक्स

- हाइड्रोपोनिक्स जल आधारित, पोषक तत्त्वों के घोल में पौधों को उगाने की एक विधि है।
- इस विधि में जड़ प्रणाली को एक अक्रिय माध्यम जैसे- पेर्लाइट, मिट्टी के छर्रों, पीट, काई या वर्मीक्यूलाइट का उपयोग करके उगाया जाता है।
- इसका मुख्य उद्देश्य ऑक्सीजन तक पहुँच प्रदान करना है जो उचित विकास के लिये आवश्यक है।

एरोपोनिक्स

- एरोपोनिक्स खेती का एक पर्यावरण के अनुकूल तरीका है जिसमें जड़ें हवा में लटकी रहती हैं और पौधे बिना मिट्टी के आर्द्र वातावरण में बढ़ते हैं।
- यह हाइड्रोपोनिक्स का एक प्रकार है जहाँ पौधों के बढ़ने का माध्यम और बहते पानी दोनों अनुपस्थित होते हैं।
- इस विधि में पौधों की जड़ों पर पानी और पोषक तत्त्वों के घोल का छिड़काव किया जाता है।
- यह तकनीक किसानों को ग्रीनहाउस के अंदर आर्द्रता, तापमान, पीएच स्तर और जल चालकता को नियंत्रित करने में सक्षम बनाती है।

एक्वापोनिक्स

- एक्वापोनिक्स एक प्रणाली है जिसमें एक बंद प्रणाली के भीतर हाइड्रोपोनिक्स और जलीय कृषि की जाती है।
- एक्वापोनिक्स प्रक्रिया में तीन जैविक घटक होते हैं: मछलियाँ, पौधे और बैक्टीरिया।
- इस प्रणाली में पौधों और मछलियों के बीच एक सहजीवी संबंध पाया जाता है, अर्थात् मछली का मल पौधों के लिये उर्वरक के रूप में उपयोग किया जाता है, जबकि पौधे मछली हेतु जल को साफ करते हैं।

ऊर्ध्वाधर खेती के लाभ

दक्षता– पारंपरिक खेतों के लिए बहुत अधिक भूमि और पानी की आवश्यकता होती है, जबकि ऊर्ध्वाधर खेती के लिए प्रति एकड़ अधिक उपज के साथ इसके एक अंश की आवश्यकता होती है। एक और अतिरिक्त लाभ यह है कि ऊर्ध्वाधर खेती से पूरे वर्ष फसलें पैदा की जा सकती हैं। इससे भी अधिक कि उनकी व्यक्तिगत भूमि और भूखंडों के कारण एक ही बार में एक फसल काटी जा सकती है।

मौसम प्रतिरोधी– पारंपरिक खेती अप्रत्याशित मौसम पैटर्न और प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा, जंगल की आग आदि के अधीन होती है। ऊर्ध्वाधर खेती के नियंत्रित वातावरण में ऐसे कारकों को नकार दिया जाता है और इस प्रकार आपूर्ति श्रृंखला प्रक्रिया में व्यवधान की संभावना कम होती है।

पर्यावरण संरक्षण– वर्टिकल खेती पर्यावरण संरक्षण में मदद करती है क्योंकि पारंपरिक खेती के साथ होने वाली वनों की कटाई को नकारा जा सकता है, जिससे लंबे समय में संसाधनों की बचत होती है। घर के अंदर भोजन का उत्पादन कृषि मशीनरी द्वारा पारंपरिक जुताई, रोपण और कटाई को कम या समाप्त कर देता है, मिट्टी की रक्षा करता है और उत्सर्जन को कम करता है।

धान-गेहूं फसल प्रणाली में धान की पराली का प्रबंधन

रिंकू कुमार, दिनेश साह, अरुण कुमार एवं संजय कुमार
बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बांदा, (उ.प्र.)

परिचयः

धान–गेहूँ फसल प्रणाली दक्षिण एशियाई देशों में प्रमुख फसल प्रणाली है, जो गंगा के मैदानों (आईजीपी) में लगभग 13.5 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में फैली हुई है, जिसमें से 10 मिलियन हेक्टेयर भारत में है। भारत एक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था वाला देश है, और यहाँ बड़ी मात्रा में फसलों से उपोत्पाद के रूप में फसल अवशेष पैदा होता है। फसल अवशेष फसल से आर्थिक उत्पाद (दाना) निकालने के बाद खेत में जो शेष भाग रह जाता है जैसे तना, पत्तियां आदि को संदर्भित करता है। भारत में लगभग 686 मिलियन टन वार्षिक सकल फसल अवशेष का उत्पादन होता है, जिसमें से 234 मिलियन टन अधिशेष है और इसका 30 प्रतिशत धान और गेहूं का योगदान है। भारत में, फसल अवशेष का उत्पादन सबसे अधिक उत्तर प्रदेश (60 मि.टन) में है, इसके बाद पंजाब (51 मि.टन) और महाराष्ट्र का स्थान है (46 मि.टन)। धान उगाने वाले क्षेत्रों में श्रमिकों की कमी के कारण स्वचालित कंबाइन हार्वेस्टर, फसल की कटाई के लिए उपयोग किया जाता है। कंबाइन हार्वेस्टर का व्यापक रूप से उपयोग पुआल प्रबंधन की चुनौती को बढ़ाता है। ये हार्वेस्टर भारी मात्रा में पराली छोड़ते हैं, जिसे लेबर या मशीनों से हटाना मुश्किल होता है। यह बचा हुआ अवशेष किसानों को त्वरित समाधान के रूप में जलाने के लिए प्रेरित करता है। धान की कटाई के बाद गेहूं को समय पर बोने के लिए 10–20 दिनों की छोटी अवधि मिलती है, इसलिए, किसानों ने महसूस किया है कि बहुत कम समय के भीतर खेत को साफ करने के लिए जलाना सबसे सहज और सबसे सस्ता तरीका है। जबकि, अवशेष जलाने से न केवल वायु प्रदूषण होता है, बल्कि वाष्पीकरण दर भी बढ़ती है और मिट्टी से मैक्रो पोषक तत्वों के साथ–साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों का भी ह्रास होता है। जब फसल अवशेष खेत में पुनः प्रयोग किये जाते है तो वे कार्बनिक पदार्थों के साथ–साथ मैक्रो और सूक्ष्म पोषक तत्वों के मूल्यवान स्रोत सिद्ध होते हैं। चूंकि मशीनीकरण में वृद्धि हुई है, विशेष रूप से आईजीपी में कम्बाइन हार्वेस्टर का उपयोग और घरेलू उद्देश्य जैसे कि पशु आहार, घरेलू ईंधन, छप्पर, पैकेजिंग आदिके लिए फसल अवशेषों के पारंपरिक उपयोग की कमी प्रमुख कारण हैं, जिससे किसानों और शोधकर्ताओं को अवशेष प्रबंधन के बारे में सोचने के लिए मजबूर होना पड़ता है।

तालिका 1: भारत में फसल वार सकल और अधिशेष फसल अवशेष बायोमास उत्पादन क्षमता

फसल समूह	फसल	सकल क्षमता (मि.टन)	अधिशेष क्षमता (मि.टन)
1. अनाज	चावल	154.0	43.5
	गेहूं	131.1	28.4
	मक्का	35.8	9.0
	बाजरा	24.3	5.1
	ज्वार	17.6	3.5
	अन्य	4.9	0.6
2. दालें	अरहर, चना, अन्य	17.9	5.1
3. गन्ना	गन्ना	110.6	55.7
4. तिलहन	सरसों और रेपसीड, सोयाबीन, सूरजमुखी, मूंगफली, अन्य	48.8	14.3
5. रेशेदार फसलें	कपास और जूट	79.8	47.3
6. बागवानी फसलें	केला, नारियल और सुपारी	61.4	22.5
कुल		**686.0**	**234.5**

स्रोतः Hiloidharietal., (2014)

फसल अवशेष प्रबंधन के लिए प्रमुख चुनौतियां

- फसल अवशेषों का अधिक मात्रा में उत्पादन।
- बड़ी मात्रा में अवशेषों को इकट्ठा करना और संग्रहीत करना तार्किक रूप से जटिल और महंगा है।
- धान की कटाई और अगली फसल बोने के बीच की छोटी अवधि (10–20 दिन)।
- किसानों में स्थायी अवशेष प्रबंधन के बारे में जागरूकता और समझ की कमी है।
- अवशेष प्रबंधन के लिए उपयुक्त मशीनरी की उच्च लागत और सीमित उपलब्धता।
- घरेलू उद्देश्य के लिए फसल अवशेषों के पारंपरिक उपयोग में कमी।
- कंबाइन हार्वेस्टर लगभग 80 प्रतिशत अवशेष खेत में छोड़ता है, इससे अवशेष प्रबंधन की चुनौती बढ़ती है।
- वैकल्पिक विकल्पों की अनुपलब्धता।

फसल अवशेष प्रबंधन के लिए उपाय

समय की कमी और लागत के बोझ के कारण खेतों में काफी मात्रा में फसल अवशेषों को जला दिया जाता है। परली को ठीक से प्रबंधन करने के लिए बहुत से उपाय हैं और उपलब्ध विकल्पों को मोटे तौर पर दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है जैसे कि इन–सीटू और एक्स–सीटू फसल अवशेष प्रबंधन।

अ) इन–सीटू फसल अवशेष प्रबंधन

1. **गेहूं में मल्च के रूप में उपयोग:** धान के अवशेषों को शून्य जुताई (जेडटी) गेहूं में मल्च के रूप में उपयोग करना जलाने से बचने के लिए एक उभरता हुआ प्रबंधन का विकल्प है। मल्चिंग मिट्टी, जल संरक्षण और फसल की पैदावार में लाभ प्रदान करते हैं, विशेष रूप से अर्धशुष्क वातावरण में। मल्चिंग एकमात्र अभ्यास है जो वाष्पीकरण को कम करके वाष्पोत्सर्जन को कम करता है।
2. **पूसा डी–कंपोजर:** यह एक कवक–आधारित तरल घोल है जो कठोर पराली को इस हद तक नरम कर सकता है कि इसे खाद के रूप में कार्य करने के लिए खेत में मिट्टी के साथ आसानी से मिलाया जा सकता है। इसको इन–सीटू और एक्स–सीटू फसल अवशेष प्रबंधन में प्रयोग किया जा सकता है। इस उत्पाद के चार कैप्सूल से 25 लीटर तरल फॉर्मूलेशन बनाया जाता है, जिसे 1.0 हेक्टेयर धान के खेत में 5–6 टन धान के भूसे को उपचारित करने में प्रयोग किया जा सकता है। यह लगभग 20 से 25 दिनों में पराली को सड़ाने का कार्य पूर्ण कर सकता है। किसान को समय पर गेहूं की बुवाई करने में सक्षम बनाताहै।
3. **धान के अवशेष को मिट्टी में मिलाना:** फसल अवशेषों को जलाने से मिट्टी का क्षरण होता है और फसल अवशेष को मृदा मे मिला देने से अपघटन के बाद धान के अवशेष मिट्टी के पोषक तत्वों और कार्बनिक कार्बन की मात्रा को बढ़ता है। सड़ने की प्रक्रिया में तेजी लाने के लिए कुछ विशेष कवक जैसे ट्राइकोडर्मा हर्जियानम, प्लूरोटस साजोरकाजू और गोबर मिलाया जाये, तो सफल परिणाम मिलते है, जैसे फसल की उपज एवं मृदा की समस्याओं में सुधार होता है।

पूसा डीकंपोजर कैप्सूल

बेलिंग

धान के अवशेष प्रबंधन में शामिल मशीनें

वर्तमान में बहुत सी मशीनें उपलब्ध है जिनका उपयोग धान–गेहूं फसल चक्र में अवशेष प्रबंधन एवं समय से बुवाई के उद्देश्य से किया जाता है जैसे- **जीरोटिलसीड कम-फर्टी ड्रिल, हैप्पी सीडर, सुपर सीडर, टर्बो-हैप्पी सीडर**। इनका उपयोग मुख्य रूप से धान–गेहूँ फसल चक्र में गेहूं बोन के लिए लिए उपयोग किया जाता है। ये मशीनें जुताई कार्यो को समाप्त करके पिछली फसल (धान) की कटाई के ठीक बाद खेत की तैयारी किये बिना फसल अवशेषों में ही गेहूं बोने के लिए उपयोग किया जाता है। जिससे किसानों को पूर्व में पराली जलाने की आवश्यकता के बिना सीधे धान की फसल के बाद गेहूँ के बीज बोने की सुविधा मिलती है, जिससे पुआल भी जलने से बच जाता, और समय से बुवाई भी हो जाती है। इससे पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान होता है। **सुपर स्ट्रा मैनेजमेंट सिस्टम** (एसएसएमएस) यह भी एक उपकरण है जो कंबाइन हार्वेस्टर के पीछे जुड़ा होता है। यह धान के पुआल को छोटे टुकड़ों में काटता है और इसे फैलाता है।

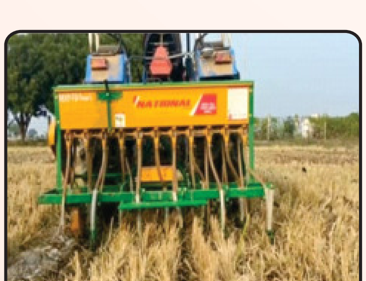

जीरो टिलसीड कम-फर्टी ड्रिल

सुपर सीडर

हैप्पी सीडर

टर्बो-हैप्पी सीडर

ब) एक्स–सीटू फसल अवशेष प्रबंधन

1. **बेलिंग और पुआल को हटाना:** मशीनों द्वारा पुआल को संपीड़ित करके गांठें बनाई जाती हैं जिन्हें वर्गाकार, आयताकार या गोल आकार में बनाया जा सकता है। पुआल की बेलिंग इसके परिवहन भंडारण और विपणन में भी मदद करती है। कृषि से अतिरिक्त पुआल का उपयोग कई उपयोगी उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है जैसे कि पशुधन चारा, ईंधन, निर्माण सामग्री, पशुधन बिस्तर, मशरूम की खेती के लिए खाद, खीरे, खरबूजे आदि जैसी सब्जियों के लिए बिस्तर और बागों और अन्य फसलों के लिए मल्चिंग।

2. **बायोचार का निर्माण:** धान के अवशेष को बायोचार बनाने में भी प्रयोग किया जा सकता है। बायोचार एक काले रंग का सॉलिड चूर्ण होता है। इसका उत्पादन पायरोलिसिस प्रक्रिया के माध्यम से किया जाता है। जिसका अर्थ ऑक्सीजन की सीमित आपूर्ति और कम सापेक्ष तापमान के तहत कार्बनिक कचरे का तापीय अपघटन है। पायरोलिसिस प्रक्रिया में, बड़े अणु छोटे अणुओं में टूट जाते हैं। हालांकि बायोचार कभी भी मिट्टी में पोषक तत्व नहीं जोड़ता है, लेकिन मृदा सुधारक का काम करता है। बायोचार की मदद से ग्रीनहाउस गैसों में कमी, कार्बनसीक्वेस्ट्रेशन (संग्रहित), जल एवं वायु प्रदूषण में कमी, और फसल की उपज में वृद्धि होती है।

3. **कम्पोस्टिंग:** कम्पोस्टिंग धान के अवशेषों के पुनर्चक्रण और उनमें निहित पोषक तत्वों के पुन: प्रयोज्य के लिए एक आकर्षक रूप है। चावल के अवशेषों को एफवाईएम की तुलना में बेहतर गुणवत्ता की उच्च मूल्य की खाद में परिवर्तित किया जा सकता है और रासायनिक उर्वरकों के साथ इसका उपयोग कृषि उपज को बढ़ाने में भी मदद करता है। धान के अवशेषों को मवेशियों का गोबर, हाइपरसेल्युलाइटिक कवक संवर्धन, केंचुए, मुर्गी विष्ठा, पशु बिस्तर सामग्री आदि से उपचारित करके सड़ाने की जैव प्रक्रिया को बढ़ाया जा सकता है।

4. **पशु बिस्तर सामग्री के रूप में पुआल का उपयोग:** किसानों को सलाह दी जाती है कि वे सर्दियों में मवेशियों के लिए बिस्तर सामग्री के रूप में धान के अवशेषों का उपयोग करें। धान का पुआल एक शुष्क, स्वच्छ, आरामदायक, गैर–फिसलन वाला और स्वच्छ वातावरण प्रदान करता है जो लंगड़ापन और चोट की संभावना को कम करता है। स्वस्थ पैर जानवरों के बेहतर दूध उत्पादन और प्रजनन क्षमता सुनिश्चित करते हैं। बाद में पशु बिस्तर का कम्पोस्टिंग और बायो गैस बनाने में उपयोग किया जा सकता है।

5. **मवेशियो के लिए भोजन सामग्री के रूप में पुआल का उपयोग:** पारंपरिक रूप से, गेहूं के भूसे का एक बड़ा हिस्सा पशु आहार के रूप मे उपयोग किया जाता है, लेकिन धान के भूसे में उच्च सिलिका (12-16 प्रतिशत) और लिग्निन सामग्री भूसे के पोषक मूल्य, गुणवत्ता को बहुत कम करते हैं, और इसलिए जानवरों के लिए फीड के रूप में पसंद नहीं किया जाता है। धान के भूसे के मांस और दूध उत्पादन के सुधार में योगदान को बढ़ाने के लिए कई भौतिक रासायनिक और जैविक प्रक्रियाओं द्वारा भूसे का पूर्व–उपचार आवश्यक है। जैसे भिगोने, पेलेटिंग, पीसने, उबालने, सोडियम हाइड्रॉक्साइड, कैल्शियम हाइड्रॉक्साइड, पोटेशियम हाइड्रॉक्साइड, निर्जल अमोनिया, यूरिया/पेलेटिंग, चूने/पेलेटिंग, लेकिन सुरक्षा चिंताओं, लागत और संभावित नकारात्मक पर्यावरणीय परिणामों से संबंधित मुद्दों के कारण इनमें से किसी को भी वास्तविक अवधि में गति नहीं मिली।

6. **मशरूम की खेती के लिए धान के भूसे का उपयोग:** धान के पुआल को मशरुम उत्पादन में भी उपयोग किया जाता है जो कि पुआल को प्रबंधित करने में सहायक होती है। धान के पुआल के मशरुम जैसे वोल्वरिएल्ला स्पीशीज का 4–5 किलोग्राम उत्पादन के लिए लगभग 30 किलो सूखा पुआल की आवश्यकता होती है।

7. **उद्योगों में उपयोग:** चावल के अवशेषों को औद्योगिक उपयोग को मजबूत करके प्रबंधित किया जा सकता है, जैसे कि बिजली उत्पादन, इथेनश्वल उत्पादन, कागज बनाना पैकेजिंग सामग्री, बायोगैस उत्पादन, एक्यूस्टिक सामग्री, टोपियाँ और चटाई, रस्सियाँ, टोकरी आदि।

धान के अवशेष का मिट्टी में मिलाने या समावेश के प्रभाव:

धान के अवशेष को मिट्टी में मिलाने से मिट्टी की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों पर लाभदायी परिणाम मिलते हैं। जैसे हाइड्रोलिक चालकता, मृदा समुच्चय का निर्माण, मिट्टी का तापमान, मृदा घनत्व की कमी, मिट्टी की नमी संरक्षण, सरंध्रता, सी.ई.सी. तथा माइक्रोबियल बायोमास आदि।

निष्कर्ष :

यद्यपि फसल के अवशेषों को खेत में जलाना एक आसान और सस्ता तरीका है, लेकिन पर्यावरणीय स्वास्थ्य की दृष्टिकोण से सही नहीं है। धान–गेहूं प्रणाली में प्रभावी अपशिष्ट प्रबंधन टिकाऊ कृषि के लिए महत्वपूर्ण है। कम्पोस्टिंग, मल्चिंग और बायो–डीकंपोजर का उपयोग जैसे उपायों को शामिल करके धान की पुआल का प्रबंधन कर सकते है और किसान मिट्टी की उर्वरता बढ़ा सकते हैं, पर्यावरण प्रदूषण को कम कर सकते हैं और फसल की पैदावार में सुधार कर सकते हैं। ये उपाय न केवल स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा देते हैं, बल्कि दीर्घकालिक कृषि उत्पादकता का भी समर्थन करती हैं। कुल मिलाकर, धान गेहूं फसल प्रणाली में जैविक अपशिष्ट प्रबंधन रणनीतियों को अपनाना पारिस्थितिक संतुलन और टिकाऊ खेती प्राप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

तिल की आधुनिक खेती हेतु पौध संरक्षण

द्वारका[1] एवं निशा चढ़ार[2]
[1]जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
[2]सरकारी पीजी कॉलेज, टीकमगढ़ (म.प्र.)

परिचय

तिल की फसल पौध अवस्था से परिपक्वता तक अनेकों कीट व्याधियों से प्रभावित होती है। पिछले तीस वर्षों के आंकड़ों से यह प्रदर्शित होता है कि मध्यप्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र में तिल का पत्ती मोड़क एवं फली छेदक कीट (*एन्टीग्रेस्ट्रा केटेलोनेलिस*) एक नियमित प्रमुख कीट है जो कि फसल को दो पत्ती वाली पौध अवस्था से फूलावस्था एवं फली अवस्था पर प्रभावित करता है। फली मक्खी (*डेसिनेयूरा सिसेमी*) जो कि कभी–कभी दिखने वाला गौण कीट है, समय के साथ तिल में एक नियमित एवं संभावित रूप से संकट पैदा करने वाले कीट का दर्जा प्राप्त कर चुका है। रस चूसक कीट अन्य नियमित कीट है जिसमें जैसिड (*ओरोसियस अल्बीसिन्कटस*), सफेद मक्खी (*बेमिसिया टेबैसी*) तथा मिरिड बग (*नेसिडिओकोरिया टेनुइस*) प्रमुख है। जैसिड तिल के पर्णताभ रोग का वाहक भी है। तिल हॉक मॉथ एक अनियमित कीट है तथा सफेद मक्खी तिल में लीफ कर्ल नामक बीमारी फैलाती है। मध्यप्रदेश में कहीं–कहीं गाल मक्खी का भी प्रकोप होता है।

1. पत्ती लपेटक या रोलर और कैप्सूल छेदकः *एंटीगेस्ट्रा कैटेलोनेलिस* – क्रेम्बिडी–लेपिडोप्टेरा

पहचानः पत्ती वेबर और कैप्सूल बेधक का वयस्क कीट छोटा होता है, आम तौर पर 8 से 10 मिमी लंबा, भूसे के रंग का और अगले पंखों पर नारंगी–लाल नसें होती हैं। गुलाबी किनारों को छोड़कर, पिछले पंख हल्के पीले रंग के हैं। अगले पंखों का पार्श्व किनारा और पिछले पंखों का किनारा एक झालर के साथ होता है। पंख का विस्तार 18 से 20 मिमी है और पंखों की नोक पर गहरे भूरे रंग के निशान हैं। नर और मादा दोनों के पैर पीले से पीले–भूरे रंग के लंबे होते हैं। प्यूपा लगभग 8 से 10 मिमी लंबे, हरे–बैंगनी रंग के होते हैं, जिनके आगे और पीछे के सिरे पतले होते हैं और आम तौर पर सफेद रेशमी धागों से ढके होते हैं। पूर्ण विकसित लार्वा लगभग 10 से 14 मिमी लंबा होता हैं।

नुकसान के लक्षणः लार्वा तिल के पौधों पर अंकुरण अवस्था से ही हमला करना शुरू कर देता है जब फसल 10 से 15 दिन की हो जाती है। पौधे के विकास की प्रारंभिक अवस्था में कैटरपिलर कुछ ऊपरी पत्तियों को एक साथ लपेटकर अंदर खाती है। लार्वा विकास के बाद के चरणों के दौरान, कुछ और पत्तियां प्रभावित होती हैं और रोल बड़ा और बड़ा हो जाता है। फसल में फूल आने की अवस्था में लार्वा फूल की कलियों में घुस जाते हैं और फूल भी अक्सर जाल में फंस जाते हैं। संक्रमित कलियाँ और फूल कैप्सूल बनाने में विफल हो जाते हैं और गिर जाते हैं। इस स्तर पर, कैटरपिलर अक्सर संक्रमित से स्वस्थ कलियों और फूलों की ओर पलायन करता है। इस अवस्था में कीट सबसे अधिक नुकसान पहुंचाता है। जब कैप्सूल बनते हैं, तो कैटरपिलर कैप्सूल में घुस जाते हैं और विकसित हो रहे बीजों को खा जाते हैं।

पत्ती लपेटक और कैप्सूल छेदक इल्ली द्वारा प्रभावित कैप्सूल/फसल

प्रबंधन

तिल मोड़क एवं फली छेदक कीट प्रकोप की भविष्यवाणी

ज.ने.कृ.वि.वि., कृषि महाविद्यालय, टीकमगढ, मध्य प्रदेश द्वारा तिल मोड़क एवं फली छेदक के कीट प्रकोप की भविष्यवाणी विधि का विकास किया है। इसके अनुसार फसल की प्रारंभिक अवस्था में (30 से 40 मानक मौसम सप्ताह के दौरान) औसत अधिकतम तापमान 30 डिग्री सेल्सियस से अधिक, न्यूनतम तापमान 25 डिग्री सेल्सियस के आसपास तथा मौसम शुष्क (वर्षा लगभग 50 मिमी. प्रति सप्ताह) होने पर फूल एवं फली निर्माण अवस्थाओं में तिल पत्ती मोड़क एवं फली छेदक कीट का प्रकोप अत्यधिक होगा। इस स्थिति में कीट नियंत्रण के आवश्यक उपाय अपनाने चाहिए। पौधे की वृद्धि के प्रारंभिक चरणों के दौरान पत्ती के जाले से लार्वा को इकट्ठा करें और नष्ट करें। लार्वा की भविष्यवाणी की सुविधा के लिए पक्षी पर्चेस 40–50/हेक्टेयर। स्प्रे नीम के बीज की गुठली का अर्क (एन.एस.के.) 5 प्रतिशत या नीम का तेल 5 मिली/लीटर या इस्पाइनोसेड 45 एस सी 0.2 मिली/लीटर या फ्लुबेंजीओमाइड 480 एस एल 0.3 मिली/लीटर या प्रोफेनोफॉस 50 ई सी 2 मिली/ली।

2. गाल फ्लाई और बड फ्लाईः सेसिडोमायडी–डिप्टेरा

गाल फ्लाईः *एसफॉन्डायलिया सिसेमी*

बड फ्लाईः *डेसीन्यूरा सिसेमी*

पहचानः वयस्क मिज एक छोटा (5 मिमी लंबा), मच्छर जैसा, लाल शरीर वाला कीट है जिसके लंबे पतले, पीले–भूरे रंग के पैर होते हैं। अगले पंख पारदर्शी, सांवले और असंख्य छोटे भूरे बालों से ढके हुए हैं। पूर्ण विकसित लार्वा की लंबाई लगभग 3 से 4 मिमी होती है।

क्षति की प्रकृतिः मादा मक्खी फूलों के अंडाशय में अपने अंडे देती है और

पंखुड़ियों के मुरझाने या मुड़ने और बौने होने से पहले ही पित्त विकसित होना शुरू हो जाता है और फूल या कैप्सूल में विकसित नहीं हो पाता है। भारी संक्रमण वाले वर्षों में अनुमानित उपज में कमी 30 प्रतिशत से अधिक तक पहुंच सकती है। ये अतिसंवेदनशील जीनोटाइप और अनुकूल परिस्थितियों में बीज उपज को 100 प्रतिशत तक कम कर देते हैं।

क्षति के लक्षण: छोटे छोटे शिशु पुष्प के अंदर रहकर उन्हें खाते रहते हैं जिससे पत्ती जैसी संरचना बनती है जो कैप्सूल में विकसित नहीं होता है। प्रभावित कलियाँ मुरझा जाती हैं और गिर जाती हैं। कली अवस्था के समय कीट सक्रिय रहता है।

गाल फ्लाई से ग्रसित फसल

प्रबंधन:

- गलियों की कतरन, शेड की कलियों को चुनना और जलाना रोग निरोधी उपाय के रूप में मदद करता है।
- नीम के बीज की गुठली का अर्क (नसके) 5 प्रतिशत या डाइमेथोएट 30 ई सी 1.5 मिली /ली या क्विनालफॉस 2.5 ई. सी. 1.5 मिली/ली या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.3 मिली/ली कली की अवस्था पर स्प्रे करना चाहिए।

3. तिल का फुदका/जैसिड: *ओरोसियस एल्वीसिंकटस* - सिसेडीलिडी- हेमीप्टेरा

लीफ हॉपर तिल का एक गंभीर कीट है और फायलॉडी रोग फैलाने के लिए जाना जाता है। यह देश के लगभग सभी तिल उत्पादक क्षेत्रों में साल दर साल दिखाई देता है। यह बताया गया है कि तिल फायलॉडी रोग साल भर प्रचलित रहते हैं।

क्षति के लक्षण: निम्फ और वयस्क पौधों के कोमल भागों का रस चूसते हैं। पत्तियां किनारे से मुड़ना शुरु हो जाती है पत्तियों का रंग लाल या भूरा हो जाती हैं और फिर सूखकर गिर जाती हैं। जैसिड या फुदका तिल का एक गंभीर कीट है और इसे फाइलोडी रोग फैलाने के लिए जाना जाता है। कीट वनस्पति अवस्था से कैप्सूल बनने तक की अवस्था तक सक्रिय रहता है।

तिल का फुदका (प्रजाति- *ओरोसियस एलविसिंक्टस*)

प्रबंधन:

1. इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू.एस. 7.5 ग्राम/किग्रा या थियामेथॉक्साम 25 डब्ल्यू.जी. 5 ग्राम/किग्रा बीज के साथ बीजोपचार करें।
2. स्प्रे नीम के बीज की गुठली का अर्क (नसके) 5 प्रतिशत या डाइमेथोएट 30 ई.सी. 1.5 मिली/ली या ऑक्सिडेमेटन मिथाइल 25 ई.सी. 1.5 मिली/ली या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 0.3 मिली/ली। एसिटामिप्रिड 20 एस.एल. 0.3 ग्राम/ली या थायमेथॉक्साम 25 डब्ल्यू.जी. या थायक्लोप्रिड 21.7 एस.एल. 1 मिली/ली।

4. हॉक कीट या स्फिंक्स कैटरपिलर: एकैरॉन्टिया स्टयक्स- स्फिंगिडी

लेपिडोप्टेरा इस कीट को आमतौर पर हॉक मॉथ, स्फिंक मॉथ या डेथ हेड मॉथ के नाम से जाना जाता है और यह भारत में तिल का आम कीट है। यह कीट प्रकृति में पॉलीफैगस है। इस कीट के वयस्क कीट हानिकारक होते हैं इस कीट का वयस्क एक लंबा लाल भूरा, मजबूत और मोटा सेट पतंगा होता है जिसके पंख लगभग 10 सेमी के होते हैं। अधिकांश गोधूलि या निशाचर हैं, लेकिन कुछ प्रजातियां दिन के दौरान उड़ती हैं। नर और मादा दोनों अपेक्षाकृत लंबे समय तक जीवित रहते हैं (10 से 30 दिन)।

हॉक कीट या स्फिंक्स कैटरपिलर

क्षति के लक्षण: कैटरपिलर पत्तियों को खाते हैं और पौधे को खराब करते हैं। कीट युवा एवं वयस्क दोनों अवस्था में फसल पर पूरे मौसम भर सक्रिय रहता है।

प्रबंधन:

- गहरी जुताई से कीट शंखी अवस्था पर जमीन के बाहर निकल आता है जिससे कीटभक्षी पक्षी उन्हें खाकर नष्ट कर देते है जोकि भविष्यवाणी के लिए शंखी अवस्था को उजागर करती है।

- कैटरपिलर का संग्रह और विनाश।
- नीम के बीज की गुठली का अर्क (नसके) 5 प्रतिशत या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 1.5 मिली/ली या क्लोरपायरीफोस 20 ई. सी. 2 मिली/ली का छिड़काव करें।

5. बिहार हेयरी कैटरपिलर: *स्पाइलोसोमा ओब्लीकुआ*, आर्कटिडी, लेपिडोप्टेरा

कैटरपिलर का सिर काला होता है, इसके पीछे काले बालों के गुच्छे होते हैं, और शेष भाग पर पीले बालों के समान गुच्छे होते हैं। वयस्क पंखों का फैलाव लगभग 23 मिमी (0.9 इंच) होता है। पंख छोटे काले धब्बों के पैटर्न के साथ हल्के भूरे रंग के होते हैं, और पेट लाल होता है।

बिहार हेयरी कैटरपिलर से ग्रसित फसल

क्षति के लक्षण: शुरुआती चरणों में, लार्वा ग्रीगेरियस प्रकार से पौधे को खाते है और कुछ पौधों पर केंद्रित होते हैं। वयस्क कैटरपिलर अन्य पौधों की ओर पलायन करते हैं और केवल तने को छोड़कर पौधे का पूरे भाग को भोजन के रूप में ग्रहण करते हैं। कीट की घटना वनस्पति अवस्था से शुरू होती है और परिपक्व होने तक जारी रहती है।

प्रबंधन:

- फसल की कटाई के चरण के दौरान संक्रमित पौधे के हिस्सों, अंडे और युवा लार्वा को इकट्ठा करें और नष्ट करें।
- लार्वा की भविष्यवाणी की सुविधा के लिए सही संख्या में पक्षी पर्चेस 40– 50/हेक्टेयर की व्यवस्था होनी चाहिए।
- वयस्कों को पकड़ने के लिए प्रति हेक्टेयर एक प्रकाश प्रपंच स्थापित करें।
- *बेसिलस थुरिंजीयेन्सिस* संस्करण का उपयोग करें। कुरस्टाकी / 1 ग्राम या नीम के बीज की गुठली का अर्क (नसके) 5% या क्लोरपाइरीफॉस 20 ई सी 1.5 मिली/ली या क्विनालफॉस 25 ई. सी. 1.5 मिली/ली या ऐसीफेट 75 एस पी 1.5 ग्राम/लीटर या इंडोक्साकार्ब 15.8 ई सी 0.5 मिली/ली।

6. माहू कीट: *माइजस पर्सिकी* : एफीडिडी : हेमीप्टेरा

क्षति के लक्षण: पत्तों का सिकुड़ना और मुड़ना और कीड़ों द्वारा उत्सर्जित शहद के कारण पत्तियां चमकदार और चिपचिपी दिखाई देती हैं एवं बाद में कालिख का साँचा शहद की ओस पर उगता है और पत्तियों पर काले रंग का लेप होता है। कीड़े इतने छोटे (लंबाई में कुछ मिलीमीटर) होते हैं कि हवा उन्हें काफी लंबी दूरी तक ले जा सकती है। एफिड्स हनीड्यू नामक एक शर्करायुक्त तरल का उत्सर्जन करते हैं, क्योंकि जिस पौधे के रस से वे भोजन करते हैं, उसमें प्रोटीन की कम मात्रा के सापेक्ष अधिक कार्बोहाइड्रेट होते हैं। अपनी प्रोटीन की जरूरतों को पूरा करने के लिए, बड़ी मात्रा में सैप को अवशोषित करते हैं और अतिरिक्त कार्बोहाइड्रेट को बाहर निकाल देते हैं। हनीड्यू का उपयोग चींटियों, मधुमक्खियों और कई अन्य कीड़ों द्वारा भोजन के रूप में किया जाता है।

कीट की पहचान : पीले से गहरे रंग के छोटे, मुलायम शरीर वाले, मोती के आकार के कीड़े होते हैं जिनमें पांचवें या छठे उदर खंड से बाहर निकलने वाले कॉर्निकल्स (मोम-स्त्रावित ट्यूब) की एक जोड़ी होती है।

माहू कीट

प्रबंधन:

- प्रारंभिक अवस्था में माहू कीट की आबादी के साथ प्रभावित भागों को नष्ट कर दें।
- माहू कीट की आबादी पर नजर रखने के लिए पीली छड़ी का जाल स्थापित करें।
- प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण करें: जैसे *लेडीबर्ड बीटल, कोकिनेला सेप्टेमपंकटाटा, मेनोचिलस सेक्समैकुलाटा, हिप्पोडामिया वेरिएगाटा* और *चेइलोमोन्स विसिना* जो सरसों एफिड के सबसे कुशल शिकारी हैं। वयस्क भृंग औसतन 10–15 वयस्क/दिन खा सकते हैं।
- एंटोमोजेनस कवक, *सेफलोस्पोरियम* स्पीशीज, *एंटोमोफथोरा* और *वर्टिसिलियम लेकानी* माहू कीट को संक्रमित करते हैं।
- सिरफिड मक्खी की कई प्रजातियाँ अर्थात, *स्पैरोफोरिया* स्पीशीज, *एरिस्टालिस* स्पीशीज, *मेटासिर्फिस* स्पीशीज, *जैंथोग्रामा* स्पीशीज और *सिरफस* स्पीशीज।
- ब्रोकोनिड पैरासिटॉइड डायरेटिएला रैपे, एक बहुत सक्रिय जैव-नियंत्रण एजेंट एफिड्स के ममीकरण का कारण बनता है।
- लेसविंग, क्राइसोपरला कार्निया सरसों के एफिड कॉलोनी पर पूर्वसूचक है।
- इमिडाक्लोप्रिड (5 ग्राम/किलोग्राम बीज) से बीज उपचार करने से फसल एक महीने तक चूसने वाले कीटों से मुक्त रहती है।

- इमिडाक्लोप्रिड के मिश्रण से तने पर स्प्रे करें: बुवाई के 20, 40 और 60 दिनों में पानी (1:20)।

7. सफेद मक्खी (*बेमेसिया टेबेसाई*) – *ट्राइएल्यूरोड्स वेपोरेरिओरम:* बेमेसिया अर्जेन्टिफोलियाई– एल्यूरोडिडी– हेमिप्टेरा

छोटे कीड़े हैं, अधिकांश प्रजातियां 3 मिमी से कम पंखों वाली और 1 मिमी से 2 मिमी की शरीर की लंबाई वाली होती हैं। नुकसान फफूंदी के विकास से होता है जो हनीड्यू व्हाइटफ्लाइज द्वारा स्रावित होता है। यह तिल की फसल को संसाधित करने के लिए खेतों की क्षमता को भी गंभीर रूप से बाधित कर सकता है।

प्रबंधन:

- फसल को साफ सुथरा रखें ।
- अधिक प्रभावित पत्तियों को हाथों से निकाल दे ।
- पीले रंग का स्टिकी ट्रैप लगाये 20 ट्रैप प्रति एकड़ ।
- नीम तेल 5 मिली प्रति लीटर पानी में डालकर स्प्रे करें। फोलियर छिड़काव में डाई फेन्थयूरॉन 50 प्रतिशत डब्ल्यू/डब्ल्यू (पेगासस) 1 ग्राम/लीटर पानी या पाइरीप्रोक्सीफेन 10 प्रतिशत बाईफेन्थ्रिन 10 प्रतिशत ई.सी 5 मि .ली. /लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करे ।

8. मिरिडबग/मत्कुण: *नेसिडियोकोरिस टेन्यूस:* मिरिडी: हेमीप्टेरा

एक कुशल जैविक नियंत्रण एजेंट के रूप में वाणिज्य में इसके वितरण के कारण भूमध्यसागरीय मूल के नेसिडियोकोरिस टेनुइस कई भौगोलिक क्षेत्रों में आम हो गए हैं। वयस्क चमकीले हरे, लगभग 5–6 मिमी लंबे, पिछले पंखों पर काले धब्बे और बड़ी उभरी हुई गहरी आंखों वाले होते हैं। निम्फ भी हरे रंग के होते हैं, लगभग 4 मिमी लंबे।

मिरिड बग के अण्डे व व्यस्क

रसायनों का प्रभाव: ग्रीनहाउस कीटों को नियंत्रित करने के लिए आईपीएम के प्रयासों के तहत परखने वाले कई कीटनाशकों का भी एन. टेनुइस पर परीक्षण किया गया था। वेटेबल सल्फर परभक्षी के लिए हानिरहित था, लेकिन डस्टेबल सल्फर मध्यम रूप से हानिकारक था। स्पिरोटेट्रामैट हानिरहित था जबकि इमिडाक्लोप्रिड विषैला था।

9. दक्षिणी हरा बदबूदार कीट: *नेजारा विरिडुला* – हरा स्टिंग बग, एक्रोस्टर्नम हिलेरी: पेंटाटोमिडी : हेमीप्टेरा

मादा एक बार में 30 से 130 अंडे देती है, एक अंडे के द्रव्यमान के रूप में एक पत्ती के नीचे मजबूती से चिपकी रहती है। अंडे बैरल के आकार के होते हैं, शीर्ष पर एक उद्घाटन के साथ। तापमान के आधार पर अंडे को विकसित होने में 5 से 21 दिन लगते हैं। समशीतोष्ण क्षेत्रों में जनसंख्या को सीमित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण कारक सर्दी जुकाम है। अतिशीतकालीन व्यक्तियों की मृत्यु दर 30 से 80 प्रतिशत के बीच है, और जनसंख्या उन क्षेत्रों में जीवित नहीं रह सकती है जहां औसत मध्य–सर्दियों का तापमान 5 डिग्री सेल्सियस से कम है। पुरुषों की तुलना में महिलाओं के सर्दियों में जीवित रहने की संभावना अधिक होती है, क्योंकि बड़े व्यक्ति और लाल–भूरे रंग का विकास करते हैं। हाल के दशकों में, प्रजातियां संभवत: ग्लोबल वार्मिंग के कारण उत्तर की ओर अपनी सीमा का विस्तार करती दिख रही हैं।

नेजाराबग के अण्डे

व्यस्क हरा स्टिंग बग

प्रबंधन

कृषि जनित नियंत्रण:

1. गर्मियों में गहरी जुताई करने से मिट्टी में शीतनिद्रा में रहने वाले कीट उजागर हो जाते हैं और स्वयंसेवी पौधे और खरपतवार नष्ट हो जाते हैं जो कई कीटों के लिए भोजन और प्रजनन स्थल प्रदान करते हैं।
2. जल्दी बुआई (जुलाई के पहले सप्ताह में) और 80–85 दिनों की अवधि वाली उमा, आरटी–46 और जेटी–7 जैसी शुरुआती किस्मों का उपयोग और फसल को बढ़ावा देने के लिए उर्वरक की संतुलित खुराक का उचित उपयोग। विकास फसल को कमजोर अवस्था से गुजरने देता है, इससे पहले कि पत्ती वेबर और कैप्सूल बेधक और पित्त मक्खी जनसंख्या को आर्थिक सीमा स्तर से ऊपर बढ़ा दें।
3. तिल + हरा चना/काला चना (3:3) और तिल + क्लस्टर बीन (3:3) के साथ अंतरफसल लगाने से पत्ती वेबर और कैप्सूल बेधक, पित्त मक्खी और बड मक्खी की घटना कम हो गई।
4. तिल के टिकाऊ उत्पादन के लिए आलू–तिल, मूंगफली–तिल, तिल–चना, तिल–उड़दबीन और लोबिया–तिल के साथ तिल की फसल का चक्रण कुछ महत्वपूर्ण चक्र हैं।

प्रतिरोधी किस्में: आनुवंशिक प्रतिरोध कीट नियंत्रण का सबसे पुराना, सबसे प्रभावी और किफायती तरीका है। प्रतिरोधी किस्में कीटों से बचाव की पहली पंक्ति हैं और इसलिए तिल में आईपीएम का भरोसेमंद घटक और आधारशिला हैं। तिल के प्रमुख कीटों के प्रति विभिन्न सहिष्णु किस्मों की पहचान की गई है।

प्रमुख कीट एवं उनकी सहनशील किस्में

सं.क्र.	कीट का नाम	सहिष्णु प्रजातियाँ
1.	पत्ती रोलर/कैप्सूल छेदक (*एंटीगैस्ट्रा कैटेलोनेलिस*)	रामा, आरटी–54, आरटी–103, आरटी–125, उषा, स्वेता तिल, तापी, कृष्णा, एन–32, जेटीएस–8, एमटी–75 , हिमा और एसआई–250
2.	पित्त मक्खी (*एस्फोनडायलिया सिसेमी*)	आरटी–46, स्वेता टिल, आरटी–103, आरटी–125, ओएमटी–26, राउस–17–4 और एन–32
3.	*एंटीगैस्ट्रा* और *एस्फोन्डिलिया*	आरटी–46, आरटी–103, स्वेता टिल, आरटी–127 और एन–32
4.	बड फ्लाई (*डेसिन्यूरा सिसेमी*)	एमटी–75
5.	गाल फ्लाई और माइट्स	आरटी–127
6.	रबी/ग्रीष्म ऋतु के लिए बालों वाली कैटरपिलर	थिलोथामा और रामा
7.	लीफ माइनर	टीएमवी–3

जैविक नियंत्रण:

1. पित्त मक्खी के लार्वा परजीवी जैसे यूरीटोमा डेंटिपेक्टस, टेरोमोलस फासिआटस, ब्रैकोन हेबेटर आदि का संरक्षण करेंय कोटेसियास्पी., क्योंकि यह बाज कीट के लार्वा और मकड़ी, लेडीबर्ड बीटल, लेसविंग आदि जैसे शिकारियों के लिए एक महत्वपूर्ण परजीवी है।
2. विभिन्न एआईसीआरपी (तिल और नाइजर) केंद्रों पर तीन कवक रोगजनकों का परीक्षण किया गया और उन्होंने बताया कि कवक की क्षमता, मेटारिजियम की तुलना में ब्यूवेरिया बैसियाना अधिक था। एंटीगैस्ट्रा के लार्वा के खिलाफ अनिसोप्लिया। हालाँकि वर्टिसिलियम लेकानी को एंटीगैस्ट्रा के लार्वा के खिलाफ सबसे कम प्रभावी पाया गया।

रासायनिक नियंत्रण:

1. फसल वृद्धि के वानस्पतिक और फूल चरण में लीफ वेबर और कैप्सूल के लिए आर्थिक सीमा स्तर 1 से 2 लार्वा प्रति पौधा है, कैप्सूल निर्माण चरण में 1 लार्वा प्रति पौधा, पित्त मक्खी के लिए 2 से 5 गॉल प्रति पौधा है। एंटीगैस्ट्रा और एस्फोन्डिलिया के लिए आर्थिक सीमा स्तर 10 प्रतिशत पौधा संक्रमण स्तर है।
2. इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू.एस. (7.5 ग्राम प्रति किग्रा) या थियामेथोक्सम से बीज उपचार और दो पत्तियों पर प्रोफेनोफोस 50 ईसी (2 मिली प्रति लीटर) या स्पिनोसैड 45 एससी (0.15 मिली प्रति लीटर) या क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 18.5 एससी (0.4 मिली प्रति लीटर) या नोवालूरॉन 10 ईसी का छिड़काव करें। (2 मिली प्रति ली) या फ्लुबेन्डियामाइड 480 एससी (0.3 मिली प्रति ली) 30 और 45 डीएएस पर तिल के प्रमुख कीट के प्रबंधन के लिए प्रभावी और किफायती पाया गया है।
3. लीफ हॉपर, मिरिड के प्रबंधन के लिए इमिडाक्लोप्रिड 600 एफएस (5 मिली प्रति किग्रा बीज) से बीज उपचार और इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल/0.25 मिली प्रति लीटर या थियामेथोक्साम 25 डब्लूजी / 0.25 ग्राम प्रति लीटर के दो पत्तों का छिड़काव प्रभावी और किफायती पाया गया है। तिल में बग, पित्त मक्खी, सफेद मक्खी और अन्य रस चूसने वाले कीट।

यांत्रिक विधियाँ –

तिल के कीटों को नियंत्रित करने के लिए कुछ यांत्रिक विधियाँ काफी प्रभावी पाई गई हैं:–

1. क्षतिग्रस्त पत्तियों के साथ बालों वाले कैटरपिलर के अंडों के समूह और सामूहिक अवस्था को हाथ से चुनना और नष्ट करना।
2. एंटीगैस्ट्रा और एस्फोन्डिलिया से संक्रमित पत्ती रोल, शूट, कैप्सूल और कलियों को इकट्ठा करने और नष्ट करने से कीड़ों की आबादी की जांच करने में मदद मिलती है।
3. पित्त को काटना और शेड की कलियों को तोड़ना और जलाना पित्त मक्खी के लिए अच्छे रोगनिरोधी उपाय हैं।
4. 40 से 50 प्रति हेक्टेयर की दर से पक्षियों के बैठने के स्थान का निर्माण।
5. बिहार बालों वाले कैटरपिलर के वयस्कों को पकड़ने के लिए प्रति हेक्टेयर एक प्रकाश जाल स्थापित करें।

तिल की फसल के प्रमुख रोग–

1. **पौध अंगमारी (*फाइटोफ्थोरा पैरासिटिका पेव. सिसेमी*):** तुरंत उगी हुई पौध में प्रारंभिक अवस्था को बीजपत्रों पर जलसिक्त चकत्ते दिखाई देते हैं तथा शीघ्र ही सिरा प्रभावित हो जाती है। पौधों में ऊपर से नीचे की ओर सड़न (डाइबैक) तेजी से विकसित होने लगती है एवं कुछ ही घंटों में पौध अंगमारी हो जाती है। बड़े पौधों में डाइबैक लक्षण कहीं–कहीं दिखाई देते हैं जबकि बड़े धब्बे अतिप्राय: पाये जाते हैं।
2. **जीवाणु अंगमारी (*जैन्थोमोनास केम्पेस्ट्रीस पेव. सिसेमी*):** जल सिक्त, छोटे तथा अनियमित धब्बे पत्तियों के ऊपर बनते हैं जो बाद में संख्या में काफी बढ़ जाते हैं एवं अनुकूल वातावरण मिलने पर भूरे रंग के हो जाते हैं जिससे अंगमारी हो जाती है। अत्यधिक प्रभावित पत्तियां गिर जाती हैं बाद में ये धब्बे पतली शाखाओं पर बनते हैं जिस पर कमजोर फलियां बनती है।
3. **जीवाणु पर्ण धब्बा (*स्यूडोमोनास सिरिंजी पेव. सिसेमी*):** पत्तियों के ऊपर भूरे धब्बे दिखाई देते हैं जो कि आकार में कोणीय

होते हैं। इन धब्बों की किनार काले रंग की होती है। अनुकूल वातावरण में ये सम्मिलित हो जाते हैं अंतत: पत्तियां झड़ जाती है।

4. **चूर्णी फफूंद/भभूतिया रोग (*लेबाल्यूला राडरिका*):** पत्तियों पर सफेद चकत्ते दिखाई देते हैं। अत्यधिक प्रभावित पत्तियां गिर जाती हैं। इस तरह पौधा परिपक्वता से पूर्व पर्णरहित हो जाता है।

5. **सरकोस्पोरा पर्ण धब्बा (*सर्कोस्पोरा सिसेमी*):** कोणीय छोटे भूरे एवं अनियमित धब्बे पत्तियों के ऊपर बनते है जिनमें बीच का भाग धूसर तथा किनारे वाला भाग गहरे रंग का होता है। आकार एवं संख्या में बढ़ जाते हैं तथा बाद में पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं जिससे पत्तियां समय से पहले झड़ जाती हैं। तने पर पतले गहरे रंग के तथा फलियों पर गहरे गड्ढेदार धब्बे पाये जाते हैं।

6. **ऑल्टरनेरिया पर्ण धब्बा (*ऑल्टरनेरिया सिसेमी*):** छोटे भूरे धब्बे जिसमें गोल–मोल छल्ले पत्तियों पर बन जाते हैं। बाद में ये आकार व संख्या में बढ़ने से पत्तियों के गिरने की वजह बन जाते हैं।

7. **जड़ व तना सड़न (*मेक्रोफोमिना फासिओलिना*):** जब पौधा मृदा सतह के पास प्रभावित हो जाता है तो त्वरित उकसापन दिखाई देता है। यह ऊपर से नीचे की ओर शुरू होता है। सड़ा हुआ भाग काला पड़ जाता है और कोयले की तरह दिखाई देता है बाद में पौधा प्रभावित भाग से झुक जाता है और परिपक्वता से पहले मर जाता है।

8. **पर्णताभ/पराभिस्तंभ/फाइलोडी– (*माइकोप्लाज्मा*):** यह माइकोप्लाज्मा नामक सूक्ष्मजीव से होता है जो कि जैसिड (हरा मच्छर) द्वारा फैलता है। सभी पुष्पीय भाग हरी पत्तियों नुमा संरचना में बदल जाते हैं। प्रभावित पौधे में गुच्छों में छोटी पत्तियां बनती हैं। अत्यधिक शाखाएं दिखाई देती हैं एवं इंटरनोड छोटे हो जाते हैं। ऐसे पौधों में सामान्यतया फलियां नहीं लगती हैं परन्तु यदि फलियां बन जाती हैं तो उनमें बीज निर्माण नहीं होता।

फाइलोडी रोग

9. **चुर्डा–मुर्डा (निकोटियाना–10 विषाणु):** यह विषाणुजनित रोग है जिसे सफेद मक्खी फैलाती है। प्रभावित पौधे की पत्तियां सिकुड़ जाती है एवं छोटी हो जाती है। फूल व फलियां कम लगती है। ये मुख्य रूप से शुष्क मौसम में प्रभावी होता है।

10. **कॉरीनेस्पोरा अंगमागी (*कोरिनेस्पोरा कासिकोला*):** पत्तियों पर धब्बे दिखाई देते हैं तथा शाखायें एवं तने टेड़े–मेड़े हो जाते हैं। पौध अंगमारी के प्रकोप का कम करने हतु तिल की बोबाई जुलाई के प्रथम सप्ताह में करनी चाहिए। मेक्रोफोमिना तना एवं जड़ सड़न रोग के लिए लित किस्में टी.के.जी–21, टी.के.जी.–22, टी.के.जी–55 एवं जे.टी.एस.–8 प्रतिरोधी/ सहनशील हैं इन्हें प्राथमिकता के तौर पर बोया जा सकता है।

समेकित रोग प्रबंधन–

1. तिल के प्रमुख रोगों के नियंत्रण हेतु ट्राइकोडर्मा विरीडी (0.4 प्रतिशत) + स्यूडोमोनास फ्लूरिसेन्स (0.4 प्रतिशत) से बीजोपचार + ट्राइकोडर्मा विरिडी (2.5 किग्रा/हे.) + स्यूडोमोनास फ्लूरिसेन्स (2.5 किग्रा/हे.) से मृदा उपचार + ट्राइडेमार्क (0.1 प्रतिशत) से पर्ण छिड़काव की अनुशंसा की गई है।
2. खरीफ में तिल की जुताई के प्रथम सप्ताह में शीघ्र बोनी एवं शीघ्र पकने वाली जातियों जैसे टी.के.जी. 306, टी.के.जी. 308 आदि के प्रयोग से रोग व्याधियों से होने वाले नुकसान में कमी आती है।
3. मानसून के शुरूआत के बाद शीघ्र बोनी करके सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा तथा आल्टर्नेरिया का प्रबंधन किया जा सकता है हांलाकि, मानसून शुरू होने से 3 सप्ताह बाद की बोनी से फायलोडी का प्रबंधन अच्छे से किया जा सकता है।
4. नीम की खली 250 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर आखिरी जुताई के साथ खेत में मिला देना चाहिए। जो पौधे जड़ सड़न, तना सड़न एवं फाइलोडी से ग्रसित होते हैं उन्हें उचित समय पर उखाड़कर नष्ट करने से इन रोगों की तीव्रता में कमी आती है।
5. तिल के खेतों से एकेन्थस्पेरूमम हिपसिडम नाम नींदे को नष्ट कर देने से जीवाणु अंगमारी के प्रकोप में कमी आती है।

स्वदेशी तकनीकी ज्ञानः सतत कृषि पद्धतियों का खजाना

सुभाष कुमार सौरभ एवं अमनदीप रंजन
भाकृअनुप– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली

परिचय

स्वदेशी तकनीकी ज्ञान (आईटीके) संचित स्थानीय ज्ञान है जो किसी विशेष संस्कृति या सभ्यता के लिए विशिष्ट है और पीढ़ियों से चला आ रहा है। यह वह ज्ञान है जो उनके पूर्वजों से चला आ रहा है। वैज्ञानिक और पारंपरिक ज्ञान के संयोजन से उन प्रौद्योगिकियों के विकास में सहायता मिलेगी जो अधिक आवश्यकता–आधारित हैं, समस्याओं को अधिक प्रभावी ढंग से हल करने में सक्षम हैं, स्थानीय रूप से आसानी से उपलब्ध हैं, सस्ती, आकर्षक और ग्रामीण ग्राहकों के लिए विश्वसनीय हैं। वनों की कटाई, अत्यधिक चराई, मरुस्थलीकरण, अत्यधिक कृषि गहनता, अत्यधिक मछली पकड़ने और सीमांत भूमि पर खेती के कारण प्राकृतिक संसाधन आधार की कमी के कारण कृषि उत्पादन क्षमता में कमी और कृषि की धारण क्षमता में कमी आती है। इस संसाधन आधार की कमी को रोकने और हमारे पारिस्थितिकी तंत्र का समर्थन करने वाली कृषि उत्पादन प्रणाली बनाने के लिए बेहतर प्रबंधन की आवश्यकता है। प्राकृतिक संसाधनों (मिट्टी, पानी और पोषक तत्व) की सीमाएँ होती हैं। इसलिए, भूमि और पानी के उपयोग से संबंधित सभी तकनीकी प्रगति का मुख्य ध्यान स्थायी कृषि पर होना चाहिए, जिसमें हमारे कृषि प्रणालियों को बनाए रखना शामिल है, ताकि संसाधन आधार की जैविक उत्पादकता पर दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव न पड़े। इस परिदृश्य में टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देने के लिए स्वदेशी तकनीकी ज्ञान का महत्व गहरा हो जाता है।

स्वदेशी ज्ञान एक विशिष्ट समुदाय के भीतर निर्मित होता है और अनौपचारिक माध्यमों से साझा किया जाता है। इस प्रकार की जानकारी सामूहिक रूप से स्वामित्व में होती है, कई पीढ़ियों से बनाई जाती है, अनुकूलनीय होती है, और समुदाय की अस्तित्व रणनीति में अंतर्निहित होती है। स्वदेशी तकनीकी ज्ञान ने स्वदेशी ज्ञान के बड़े समूह में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह जानकारी कई जमीनी स्तर के आविष्कारों के लिए आवश्यक है। इस प्रकार के ज्ञान से मुर्गी पालन सहित कई महत्वपूर्ण ग्रामीण व्यवसायों में सुधार हुआ है। स्वदेशी तकनीकी ज्ञान का ऐतिहासिक संदर्भ पारिस्थितिक सिद्धांतों और टिकाऊ प्रथाओं की गहरी समझ पर प्रकाश डालता है। सदियों से परिष्कृत किया गया यह ज्ञान, अमूल्य अंतर्दृष्टि और तरीके प्रदान करता है जो समकालीन टिकाऊ कृषि प्रयासों में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

कृषि में आईटीके के उपयोग पर शोध से पता चला कि उनमें से अधिकांश का उपयोग विकासशील देशों के छोटे और सीमांत किसान करते हैं, मुख्य रूप से जटिल, विविध और जोखिम भरे वातावरण में। वैज्ञानिक कृषि की तकनीकी पीढ़ी में सबसे हालिया पद्धति में इन आईटीके को अनुसंधान प्रक्रिया में एकीकृत करना और पूर्ण और कुशल स्थान–विशिष्ट कृषि समाधान प्रदान करने के लिए उनकी वैज्ञानिक वैधता का मूल्यांकन करना शामिल है। दुनिया की सांस्कृतिक और जैविक विविधता को बढ़ाने और सतत विकास को बढ़ावा देने में स्वदेशी लोगों की भूमिका की व्यापक स्वीकृति के बावजूद, पारंपरिक ज्ञान और प्रौद्योगिकियों के संबंध में कई बाधाएं बनी हुई हैं।

आधुनिक कृषि में स्वदेशी तकनीकी ज्ञान का महत्व

स्वदेशी तकनीकी ज्ञान (आईटीके) आधुनिक कृषि में एक अमूल्य संसाधन है, जो सदियों से विकसित टिकाऊ और संदर्भ–विशिष्ट प्रथाओं की पेशकश करता है। आईटीके को समकालीन कृषि विधियों के साथ एकीकृत करना कई चुनौतियों का समाधान कर सकता है, स्थिरता को बढ़ा सकता है, और प्रतिरोधक क्षमता में सुधार कर सकता है। स्वदेशी ज्ञान प्रणालियाँ जैव विविधता और मिट्टी के स्वास्थ्य को संरक्षित करने में गहराई से निहित स्थायी कृषि प्रथाएँ प्रदान करती हैं। फसल चक्रण और कृषि वानिकी जैसी तकनीकें पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता को बढ़ाती हैं, जो मिट्टी की कमी की ओर अग्रसर आधुनिक एकल फसल विधियों के विपरीत है। आमतौर पर, आईटीके विशिष्ट स्थानों के अनुरूप बनाए जाते हैं, स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्रियों का उपयोग करते हैं, और अनौपचारिक शोध का परिणाम होते हैं।

इसके अलावा, उन्हें मिट्टी की उर्वरता की रखरखाव के लिए जैविक उर्वरक और टेरेसिंग जैसी संरक्षण तकनीकों के माध्यम से मिट्टी की उर्वरता को जोर दिया जाता है, जो दीर्घकालिक उत्पादकता को सुनिश्चित करता है। कीट और रोग प्रबंधन में, स्वदेशी प्रथाएं कृत्रिम कीटनाशकों पर जैविक नियंत्रण, पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने और स्थानीय कीटों के लिए अनुकूलित रणनीतियों को प्राथमिकता देती हैं। ये प्रणालियाँ सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देती हैं, ज्ञान साझा करने और सामाजिक एकजुटता को बढ़ाती हैं, जो प्रतिरोधक कृषि प्रणालियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त, ये छोटे किसानों के लिए सुलभ लागत प्रभावी समाधान प्रदान करते हैं, जो स्थायी रूप से उत्पादित खाद्य के बढ़ते बाजार में रुचि लेते हैं, स्थानीय प्रथाओं के साथ मेल खाते हैं और सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करते हैं।

सतत कृषि में स्वदेशी तकनीकी ज्ञान का उपयोग

1. **जल प्रबंधनः** जल संचयन तकनीकों का उपयोग भारतीय किसानों द्वारा कई वर्षों से व्यापक रूप से किया जाता रहा है। इन तकनीकों में खेत तालाब, चेक डैम, वर्षा जल एकत्र करने के लिए गड्ढों में खोदे गए उथले कुएं, ईंटों से बने टैंक, पहाड़ी नदियों (पाइन्स) के माध्यम से बनाए गए चैनल, टैंक झरने, बंधारा, खड़ीन, नाला चेक, पाट प्रणाली, फड़ प्रणाली, चौका प्रणाली शामिल हैं। लोग अभी भी पीने के पानी के लिए सिंधु घाटी सभ्यता की प्राचीन, सुव्यवस्थित जल आपूर्ति प्रणालियों, दूसरी शताब्दी ईस्वी में चोल शासकों द्वारा निर्मित ग्रैंड एनीकट प्रणाली और मध्य युग के दौरान दक्कन में बनाए गए विशाल टैंकों पर निर्भर हैं (सो एवं रंजन, 2021)।
2. **मृदा संरक्षणः** परंपरागत रूप से किसानों ने मिट्टी की संरक्षा को बढ़ाने के तरीकों का अभ्यास किया है। धार पर लंबाई के अनुसार

बेंच टेरेसेस का निर्माण किया जाता है। ढलानदार भूमि की खेती को छोटे पत्थरों का उपयोग करके प्लॉट और सब–प्लॉटों से बने टेरेसेस के रूप में किया जाता है। अपवाह को धीमा करने, पानी की कटाव शक्ति को कमजोर करने और हेज पंक्तियों के पीछे मूल्यवान मिट्टी के भार को जमा करने के लिए भूमि के समोच्च के साथ रेशेदार जड़ वाली झाड़ियों और घास को बाड़ के रूप में लगाया गया था। कठोर मिट्टी को नरम करने के लिए राख का प्रयोग भी किया जाता है।

3. **गाय-भैंसों का उपचारः** अपने पशुओं के कई रोगों का उपचार करने के लिए डेयरी किसानों द्वारा कई पारंपरिक प्रणालियाँ उपयोग में लाई जा रही है।

क) गाय और भैंसों में एंडो–परजीवियों के उपचार के लिए, किसान अपने डेयरी पशुओं को भट खरपतवार (*क्लेरोडेंड्रम विस्कोसम*) और बांस की पत्तियां खिलाते हैं।

ख) गेंदे के पौधे (*टैगेट्स इरेक्टा*) की पत्तियों को कुचलकर जानवर के शरीर के घायल हिस्से के इलाज के लिए लगाया जाता है।

ग) दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए गुड़, मसूर दाल (*लेंस क्यूलिनारिस*), मंगरैल (*निगेला सैटिवा*), अजवाइन (*ट्रैकिस्पर्मम अम्मी*), और सुआ की पत्तियां (*एनेथम ग्रेवोलेंस*) को पीसकर डेयरी पशुओं को खिलाया जाता है।

घ) डेयरी पशुओं में थनैला रोग के इलाज करने के लिए, हल्दी (*करकुमा लोंगा*) को पीसकर पशुओं के थनों पर लगाया जाता था।

ङ) बछड़ों में दस्त का इलाज करने के लिए, बांस के पत्तों (*बम्बुसा टुल्डा*) पर सरसों का तेल लगाया जाता है और बछड़ों को खिलाया जाता है (सौरभ एवं अन्य, 2023)।

4. **कीट एवं रोग प्रबंधनः** गेंदे की खेती और उसके बाद सोलेनैसियस सब्जियों की खेती से जीवाणु संक्रमण को नियंत्रित करना कारगर है। धान के ब्राउन स्पॉट रोग को नियंत्रित करने के लिए, खैर के पत्तों (*एकेसिया कैटिषू*) को जल सीमा में रखा जाता है। डैम्पिंग ऑफ और डाईबैक जैसी फंगल बीमारी के इलाज के लिए, किसान मिर्च के पौधे के कॉलर क्षेत्र में ताजा गाय के गोबर का छिड़काव करते हैं (साहू और सतपति, 2021)।

स्वदेशी तकनीकी ज्ञान के उपयोग से संबंधित चुनौतियाँ

1. **ज्ञान दस्तावेज़ीकरण और संरक्षणः** स्वदेशी ज्ञान अक्सर मौखिक रूप से पारित किया जाता है और इसके नष्ट होने का खतरा हो सकता है। आधुनिक प्रथाओं में इसके एकीकरण के लिए इस ज्ञान का दस्तावेजीकरण और संरक्षण करने का प्रयास आवश्यक है।
2. **बौद्धिक संपदा अधिकारः** स्वदेशी समुदायों के बौद्धिक संपदा अधिकारों का सम्मान करना और यह सुनिश्चित करना कि वे अपने ज्ञान के उपयोग से लाभान्वित हों, महत्वपूर्ण है।
3. **सांस्कृतिक संवेदनशीलताः** विश्वास और सहयोग के निर्माण के लिए पारंपरिक प्रथाओं के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्व को पहचानना और उनका सम्मान करना महत्वपूर्ण है।
4. **अनुसंधान और मान्यताः** स्वदेशी प्रथाओं की वैज्ञानिक मान्यता उन्हें आधुनिक कृषि में एकीकृत करने में मदद कर सकती है, लेकिन इसके लिए स्वदेशी समुदायों के साथ सावधानीपूर्वक और सम्मानजनक सहयोग की आवश्यकता होती है।
5. **नीति समर्थनः** सरकारों और संस्थानों को उन नीतियों का समर्थन करने की आवश्यकता है जो कृषि अनुसंधान, शिक्षा और विस्तार सेवाओं में स्वदेशी ज्ञान के एकीकरण को बढ़ावा देती हैं।

स्वदेशी तकनीकी ज्ञान की भविष्य की संभावनाएँ

आधुनिक कृषि विज्ञान के साथ स्वदेशी तकनीकी ज्ञान के संयोजन से नवोन्मेषी मिश्रित दृष्टिकोण सामने आ सकते हैं जो दोनों प्रणालियों की ताकत को अधिकतम करते हैं। वैज्ञानिकों और स्वदेशी समुदायों के बीच सहयोग से ज्ञान का सह–निर्माण हो सकता है, जहां पारंपरिक प्रथाओं को वैज्ञानिक रूप से मान्य किया जाता है और उनमें सुधार किया जाता है। इससे कृषि अनुसंधान एवं विकास के नये रास्ते खुल सकते हैं। आधुनिक कृषि में स्वदेशी तकनीकी ज्ञान (आईटीके) को एकीकृत करने की भविष्य की संभावनाएं आशाजनक हैं, जो स्थायिता, प्रतिरोधक्षमता और सांस्कृतिक संरक्षण के अवसर प्रदान करती हैं। आईटीके को शामिल करके, आधुनिक कृषि प्रणालियाँ अधिक पर्यावरण–अनुकूल, जलवायु परिवर्तन के लिए प्रतिरोधी हो सकती हैं, और स्थानीय स्थितियों के अनुकूल बन सकती हैं, जिससे खाद्य सुरक्षा और जैव विविधता संरक्षण में वृद्धि होगी। इसके अलावा, स्वदेशी ज्ञान को एकीकृत करने से सामुदायिक सशक्तिकरण, समावेशिता और आपसी सीख को बढ़ावा मिलता है, जिससे अधिक न्यायसंगत और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील कृषि विकास को बढ़ावा मिलता है। आईटीके के मूल्य को पहचानने से उन नीतियों और शासन ढांचे को सूचित किया जा सकता है जो टिकाऊ और समावेशी कृषि प्रथाओं का समर्थन करते हैं, और अधिक विविध, लचीले और सांस्कृतिक रूप से समृद्ध कृषि परिदृश्य में योगदान करते हैं। दुनिया भर के कृषि वैज्ञानिक अब आम तौर पर सहमत हैं कि पारंपरिक तकनीकी ज्ञान का पुनर्मूल्यांकन नई कृषि प्रौद्योगिकियों को लागू करने का एक अनिवार्य घटक है। यह माना जाता है कि किसी भी नई तकनीक के निर्माण और वितरण से पहले किसानों की विशेषज्ञता पर विचार किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष –

स्वदेशी तकनीकी ज्ञान टिकाऊ कृषि पद्धतियों के खजाने का प्रतिनिधित्व करता है जिन्हें सदियों से परिष्कृत किया गया है। ये प्रथाएं जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता हानि और खाद्य असुरक्षा जैसी समकालीन चुनौतियों का सामना करने के लिए अधिक प्रतिरोधी और टिकाऊ खाद्य प्रणाली विकसित करने के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं। स्वदेशी ज्ञान को पहचानने, सम्मान देने और आधुनिक कृषि पद्धतियों में एकीकृत करके, हम सभी के लिए अधिक टिकाऊ और न्यायसंगत भविष्य का निर्माण कर सकते हैं। आगे के मार्ग के लिए सहयोगात्मक प्रयासों, सहभागी दृष्टिकोण और सहायक नीतियों की आवश्यकता है जो स्वदेशी समुदायों को सशक्त बनाती हैं और टिकाऊ कृषि में उनके अमूल्य योगदान का सम्मान करती हैं। विस्तार प्रयासों या जागरूकता पहलों के माध्यम से इन अच्छी तरह से स्थापित आईटीके को बढ़ावा देने से अन्य किसानों को उनके लाभ प्राप्त करने में सहायता मिल सकती है। इसलिए, यह जरूरी है कि नवाचारों के एक राष्ट्रीय रजिस्टर के निर्माण का समर्थन करने, पेटेंट आवेदन जमा करने और स्वदेशी ज्ञान पर आधारित व्यवसायों के लिए सूक्ष्म उद्यम पूंजी सहायता प्रदान करने के लिए एक राष्ट्रीय फाउंडेशन की स्थापना की जाए। स्वदेशी ज्ञान रखने वाले नवप्रवर्तकों और समुदायों को मान्यता देने या सम्मानित करने जैसे गैर–भौतिक प्रोत्साहनों पर भी विचार किया जाना चाहिए।

संरक्षण कृषि के माध्यम से मृदा स्वास्थ्य का प्रबंधन

के. के. मौर्य[1], संदीपकुमार[1], रवि कुमार[1], सुरभि होता[2], अरिजीत बर्मन[1] एवं आर.एस. मीणा[1]
[1]भाकृअनुप- राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, क्षेत्रीय केंद्र, जोरहाट (असम)
[2]भाकृअनुप- खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

सार

हरित क्रांति ने भारत को खाद्यान्न उत्पादन के क्षेत्र में उन्नति दिलाई है, जिससे देश आज एक प्रमुख खाद्यान्न निर्यातक देश बन गया है। यहां तक कि 1967–1968 में खाद्यान्न उत्पादन 95 मिलियन टन था, जो 2021–2022 में बढ़कर 316 मिलियन टन हो गया। इसमें उर्वरकों, सिंचाई, उपज देने वाली किस्मों के प्रयोग का महत्वपूर्ण योगदान है, लेकिन रसायनों का अत्यधिक उपयोग मिट्टी के स्वास्थ्य को प्रभावित करता है। इसलिए, सामर्थ्यशाली खेती प्रथाओं की आवश्यकता है, जैसे कि संरक्षण कृषि (सी ए), जो स्वास्थ्यवर्धक मृदा खेती प्रणाली को प्रोत्साहित करती है और प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा में मदद करती है। संरक्षण कृषि, कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र के प्रबंधन का एक दृष्टिकोण है, जिसका मुख्य उद्देश्य पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित रखते हुए बेहतर और स्थिर उत्पादकता, कृषि मुनाफे को बढ़ाना और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना है। इसमें न्यूनतम मिट्टी की जुताई, फसल अवशेषों का प्रबंधन और फसल चक्रण जैसी तकनीकों का उपयोग शामिल है। ये विधियां मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने, जल संरक्षण और जैव विविधता को बढ़ावा देने में मदद करती हैं, जिससे कृषि को अधिक टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल बनाया जा सकता है। इस लेख में हमने उच्च फसल उपज, किसानों की समृद्धि और प्राकृतिक संसाधनों की बचत के लिए मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ावा देने में संरक्षण कृषि की आवश्यक भूमिका के बारे में आवश्यक जानकारी संकलित की है।

परिचय

भारत में हरित क्रांति ने देश को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बना दिया है और आज भारत एक प्रमुख खाद्यान्न निर्यातक देश बन गया है। हरित क्रांति के बाद से भारत में खाद्यान्न उत्पादन तीन गुना से अधिक बढ़ गया है, जबकि शुद्ध खेती योग्य क्षेत्र में लगभग कोई वृद्धि नहीं हुई है। 1967–1968 में खाद्यान्न उत्पादन 95 मिलियन टन था, जो 2021–2022 में बढ़कर 316 मिलियन टन हो गया। इस अद्भुत उपलब्धि का श्रेय मुख्य रूप से उर्वरकों, अधिक उपज देने वाली किस्मों, लसचित क्षेत्र में वृद्धि, कीटनाशकों और कृषि मशीनरी के बढ़ते उपयोग को जाता है।हालांकि, इन पद्धतियों से उपज में वृद्धि हुई है, लेकिन साथ ही रसायनों और उर्वरकों के असंतुलित उपयोग ने मिट्टी की उर्वरता, जैव विविधता और भूमि की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। इसलिए अब ऐसी कृषि पद्धतियों की आवश्यकता है जो पर्यावरण, मनुष्यों और अन्य जीवित प्राणियों के लिए सुरक्षित हों और साथ ही प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के साथ कृषि उत्पादन को बढ़ाने में मदद करें। इस संदर्भ में, संरक्षण कृषि द्धसीएत्र एक महत्वपूर्ण समाधान के रूप में उभरकर सामने आती है। संरक्षण कृषि के माध्यम से मृदा स्वास्थ्य का प्रबंधन टिकाऊ कृषि पद्धतियों और दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा के लिए आवश्यक है। संरक्षण कृषि में मिट्टी, पानी और जैव विविधता जैसे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, सुधार और कुशलतापूर्वक उपयोग करने के उद्देश्य से सिद्धांतों और प्रथाओं का एक समूह शामिल है। मृदा स्वास्थ्य में गिरावट वैश्विक खाद्य उत्पादन और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए एक महत्वपूर्ण खतरा पैदा करती है। गहन जुताई, मोनोक्रॉपिंग और कृषि रसायनों के अत्यधिक उपयोग की विशेषता वाली पारंपरिक कृषि पद्धतियों के कारण मिट्टी का क्षरण, कार्बनिक पदार्थों की हानि, उर्वरता में कमी और मिट्टी की संरचना में गिरावट आई है। ये प्रथाएं स्वस्थ पौधों के विकास और पारिस्थितिकी तंत्र के कामकाज में सहायता करने के लिए मिट्टी की क्षमता से समझौता करती हैं। संरक्षण कृषि इन चुनौतियों से निपटने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती है। मिट्टी की यांत्रिक जुताई को कम करके, जैसे कम जुताई या बिना जुताई की प्रथाओं का उपयोग, संरक्षण कृषि मिट्टी की संरचना और स्थिरता को संरक्षित करती है। फसल के अवशेषों को मिट्टी की सतह पर बनाए रखना प्राकृतिक गीली घास के रूप में कार्य करता है, वाष्पीकरण को कम करता है, कटाव को रोकता है, और अवशेषों के विघटित होने पर मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों को समृद्ध करता है। फसल चक्र में विविधता लाने और कवर फसलों को एकीकृत करने से पोषक चक्र, मिट्टी की जैव विविधता और कीटों और बीमारियों के प्रति लचीलापन बढ़ता है। संरक्षण कृषि के माध्यम से मृदा स्वास्थ्य का प्रभावी प्रबंधन पर्यावरणीय जोखिमों को कम करते हुए स्थायी कृषि उत्पादकता को बढ़ावा देता है। यह मिट्टी की उर्वरता को बढ़ावा देता है, जल अंत:स्यंदन में सुधार करता है, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करता है, और जलवायु परिवर्तन के प्रति कृषि पारिस्थितिकी तंत्र की समग्र लचीलापन को बढ़ाता है। मृदा स्वास्थ्य की सुरक्षा, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों की भलाई को बनाए रखने के लिए संरक्षण कृषि सिद्धांतों को अपनाना आवश्यक है।

संरक्षण कृषि के सिद्धांत

1. यांत्रिक जुताई के माध्यम से न्यूनतम मृदा जुताई

पारंपरिक कृषि आम तौर पर मिट्टी की जुताई पर आधारित होती है। अतीत में, मिट्टी की जुताई को उर्वरता में वृद्धि से जोड़ा गया है, जो मिट्टी की जुताई के परिणामस्वरूप मिट्टी के पोषक तत्वों के खनिजकरण से उत्पन्न हुई है। इस प्रक्रिया से दीर्घावधि में मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की कमी हो जाती है। मृदा कार्बनिक पदार्थ न केवल फसल के लिए पोषक तत्व प्रदान करता है, बल्कि यह, सबसे बढ़कर, मिट्टी की संरचना के स्थिरीकरण के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व भी है। मिट्टी की जुताई का मशीनीकरण, अधिक गहराई तक जुताई और विशेषकर डिस्क हैरो और रोटरी कल्टीवेटर जैसे कुछ उपकरणों के उपयोग से मिट्टी की संरचना पर विशेष रूप से हानिकारक प्रभाव पड़ता है। इन उपकरणों के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी की संरचना को नुकसान पहुंचता है, जिससे उसकी उर्वरता

और जलधारण क्षमता में कमी आती है। इस प्रकार की जुताई से मिट्टी का क्षरण होता है, जो कृषि उत्पादन के दीर्घकालिक स्थायित्व को खतरे में डाल सकता है। इसलिए, मृदा संरक्षण और स्थायी कृषि प्रथाओं की दिशा में ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है, जो मिट्टी की उर्वरता और संरचना को बनाए रखने में मदद कर सकें।

1. सीधी बुआई या रोपण: सीधी बुआई शब्द को संरक्षण कृषि प्रणालियों में बिना जुताई वाली खेती, शून्य जुताई, बिना जुताई, सीधी ड्रिल्लग आदि के पर्याय के रूप में समझा जाता है। रोपण का तात्पर्य बड़े बीजों को सटीक रूप से रखने से है, जबकि बीजाई आमतौर पर बीज के निरंतर प्रवाह को संदर्भित करती है, जैसे छोटे अनाज (जैसे गेहूं और जौ) के मामले में। इस प्रक्रिया में उपकरण मिट्टी के आवरण में प्रवेश करता है, एक बीजारोपण स्लॉट खोलता है और बीज को उस स्लॉट में रखता है। बीज स्लश्वट का आकार और मिट्टी की संबंधित गतिविधि को यथासंभव न्यूनतम रखा जाता है। आदर्श रूप से बीज बोने के बाद बीज स्लॉट को पूरी तरह से फसल अवशेष से ढक दिया जाना चाहिए और सतह पर कोई ढीली मिट्टी दिखाई नहीं देनी चाहिए। बिना जुताई के तहत बीज बोने या रोपण के लिए भूमि की तैयारी में खरपतवार और पिछली फसल के अवशेषों को काटना या रोल करना शामिल है या खरपतवार नियंत्रण के लिए शाकनाशी का छिड़काव करना, और सीधे फसल अवशेषों के आच्छादन से बीज बोना। संपूर्ण मिट्टी के आवरण की गारंटी के लिए फसल अवशेषों को या तो पूरी तरह से या उचित मात्रा में बरकरार रखा जाता है, और उर्वरक और संशोधनों को या तो मिट्टी की सतह पर प्रसारित किया जाता है या बीज बोने के दौरान दिया जाता है। इस पद्धति से मिट्टी की संरचना को न्यूनतम क्षति पहुंचती है, जिससे उसकी उर्वरता और जलधारण क्षमता बनी रहती है। साथ ही, फसल अवशेषों की परत मिट्टी को ढककर रखती है, जिससे नमी बनी रहती है और खरपतवार नियंत्रण में भी मदद मिलती है। इस प्रकार की कृषि प्रणाली न केवल पर्यावरण के लिए अनुकूल है, बल्कि दीर्घकालिक कृषि स्थिरता को भी सुनिश्चित करती है।

चित्र 1 : सीधी बुआई

2. **नो-टिल ड्रिल:** ये मशीनें फसल के अवशेषों से ढकी बिना जुताई वाली मिट्टी में सटीक बीज डालने की अनुमति देती हैं। बिना जुताई की खेती मिट्टी की अशांति को कम करती है और मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ावा देती है।
3. **लेजर लैंड लेवलर्स:** ये उपकरण भूमि की सतह को समतल करने में मदद करते हैं, जिससे समान जल वितरण और कुशल फसल विकास सुनिश्चित होता है। एलएलएल में लेजर से सुसज्जित ड्रैग बकेट का उपयोग करके उच्च परिशुद्धता (2 सेमी) के साथ भूमि की सतह को समतल करना शामिल है। लक्ष्य 0 से 0.2% की निरंतर ढलान बनाकर क्षेत्र में परिवर्तन करके एकरूपता प्राप्त करना है।
4. **टर्बो हैप्पी/ हैप्पी सीडर:** फसल अवशेषों में सीधे बीज बोने के लिए डिज़ाइन किया गया, टर्बो हैप्पी सीडर श्रम को कम करता है और अवशेष प्रबंधन को बढ़ावा देता है।
5. **मल्टी-क्रॉप प्लांटर्स:** ये मशीनें कई फसलों के सटीक रोपण को सक्षम बनाती हैं, जिससे उत्पादकता और संसाधन दक्षता बढ़ती है।
6. **रिले सीडर्स:** अंतरफसल के लिए उपयोग किया जाता है, रिले सीडर्स एक ही खेत में विभिन्न फसलों की एक साथ बुआई की सुविधा प्रदान करते हैं।

2. फसल क्षेत्र का न्यूनतम 30% भाग फसल अवशेषों से ढका होना चाहिए

मिट्टी को बारिश और सूरज के हानिकारक प्रभावों से बचाने के लिए एक स्थायी मिट्टी का आवरण महत्वपूर्ण है। यह मिट्टी में सूक्ष्म और स्थूल जीवों को निरंतर "भोजन" की आपूर्ति प्रदान करता है और पौधों की जड़ों सहित मिट्टी के जीवों की इष्टतम वृद्धि और विकास के लिए अनुकूल माइक्रॉक्लाइमेट बनाता है। इस आवरण से मिट्टी की नमी बनी रहती है, पोषक तत्व संरक्षित रहते हैं, और मिट्टी की संरचना में सुधार होता है, जिससे दीर्घकालिक कृषि स्थिरता सुनिश्चित होती है।

चित्र 2 : फसल अवशेष

3. दलहनी और कवर फसलों के साथ फसल विविधीकरण/फसल चक्र

भारत में फसल विविधीकरण का तात्पर्य एक ही फसल पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय एक खेत में विभिन्न प्रकार की फसलें उगाने की प्रथा से है। इसका उद्देश्य किसानों की आय बढ़ाना, जोखिम में कमी, खाद्य सुरक्षा में सुधार करना और टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देना।

चित्र 3: फसल विविधीकरण

विविधीकरण विकल्प

मक्का चावल की तुलना में कई फायदे प्रदान करता है और चावल–गेहूं प्रणाली में एक उत्कृष्ट विकल्प हो सकता है। शुष्क मौसम वाले चावल को अनाज, फलियां, तिलहन, चारा या कंद वाली फसलों से बदलें। गर्मियों के महीनों के दौरान जब सरसों, गेहूं या आलू की फसल के बाद खेत खाली रहते हैं तो कम अवधि वाली फलियों को समायोजित करें। चावल–बरसीम–लोबिया और चावल–आलू–हरा चना, चावल (सीधी बुआई) – आलू लोबिया, मक्का + लोबिया + सेसबानिया, मक्का + तोरिया, भारत–गंगा के मैदानी क्षेत्र में चावल–गेहूं प्रणाली में विविधता लाने के लिए उपयुक्त फसल क्रम हो सकता है।

मृदा स्वास्थ्य पर संरक्षण कृषि का प्रभाव : संरक्षण कृषि मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो स्थायी कृषि प्रथाओं और खाद्य सुरक्षा के लिए अनिवार्य है।

1. **मिट्टी की यंत्रीकृत जुताई को कम करना :** सीए के मूलभूत सिद्धांतों में से एक मिट्टी की यंत्रीकृत जुताई को कम करना है। पारंपरिक जुताई प्रथाएं मिट्टी की संरचना को बाधित कर सकती हैं, जिससे क्षरण, संघनन और कार्बनिक पदार्थों का नुकसान हो सकता है। जुताई को कम या समाप्त करके, सीए मिट्टी की संरचना और स्थिरता को बनाए रखने में मदद करता है। अक्षुण्ण मिट्टी की संरचना बेहतर जल अवशोषण, जड़ प्रवेश और पोषक तत्वों के वितरण की अनुमति देती है, जिससे मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ावा मिलता है।
2. **फसल अवशेषों का अवधारण :** सीए का एक अन्य प्रमुख पहलू मिट्टी की सतह पर फसल अवशेषों का प्रतिधारण है। फसल अवशेष प्राकृतिक गीली घास के रूप में कार्य करते हैं, जिससे मिट्टी के स्वास्थ्य को कई लाभ मिलते हैं। वे वाष्पीकरण को कम करके मिट्टी की नमी को संरक्षित करने में मदद करते हैं, बारिश की बूंदों के प्रभाव और हवा से मिट्टी की सतह की रक्षा करके कटाव को रोकते हैं, और विघटित होने पर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ का योगदान करते हैं। कार्बनिक पदार्थ मिट्टी की संरचना, उर्वरता और जैविक गतिविधियों में सुधार करते हैं, पौधों के विकास के लिए स्वस्थ मिट्टी के वातावरण को बढ़ावा देते हैं।
3. **फसल चक्र का विविधीकरण :** संरक्षण कृषि विविध फसल चक्र या अंतरफसल प्रणालियों को अपनाने को प्रोत्साहित करती है। विविधीकरण कीटों और बीमारियों के जोखिम को कम करके, पोषक तत्वों के चक्रण में सुधार करके और मिट्टी की जैव विविधता को बनाए रखकर मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाता है। विभिन्न फसलों की जड़ संरचना और पोषक तत्वों की आवश्यकताएं अलग–अलग होती हैं, जो मिट्टी के संघनन को तोड़ने, मिट्टी के कटाव को कम करने और समग्र मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाने में मदद करती हैं।
4. **आच्छादित फसलों को बढ़ावा :** आच्छादित फसलें मुख्य रूप से कटाई के बजाय मिट्टी को ढकने के लिए उगाई जाती हैं। वे मिट्टी को कटाव से बचाकर, खरपतवार की वृद्धि को रोककर और मिट्टी की संरचना में सुधार करके संरक्षण कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आच्छादित फसलें शामिल होने पर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ भी योगदान करती हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता और जैविक गतिविधि बढ़ती है। इसके अतिरिक्त, कुछ कवर फसलें वातावरण से नाइट्रोजन को ठीक कर सकती हैं, रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक की आवश्यकता को कम कर सकती हैं और स्थायी पोषक तत्व प्रबंधन को बढ़ावा दे सकती हैं।
5. **मृदा जीवों का संवर्धन :** संरक्षण कृषि लाभकारी मृदा जीवों जैसे केंचुए, बैक्टीरिया, कवक और अन्य सूक्ष्मजीवों के प्रसार को बढ़ावा देती है। ये मृदा बायोटा पोषक चक्र, मृदा एकत्रीकरण, कार्बनिक पदार्थों के अपघटन और रोग दमन में आवश्यक भूमिका निभाते हैं। मृदा जीवों के लिए अनुकूल वातावरण बनाकर, सीए मृदा स्वास्थ्य और उत्पादकता को बढ़ाता है।

जल प्रबंधन में सुधार:

प्रभावी जल प्रबंधन मिट्टी के स्वास्थ्य का अभिन्न अंग है। कम जुताई, मल्चिंग और कवर क्रॉपिंग जैसी संरक्षण कृषि पद्धतियाँ मिट्टी की नमी को संरक्षित करने, पानी के बहाव को कम करने और पानी के अंत:स्यंदन में सुधार करने में मदद करती हैं। इससे यह सुनिश्चित होता है कि पौधों को पर्याप्त पानी की आपूर्ति मिलती है, खासकर सूखे या अनियमित वर्षा के दौरान, जिससे मिट्टी का स्वास्थ्य और फसल उत्पादकता बनी रहती है।

निष्कर्ष:

संरक्षण कृषि उन प्रथाओं के माध्यम से मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने और बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान देती है जो मिट्टी की यंत्रीकृत जुताई को कम करती है, फसल अवशेषों को बनाए रखती है, फसल चक्र में विविधता लाती है, कवर फसलों को बढ़ावा देती है, मृदा जीवों को बढ़ाती है और जल प्रबंधन में सुधार करती है। संरक्षण कृषि सिद्धांतों और तकनीकों को अपनाकर, किसान बदलती जलवायु में टिकाऊ खाद्य उत्पादन सुनिश्चित करते हुए भावी पीढ़ियों के लिए मिट्टी की उर्वरता, उत्पादकता और लचीलेपन को संरक्षित कर सकते हैं।

नैनो-कीटनाशक: कृषि कीट प्रबंधन में एक अभिनव तकनीक

सुब्रत गोस्वामी एवं एम. रघुरामन
कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

वैश्विक

कृषि वैश्विक आबादी के 19 प्रतिशत से अधिक का आजीविका निर्वहन तथा रोजगार का स्रोत है। हालाँकि, वर्तमान में घटते संसाधन और विभिन्न अजैविक तथा जैविक तनाव के कारण कृषि उत्पादकता बाधित हो रही है। खरपतवार, कीड़े, रोगजनकों और नेमाटोड जैसे पीड़क लगभग 20–40 प्रतिशत पैदावार को नुकसान पहुंचाते हैं। दुनिया भर में केवल नाशजीबी कीटों के कारण 18–20 प्रतिशत कृषि उत्पादन का नुकसान होता है, और इन कीटों से फसल के नुकसान की सीमा बढ़ती जा रही है।

हानिकारक कीटों से होने वाले नुकसान को कम करने के लिए किसान सस्य क्रियाओं, पारम्परिक प्रथाओं, भौतिक बाधाओं, यांत्रिक तरीकों, जैविक नियंत्रण और रासायनिक हस्तक्षेप सहित विभिन्न प्रबंधन रणनीतियों को अपनाते हैं। परन्तु, फसल सुरक्षा के लिए उपयोग किए जाने वाले रासायनिक कीटनाशकों पर अत्यधिक निर्भरता का लाभदायी जीवों और पर्यावरण पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। मौजूदा कीट प्रबंधन विकल्पों की सीमाएं और संबंधित समस्याएं वैकल्पिक प्रौद्योगिकियों की मांग करती हैं। ऐसी स्थिति में नैनोटेक्नोलॉजी कृषि कीट प्रबंधन के लिए एक सबसे प्रभावी तरीकों के रूप में उभर रही है।

नैनोटेक्नोलॉजी: विज्ञान का एक उभरता हुआ क्षेत्र

नैनोटेक्नोलॉजी को अक्सर पिछली शताब्दी की पांचवीं क्रांतिकारी तकनीक माना जाता है। मूलतः 1 से 100 नैनोमीटर तक के आयाम वाली वस्तुओं के हेरफेर और नियंत्रण को नैनोटेक्नोलॉजी कहते हैं। नैनोस्केल सामग्रियों के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुण थोक सामग्रियों और व्यक्तिगत अणुओं से काफी भिन्न होते हैं। ये गुण बढ़े हुए सतह क्षेत्र, क्वांटम प्रभाव और आकार-निर्भर घटनाओं के कारण उत्पन्न होते हैं। वैज्ञानिक और शोधकर्ता इन विशिष्ट गुणों का उपयोग इलेक्ट्रॉनिक्स, ऊर्जा, चिकित्सा, पर्यावरण विज्ञान जैसे कई क्षेत्रों में नवीन समाधान विकसित करने के लिए करते रहे हैं। इस बहु आयामी तकनीक को विभिन्न क्षेत्रों में भरपूर उपयोग किया गया है, परन्तु कृषि में इसका अनुप्रयोग नवीनतम तकनीकी प्रगति है। पिछले दो दशकों में, इस क्षेत्र में संचित ज्ञान का कृषि कीट प्रबंधन के उद्देश्य से कीटनाशी रसायनों के विकास के लिए तेजी से उपयोग किया जा रहा है।

कीट प्रबंधन में नैनोटेक्नोलॉजी के अनुप्रयोग

कीट प्रबंधन के लिए नैनोमटेरियल आशाजनक अणु हैं। नैनो संरचित उत्प्रेरक कीटनाशकों का कम मात्रा में इस्तेमाल करने के बावजूद उनकी दक्षता को बढ़ा देते हैं। इनका उपयोग सक्रिय घटकों का धीमा तथा नियंत्रित रिसाव के लिए नैनो-कीटनाशक और नैनो-संपुटित (एन्कैप्सुलेटेड) फॉर्मूलेशन के माध्यम से किया जा सकता है। अनुवांशिक रूप से संशोधित (ट्रांसजेनिक) कीटरोधी फसलों के विकास लिए पौधों के ऊतकों में डीएनए और अन्य वांछित रसायन पहुंचाने के लिए भी नैनोटेक्नोलॉजी का उपयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, नैनोकण-मध्यस्थ जीन स्थानांतरण, ट्रांसजेनिक पौधों के विकास में एक सटीक उपकरण के रूप में कार्य करता है। नैनो सामग्री का उपयोग कीटों का पता लगाने में उपयोगी विभिन्न प्रकार के बायोसेंसर और सटीक खेती के लिए आवश्यक रिमोट सेंसिंग उपकरणों के निर्माण के लिए भी किया जाता है। यह भी बताया गया है कि कैल्शियम कार्बोनेट नैनोकण पौधों में कीटों के प्रति सहनशीलता को बढ़ाते हैं।

नैनो-कीटनाशक

नैनो-कीटनाशक कीट प्रबंधन के लिए प्रभावी उपकरण के रूप में उभरे हैं, जहां या तो सक्रिय घटक या वाहक अणु नैनोस्केल पर होते हैं। वे मुख्य रूप से परिमाण और सतह विशेषताओं के संदर्भ में पारंपरिक फॉर्मूलेशन से भिन्न होते हैं। नैनोकणों का अत्यंत सूक्ष्म आकार एक उपहार है। अपने छोटे आकार के कारण, नैनोकणों का सतह क्षेत्र बड़ा होता है और इसलिए अधिक कीटनाशक कीटों के संपर्क में आते हैं । इस प्रकार, बहुत कम मात्रा में फॉर्मूलेशन कुशलतापूर्वक कीटों का प्रबंधन कर सकता है तथा पर्यावरण में समग्र कीटनाशक भार को कम कर सकता है।

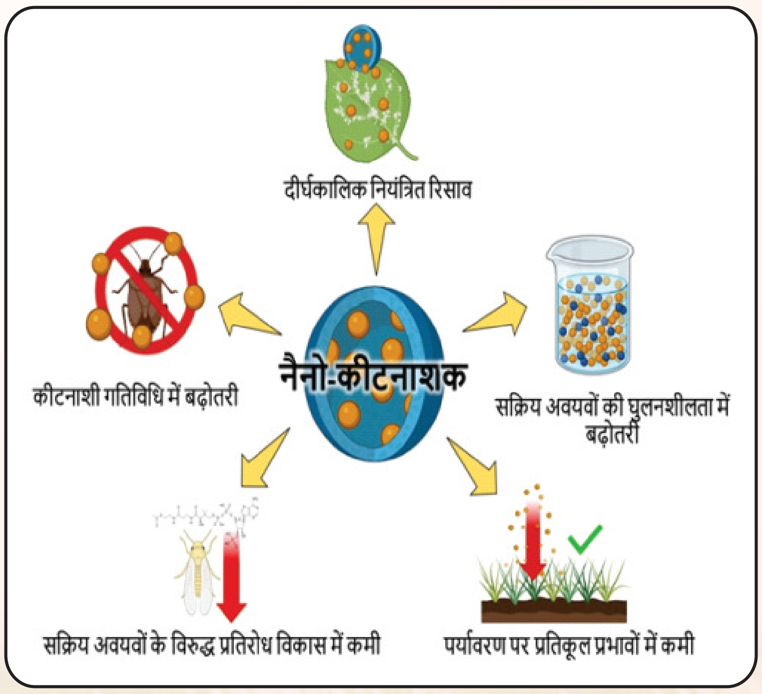

नैनो–फॉर्मूलेशन का मुख्य उद्देश्य खराब घुलनशील सक्रिय अवयवों (ए.आई.) की घुलनशीलता को बढ़ाना, सक्रिय घटक की धीमी गति से रिसाव प्राप्त करना और सक्रिय घटक के समय से पहले क्षरण को रोकना है। इसके अलावा, नैनो–फॉर्मूलेशन कीटनाशकों के चयनात्मक और दीर्घकालिक नियंत्रित रिसाव के कारण पर्यावरण की दृष्टि से अधिक टिकाऊ हैं तथा धारणीय कृषि व्यवस्था में कारगर साबित हो सकते हैं। नैनो–कीटनाशक के उत्पादन के लिए कार्बन, सिलिकेट्स, धातु, धातु ऑक्साइड, गैर–धातु ऑक्साइड, सिरेमिक, मिट्टी, स्तरित डबल हाइड्रॉक्साइड, पॉलिमर, लिपिड, डेंड्रिमर, प्रोटीन, क्वांटम डॉट्स आदि जैसे प्राकृतिक या सिंथेटिक कणों की एक विस्तृत श्रृंखला का उपयोग किया जाता है। कीट प्रबंधन के लिए विभिन्न प्रकार के नैनो–फॉर्मूलेशन (जैसे नैनोकण, नैनोकैप्सूल, नैनोजेल, नैनो–इमल्शन आदि उपलब्ध हैं।

सफलता की कहानियाँ

कई यौगिकों के मामले में, नैनोकण स्वयं कीटनाशक के रूप में कार्य कर सकते हैं। उदाहरण स्वरूप, लगभग 3–5 नैनोमीटर के आकार के सतह चार्ज संशोधित हाइड्रोफोबिक नैनो–सिलिका कृषि और पशु चिकित्सा के क्षेत्रों में कई नाशजीवी कीटों का प्रभावी ढंग से प्रबंधन करने में सक्षम है। नैनो–एल्युमीनियम ऑक्साइड के धूल धान के घुन (*सिटोफिलस ओरिजा*) के खिलाफ भौतिक जहर के रूप में कार्य करती है। लहसुन के आवश्यक तेल (*एसेंशियल ऑयल*) वाले पॉलीइथाइलीन ग्लाइकोल–लेपित नैनोकणों ने लाल आटा भृंग (*ट्रिबोलियम कैस्टेनियम*) के खिलाफ दीर्घकालिक नियंत्रण का प्रदर्शन किया है। नैनो संपुटित (*एन्कैप्सुलेटेड*) अजवाइन (*कैरम कॉप्टिकम*) आवश्यक तेल हीरकपीठ पतंगा (*प्लूटेला ज़ाइलोस्टेला*) को प्रभावी ढंग से नियंत्रण कर सकता है। अजवाइन आवश्यक तेल युक्त मिरिस्टिक एसिड–चिटोसन नैनोजेल ने गेहूं के घुन (*सिटोफिलस ग्रैनेरियस*) के खिलाफ प्रभावकारिता दिखाई है। वैज्ञानिकों ने हरा आड़ू माहू (*माइज़स पर्सिका*) के प्रबंधन के लिए चिटोसन–लेपित नैनो संरचना युक्त पाइरिफ्लुक्विनाजोन की बढ़ी हुई प्रभावकारिता की सूचना दी। पाइरिडालिल और मेथोमाइल के नैनोकैप्सूल क्रमशः चने का फली भेदक (*हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा*) और फॉल आर्मीवर्म (*स्पोडोप्टेरा फ्रुगिपरडा*) पर बेहतर नियंत्रण प्रदान करते पाए गए हैं। मिथाइल यूजेनॉल नैनोजेल के रूप में धीमी गति से रिहाई होने वाला फेरोमोन विभिन्न फलों के बगीचों में फल मक्खी (*बैक्ट्रोसेरा डॉर्सालिस*) के खिलाफ दीर्घकालिक नियंत्रण प्रदान करता है। नैनोकणों का उपयोग जैव–कीटनाशकों के वितरण के लिए भी सफलतापूर्वक किया गया है। चिटोसन नैनो वाहक लेपित एंटोमोपैथोजेनिक कवक नोमुरिया रिलेई अत्यंत कम खुराक के साथ तम्बाकू की इल्ली (*स्पोडोप्टेरा लिटुरा*) को कुशलता से नियंत्रण कर सकता है।

निष्कर्ष एवं भविष्य की संभावनाएँ

नाशजीवी कीट कृषि में सबसे खतरनाक जैविक बाधाओं में से एक हैं और शोधकर्ता उनसे निपटने के लिए लगातार नई रणनीतियों की तलाश करते आ रहे हैं। रासायनिक कीटनाशकों पर अत्यधिक निर्भरता के परिणामस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण, कीट प्रतिरोध, गैर–लक्षित जीवों पर प्रतिकूल प्रभाव और मानव स्वास्थ्य के लिए जोखिम सहित विभिन्न समस्याएं पैदा होती आ रही है। इन मुद्दों के समाधान के लिए, कीट प्रबंधन में नैनोटेक्नोलॉजी का अनुप्रयोग एक अत्यधिक आशाजनक दृष्टिकोण के रूप में उभरा है, जो पारंपरिक तरीकों का विकल्प पेश करता है। यद्यपि कीड़ों को नियंत्रित करने के लिए नैनोटेक्नोलॉजी का उपयोग पहले ही शुरू हो चुका है, लेकिन इसका विकास और व्यापक पैमाने पर अपनाया जाना अपेक्षाकृत धीमा है।

अधिक संख्या में विभिन्न प्रकार के नैनो कणों के कीटनाशी प्रभावों का दोहन करने और कृषि रसायनों के नैनो–संरचना के संश्लेषण को बढ़ाने हेतु बहु–विषयक अनुसंधान की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, रोगाणुओं और पौधों से नैनोकणों का जैवसंश्लेषण पर्यावरण–अनुकूल कीट प्रबंधन में नई दिशा प्रदान कर सकती है। लक्ष्य से परे प्रभावों और नैनो–कीटनाशकों के अन्य अवगुणों को कम करने के लिए नैनो–कीटनाशक अनुसंधान में अभी भी महत्वपूर्ण प्रगति की आवश्यकता है। नैनो–फॉर्मूलेशन के पारिस्थितिक प्रभावों का मूल्यांकन करने और आसानी से अपनाने के लिए मानकीकृत खुराक और प्रयोग विधियों को स्थापित करने के लिए बड़े पैमाने पर प्रयोगशाला तथा खेत में परीक्षण आवश्यक हैं। निष्कर्षतः, नैनोटेक्नोलॉजी कीट प्रबंधन के लिए एक शानदार उपकरण के रूप में काम कर सकती है और धारणीय हरित कृषि में इसके स्थायी उपयोग की अपार संभावनाओं का अवसर प्रदान करता है।

औषधीय एवं सगंध पौधों में समन्वित व्याधि प्रबंधन

पी.के. गुप्ता[1] एवं योगिता घरडे[2]

[1]जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

[2]भाकृअनुप- खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत में औषधीय एवं सगंधीय पौधों का विशाल भंडार भू–तल पर विद्यमान है। वर्तमान में परंपरागत फसलों के साथ–साथ कुछ क्षेत्रों में औषधीय फसलों की खेती करना आर्थिक दृष्टि से फायदेमंद पाया जा रहा है। अत: प्राचीन चिकित्सा पद्धतियों एवं संस्कारों को जीवन्त रखने हेतु यह आवश्यक है कि जड़ी–बूटियों की उपलब्धता बनी रहे। किसानों द्वारा इन फसलों की खेती कर अर्जित आय, यह स्पष्ट करता है कि औषधीय पौधों की खेती न केवल ज्यादा लाभकारी है, बल्कि इनके लिए बाजार भी उपलब्ध हैं। औषधीय एवं सगंधीय पौधों के कृषिकरण, तथा जलवायु परिवर्तन के कारण उनमें व्याधियों एवं कीटों के द्वारा नुकसान भी अधिक होने लगा है।

तुलसी का चूर्णित आसिता (*एरीसाइफी बायोसिलाटा*)

लक्षण: पत्तियों की सतह पर कवक सफेद चूर्ण के रूप में दिखाई देता है। प्रारंभ में यह कवक धब्बों के रूप में दिखाई देते है जो बाद में मिलकर पूरी सतह पर चूर्ण के रूप में फैल जाते है। रोगजनक जब अपना पोषण पत्तियों से लेना प्रारंभ करता है तो पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं। बाद में सूख जाती है।

रोगजनक : *एरीसाइफी बायोसिलाटा*

सर्पगंधा में सर्कोस्पोरा पर्ण चित्ती (*सर्कोस्पोरा क्रेसीकोला*)

लक्षण: इस रोग के लक्षण पठारी क्षेत्रो में अगस्त–सिंतबर से दिखना प्रारंभ हो जाता है। पत्तियों पर छोटे, वृत्ताकार धब्बे बनते है, जिनके किनारे गहरे तथा मध्य भाग भूरे रंग के होते है, जो धब्बे के बड़े होने पर राख के रंग के हो जाते है। रोग की तीव्रता होने पर यह धब्बे आपस में मिलकर बड़े विक्षत बनाते है, जिससे पत्तियाँ झुलसकर गिर जाती है।

अश्वगंधा का आल्टर्नेरिया पर्ण चित्ती (*आल्टर्नेरिया आर्ल्टनाटा/ आल्टर्नेरिया रेफेनायी*)

लक्षण: यह रोग केवल पत्तियों को ही संक्रमित करता है, परंतु धब्बे पर्ण–पटल के किसी भी भाग पर बन सकते है। पत्तियों की दोनों सतह पर छोटे जलीय, वृत्ताकार धब्बे दिखाई पड़ते है। जिनके मध्य में उत्तकक्षयी भाग गिर जाता है। जिससें पत्तियों में छिद्र हो जाते है।

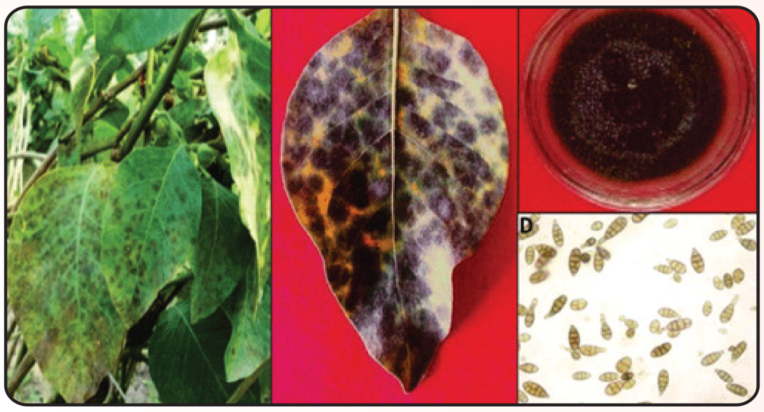

गुडमार का पर्ण चित्ती (*ड्रेस्लेरा स्पीसीफिरा*)

लक्षण: रोग के लक्षण पत्तियों पर धब्बे आकार एवं माप में बहुत छोटी बिंदी से लेकर गोल आँख के आकार का या गोल होता है। छोटा धब्बा गाढ़ा भूरा रंग का होता है। परंतु बीच का भाग पीलापन लिए गंदा सफेद या घूसर रंग का हो जाता है।

अश्वगंधा का स्क्लेरोशियम अंगमारी (*स्क्लेरोटिनिया स्क्लेरोथियम*)

लक्षण: रोग के लक्षण मुख्य भूमि की सतह पर तनों के चारों तरफ तथा तनों पर कवक जाल के रूप में दिखाई देते है। बाद में उन्हीं स्थानों पर लाल भूरे रंग के छोटे–छोटे, गोल, रोगजनक के स्क्लेरोशियम दिखाई देते है। इस स्थिति में पूरे पौधे या कभी–कभी पौधे के कुछ भाग मर जाते है।

व्याधि प्रबंधन के उपाय

जैव उत्पादों के प्रयोग से अभिप्राय है – जीव (जैसे कवक, जीवाणु, विषाणु एवं सूत्रकृमि) अथवा इन जीवों से निर्मित उत्पाद जो पौधों को नुकसान पहुँचाने वाले जीवों को नष्ट करें या उनकी संख्या को कम करें। या जैविक उत्पाद न केवल औषधीय सगंधीय गुण को बनाये रखने में सहायक होते है अपितु रासायनिक दवाओं के दुष्प्रभाव को भी कम करने में सहायक होते है। औषधीय एवं सगंधीय पौधों में जैविक उत्पादों द्वारा कीट एवं व्याधि नियंत्रण अति आवश्यक है क्योंकि रासायनिक दवाओं के प्रयोग से इन पौधों की गुणवत्ता में कमी आ सकती है या उनमें उपस्थित औषधीय तत्व प्रभावित हो सकते है। अत: इन बिंदुओं को ध्यान में रखते हुये निम्न जैव उत्पादों का प्रयोग व्याधि नियंत्रण में किया जा सकता है।

1. **गौ मूत्र**
2. **नीम**
3. **पत्तियों के रस**
4. **ट्राइकोडरमा**
5. **स्यूडोमोनास**
6. **ट्राइकोग्रामा**
7. ***बैसिलस थुरिनजियेन्सिस* (बी.टी.)**
8. **ई.पी.एन. (इंटोमोपैथोजेनिक निमेटोड)**

गौ मूत्र– गौ मूत्र में विभिन्न प्रकार के तत्व जैसे गंधक, नाइट्रोजन, फास्फोरस, लोहा, सोडियम इत्यादि पाये जाते है जिनके प्रयोग से फफूंदजनित रोगों का नियंत्रण होता है। इसे उपयोग करने के लिए देशी गाय के 10 लीटर गौ मूत्र को तांबे के बर्तन में लेकर उसमें एक कि.ग्रा. नीम के पत्ते डाल कर 10–15 दिन तक छोड़ दें। इसके बाद इसे तांबे की कढ़ाई में उबालें, जब उसकी मात्रा आधी (5 लीटर) रह जाये तब छान लें तथा 400–500 लीटर पानी में मिलाकर फसलों पर छिड़काव करें।

नीम– फसल सुरक्षा में नीम आधारित पदार्थ लाभप्रद एवं बिना दुष्प्रभाव के होते है। इसका प्रयोग मानव द्वारा प्राचीनकाल से ही विभिन्न व्याधियों के नियंत्रण में होता है। वर्तमान में इसका प्रयोग कृषि के हर क्षेत्र में हो रहा है। अनेको शोध परिणाम से यह सुनिश्चित हो चुका है कि नीम आधारित रसायन फसल में लगने वाली व्याधियों से सुरक्षा प्रदान करते है। इसके लिए नीम की 25 कि.ग्रा. पत्तियाँ 400–500 लीटर पानी में 4–5 दिन तक भिगो कर रखें और जब पानी हरे–पीले रंग का दिखने लगे तो इसे निचोड़ कर छान लें। छना हुआ यह मिश्रण एक हेक्टेयर क्षेत्र के पर्ण धब्बों के नियंत्रण हेतु पर्याप्त होता है।

पत्तियों के रस का प्रयोग– नीम, जैट्रोफा, करंज, शरीफा, सदाबहार, महुआ, सफेदा, बेल, सहजन, क्रोटन, भाँग, तारामीरा, मदार, धतूरा, मेंहदी, तंबाकू, तुलसी, लैन्टाना, गेंदा, गुलदाउदी एवं चिरायता जैसे अनेकों पौधे ऐसे होते है जिनमें व्याधि नियंत्रण हेतु विशिष्ट तत्व पाये जाते हैं। ऐसे पौधों की पत्तियों के रस के प्रयोग द्वारा फसल में लगने वाली व्याधियों से रोकथाम की जा सकती हैं। ऐसे पौधों की पत्तियों की 20 कि.ग्रा. मात्रा महुआ अथवा गुड़ के साथ 15 लीटर पानी में मिलाकर सात दिन तक सड़ने (फर्मेन्टेशन) के लिए छोड़ देते हैं। इसके बाद इसे भट्ठी में उबालकर संघनित (कन्डेन्स) किया जाता है। जब 4–5 लीटर द्रव एकत्रित हो जाये तो आसवन की प्रक्रिया बंद कर देते हैं। इस द्रव का प्रयोग विभिन्न पर्ण धब्बों, झुलसा, मृदा जनित रोगों के नियंत्रण के लिए प्रयोग किया जाता है।

ट्राइकोडर्मा– ट्राइकोडर्मा एक जैव नियंत्रक मृतोपजीवी स्वतंत्र फफूंद है, जो मिट्टी में सड़े–गले कार्बनिक पदार्थो के ऊपर तीव्र गति से वृद्वि करता है। यह प्राय: मिट्टी और पौध जड़ के पारिस्थितिकी तंत्र में पाया जाता है। वर्तमान शोध में यह पाया गया है कि ट्राइकोडर्मा समयानुसार पौध परपोषी है और ये पुन: मिट्टी में उत्पन्न होकर स्पर्धा के साथ भूमि में अधिक समय तक जीवित रह सकता है। विपरीत परिस्थितियों में भी ट्राइकोडर्मा स्वस्थ पौध जड़–तंत्रों में जीवित रहता है। ट्राइकोडर्मा एक प्रोफाइटिक फफूंद है जो अम्लीय और उदासीन मिट्टी में भी वृद्वि करता है और नम अवस्था में अच्छी तरह पनपता है। ट्राइकोडर्मा फफूंद के कवक तंतु रोग कारक कवक तंतु को चारों तरफ से आच्छादान एवं भेद करके, उसके अन्दर के कोशिका द्रव्य को खाद् के रूप में अवशोषित करके फफूंद को मार देता है। इसका प्रयोग मृदा उपचार के रूप में करने के लिए 2.5 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा पाउडर को 75 कि.ग्रा. कम्पोस्ट या वर्मीकम्पोस्ट में अच्छी तरह मिलाकर दो सप्ताह के लिए छायेदार स्थान पर रख देते हैं जिससे कि ट्राइकोडर्मा पूरे कम्पोस्ट में अच्छी प्रकार से कवक जाल एवं बीजाणु को फैला सके। तत्पश्चात् इसे एक हेक्टेयर खेत की मिट्टी में फैला देते है। इसके उपरांत फसल की बुआई कर सकते है।

स्यूडोमोनास– स्यूडोमोनास एक जीवाणु है, जो मृदाजनित रोगों (विशेषकर फ्यूजेरियम एवं राइजोक्टिनिया द्वारा उत्पन्न रोग) के नियंत्रण के लिए प्रयोग किया जाता है। यह प्राय: मृदा में, जल में एवं पादप सतह पर उपनिवेशन स्थापित करता है।

प्रयोग विधि–

पौध जड़ का उपचार– पौधों की जड़ों को 5–10 मि.ली. स्यूडोमोनास प्रति लीटर पानी के घोल में 30 मिनट तक डुबोकर उपचारित करने के पश्चात् रोपण करना चाहिए।

मृदा उपचार– बुआई अथवा रोपण पूर्व 2.5 कि.ग्रा. स्यूडोमोनास पाउडर को 75 कि.ग्रा. कम्पोस्ट या वर्मीकम्पोस्ट में अच्छी तरह मिलाकर एक हेक्टेयर खेत की मिट्टी में फैला देते हैं। इसके उपरांत फसल की बुआई कर सकते है।

ई.पी.एन. (इंटोमोपैथोजेनिक निमेटोड)– यह रोगजनक का एक घातक परजीवी है, परंतु ये पौधों तथा मृदा में उपस्थित रीढ़ सहित एवं रहित प्राणियों को कोई हानि नहीं पहुंचाते हैं। स्टीनरनीमा एवं हेटरोरैबडिटिस वंश के सूत्रकृमियों का जीनोरैब्ड्स वंश के जीवाणुओं के साथ परस्पर गठबंधन होता है। इस प्रकार यह सूत्रकृमि जीवाणुओं की सहायता से नाशीजीवों को 24–28 घंटों में समाप्त कर देते है।

प्रयोग विधि– इन जीवों की क्रियाशीलता 12–28 डिग्री से.ग्रे. पर अधिकतम रहती है। तापमान 28 डिग्री से.ग्रे. से अधिक होने पर हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए जिससे सूत्रकृति भूमि में नीचे चले जाएं तथा वहाँ पर उपस्थित हानिकारक जीवाणुओं पर अपना चक्र पूरा कर लें।

सरसों के कीट एवं उनके एकीकृत कीट प्रबंधन

अर्चना अनोखे, मुकेश कुमार मीणा एवं दीक्षा एम.जी.
भाकृअनुप- खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

परिचय:

सरसों सबसे शुरुआती घरेलू फसलीय पौधों में से एक है, जो 5000 ईसा पूर्व का है। यह तेल और वनस्पति के स्रोत के रूप में भारतीय आहार में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आवश्यक फैटी एसिड और प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट के आदर्श अनुपात के कारण सरसों का तेल सबसे फायदेमंद तेल के रूप में मान्यता प्राप्त कर रहा है, जो संतुलित कोलेस्ट्रॉल के स्तर को बनाए रखने में मदद करता है। सरसों की खेती मुख्य रूप से रबी मौसम के दौरान की जाती है और यह विभिन्न कृषि-जलवायु परिस्थितियों में पनप सकती है, जिसमें सिंचित या वर्षा आधारित वातावरण, समय पर या देर से बुआई, लवणीय मिट्टी और मिश्रित फसल शामिल हैं। सरसों की अधिक खेती करके भारत खाद्य तेलों के मामले में आत्मनिर्भर बन सकता है। एकीकृत कीट प्रबंधन, पर्यावरणीय और सामाजिक पहलुओं को संबोधित करता है, जो पर्यावरणीय स्वास्थ्य को बनाए रखते हुए उत्पादकों और विक्रेताओं के लिए मुनाफा पैदा करते हुए उपभोक्ताओं को सुरक्षित और किफायती भोजन प्रदान करता है (एसके दारा, 2019)।

सरसों की उपज को प्रभावित करने वाली बाधाओं में कीट एक प्रमुख कारण हैं जो अंकुरण से लेकर पकने की अवस्था तक फसल को नुकसान पहुंचाते हैं। भारत में लगभग 24 कीट प्रजातियां सरसों की फसल को नुकसान पहुंचाती हैं (राय, 1976)। हालाँकि, फसल सघनता में वृद्धि और विभिन्न कृषि-जलवायु परिस्थितियों में फसल क्रम में बदलाव के साथ, फसल का कीट जटिलता भी बदल जाता है। एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम) एक टिकाऊ, विज्ञान-आधारित निर्णय लेने की प्रक्रिया है जो कीटों और कीट प्रबंधन उपकरणों और रणनीतियों से जोखिमों को पहचानने, प्रबंधित करने और कम करने के लिए जैविक, सांस्कृतिक, भौतिक और रासायनिक उपकरणों को जोड़ती है जो समग्र रूप से न्यूनतम करती है।

सरसों का फसल कैलेंडर:

फसल कैलेंडर फसल उगाने से लेकर कटाई तक की अवधि को व्यक्त करता है **(तालिका-1)**

तालिका-1: सरसों का फसल कैलेंडर

जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	जुलाई	अगस्त	सितंबर	अक्टूबर	नंवबर		दिसंबर	
फल का विकास	फल का विकास	कटाई	–	–	–	–	–	बुवाई	अंकुरण	पत्तियां आना	पुष्पक्रम उद्भव	फूल	फल का विकास

सरसों उत्पादन परिदृश्य:

वैश्विक परिदृश्य में, 2018-19 की अवधि के दौरान सरसों का अनुमानित क्षेत्र, उत्पादन और उपज क्रमशः 36.59 मिलियन हेक्टेयर (एम.एचए.), 72.37 मिलियन टन (एम.टी.) और 1980 किलोग्राम/हेक्टेयर थी। भारत का कुल क्षेत्रफल का 19.8% और दुनिया भर के कुल उत्पादन (यू.एस.डी.ए.) का 9.8% हिस्सा है। इन राज्यों में किए गए प्राथमिक सर्वेक्षण और अन्य राज्यों में किए गए माध्यमिक सर्वेक्षण के आधार पर, 2022-23 के लिए अनुमानित रेपसीड-सरसों का रकबा 95.77 लाख हेक्टेयर है, जो कृषि मंत्रालय के अनुमान से 98.02 लाख हेक्टेयर सेथोड़ा ही कम है। वर्ष 2022-23 के लिए औसत उत्पादकता 1,203 किलोग्राम/हेक्टेयर अनुमानित की गई है, जिसके परिणामस्वरूप कुल सरसों का उत्पादन 115.25 लाख टन होगा (जयश्री भोसले, 2023)।

तालिका-2: भारत के राज्यों में सरसों उत्पादन परिदृश्य

	पहला	दूसरा	तीसरा
क्षेत्र	राजस्थान	उत्तरप्रदेश	मध्यप्रदेश
उत्पादन	राजस्थान (44.95 लाख टन)	मध्यप्रदेश (18.03 लाख टन)	उत्तरप्रदेश (16.69 लाख टन)
उत्पादकता	राजस्थान	उत्तरप्रदेश	मध्यप्रदेश

सरसों के महत्वपूर्ण कीट:

सरसों की फसल को प्रभावित करने वाली 43 कीट प्रजातियों में से, माहूँ या चेंपा (*लिपाफिस एरिसिमी*), सॉफ्लाइज (*अथालिया लुगेंस प्रॉक्सिमा*), और पेंटेड बग (*बगराडा क्रूसिफेरम*) महत्वपूर्ण कीट हैं। पत्तागोभी हेड बोरर (हेलुला अंडलिस), पत्तागोभी पत्ती वेबर (*क्रोकिडोलोमिया बिनोटालिस*), और डी.बी.एम. (*प्लूटेला ज़ाइलोस्टेला*) भी फसल को छिटपुट रूप से प्रभावित करते हैं। सरसों की कीट प्रोफ़ाइल तालिका-2 में दी गई है, जो माहवार कीट की उपस्थिति और उससे होने वाली क्षति को दर्शाती है।

तालिका-3: सरसों की कीट प्रोफ़ाइल

<table>
<tr><th>अक्टूबर</th><th>नंवबर</th><th>दिसंबर</th><th>जनवरी</th><th>फरवरी</th><th>मार्च</th></tr>
<tr><td></td><td></td><td colspan="2">डायमण्डबेक शलभ</td><td></td><td></td></tr>
<tr><td></td><td></td><td colspan="2">सरसों की मक्खी</td><td></td><td></td></tr>
<tr><td></td><td>पेंटेड बग</td><td></td><td colspan="2"></td><td></td></tr>
<tr><td></td><td></td><td></td><td colspan="2">माहूँ या चेंपा</td><td></td></tr>
</table>

डायमण्डबेक शलभ. सरसों की मक्खी. पेंटेड बग. माहूँ या चेंपा

राष्ट्रीय महत्व के सरसों के कीट:

सरसों का चेपा, (*लिपाफिस एरिसिमी कल्ट* (चेंपा: हेमिप्टेरा)): सरसों की फसलें मुख्य रूप से एफिड्स की तीन प्रजातियों से प्रभावित होती हैं:- सरसों एफिड (*लिपाफिस एरिसिमी*), गोभी का चेपा (*ब्रेविकोरीन ब्रैसिका*), और हरी आड़ू चेपा (*मायजस पर्सिका*)। यह फूलगोभी, शलजम, कोहलबी, मूली, चायनीज गोभी, ब्रसेल्स स्प्राउट, ब्रोकोली, केल सहित विभिन्न फसलों को प्रभावित करता है, और सेम, चुकंदर, पालक, प्याज, स्टॉक, ककड़ी और आलू पर एक छोटे कीट के रूप में भी कार्य करता है (मुटरर, 1978)

पेंटेड बग; *बग्राडा क्रूसिफ़ेरम किर्कल्डी* (पेंटाटोमिडे: हेमिप्टेरा):

वयस्क मादा बगराडा बग बीजपत्रों के नीचे, पत्तियों, तनों और पौधों की जड़ो के पास की मिट्टी में अकेले अंडे देती हैं, तथाकीट पत्ती की दोनों सतहों को खाते हैं और पत्ती के अंदरूनी ऊतकों को तोड़ने में सहायता के लिए लार छोड़ते हैं।

सरसों की मक्खी; अथालिया लुगेंस प्रॉक्सिमा क्लुग (टेनथ्रिडिनिडे: हाइमनोप्टेरा):

अथलिया लुजेस प्रॉक्सिमा (क्लुग) की मादा वयस्क पत्ती के किनारों के नीचे की तरफ अकेले अंडे देती है, जो आरी जैसे ओविपोसिटर के साथ स्लिट बनाती है। ताजे रखे अंडे चिकने, मलाईदार सफेद और अंडाकार आकार के होते हैं, जो अंडे के चरण के अंत तक काले हो जाते हैं। ऊष्मायन अवधि 6–8 दिनों तक होती है (जैन एट अल., 2016)। लार्वा छह इंस्टार से गुजरता है और उसके पास पैरों के तीन वक्षीय जोड़े और पेट के आठ जोड़े पादक होते हैं। पादक में क्रोचेट अनुपस्थित हैं, जो उन्हें लेपिडोप्टेरान लार्वा से अलग करते हैं।

सरसों की पत्ती के कीट; (लिरियोमायज़ा ब्रासिका, (एग्रोमायज़िडे: डिप्टेरा):

मक्खी वसंत से शरद ऋतु तक प्रजनन करती है। यह शीतकाल में प्यूपेरिया के रूप में रहता है। पहला चरणमे लार्वा मिसोफिल ऊतक में प्रवेश करता है। दूसरा लार्वा इंस्टार भी मेसोफिल ऊतक में भोजन करता है। तीसरे चरण का लार्वा पत्ती की ऊपरी सतह को खाता है। जब यह परिपक्व हो जाता है, तो यह पत्ती में एक अनुदैर्ध्य चीरा काटता है और पत्ती की सतह पर आ जाता है या पुपेशन के लिए जमीन पर गिर जाता है। कीट सफेद या हरे रंग की, रैखिक या अनियमित होती हैं जिनमें कभी-कभी धागे जैसे काले कीटमल होते हैं (रोनाल्ड एट अल 2017)।

पत्तागोभी का प्रमुख छेदक; हेलुला अंडलिस (एफ.) (क्रैम्बिडे: लेपिडोप्टेरा):

पत्तागोभी का वेबवर्म सरसों, मूली, रुतबागा, ब्रोकोली, पत्तागोभी, चीनी पत्तागोभी, कोलार्ड, केल, चरवाहे का पर्स और शलजम को खाता है।लार्वा जाले के अंदर बनाते हैं और भोजन करते हैं। इसके अलावा, लार्वा पत्तियों की मध्य शिराओं को खाते हैं, जिससे मध्य शिराएं कमजोर हो सकती हैं। युवा सरसों के पौधों में, लार्वा अक्सर मुख्य तने और डंठल में घुस जाते हैं, जिससे पौधे मुरझा जाते हैं और मर जाते हैं (लतीफ और इरविन 1983)।

तालिका-3: सरसों के कीटों के लिए अनुशंसित कीटनाशक

सरसों के कीट	कीटनाशक	मात्रा
आरा मक्खी अथालिया लुगेंस प्रॉक्सिमा	डाईमेथोएट 30% इ.सी.	1.5 एम.एल./लीटर
	इमिडाक्लोरपिड 70% डब्लू.एस.	700 ग्रा. प्रति हेक्टेयर
	क्यूनालफोस 25% इ.सी.	2.5 एम.एल./लीटर
माहूँ या चेंपा लिपाफिस एरिसिमी	क्लोरपायरीफॉस 20% इ.सी.	1.5 एम.एल./लीटर
	डाईमेथोएट 30% इ.सी.	1.0 एम.एल./लीटर
	ओक्सीडिमेथोन मिथायल 25% इ.सी.	2.0 एम.एल./लीटर
	थाईमेथोक्सम 25% डब्लू.जी.	0.1-0.2 एम.एल./लीटर
पेंटेड बग, बग्राडा हिलरिस लीफ माइनर, फायतोमायाज होर्तिकोला	इमिडाक्लोरपिड 70% डब्लू.एस.	700 ग्रा. प्रति हेक्टेयर
	कार्बनफूरान 3% सी.जी.	66 कि.ग्रा. प्रति एकड
	डाईमेथोएट 30% इ.सी.	1.5 एम.एल./लीटर
सफेद मक्खी	कार्बनफूरान 3% सी.जी.	33 कि.ग्रा. प्रति हेक्टयर

सरसों में एकीकृत कीट प्रबंधन:

एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम) पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर किसी भी प्रतिकूल प्रभाव के बिना कीटों की संख्या को आ्थक सीमा स्तर से नीचे लाने के लिए सभी उपलब्ध कीट नियंत्रण रणनीतियों का एक सुसंगत तरीके से संयोजन है। आईपीएम फसल की बुआई से लेकर कटाई तक चलने वाली एक सतत प्रक्रिया है जिसमें न केवल समय पर बुआई और एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन जैसी सांस्कृतिक प्रथाएं शामिल हैं, बल्कि जैव कीटनाशकों और वनस्पति विज्ञान के उपयोग, प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण और संवर्धन और आवश्यकता-आधारित अनुप्रयोग पर भी जोर दिया जाता है। कीटनाशक-फसल पारिस्थितिकी तंत्र में कीटों और प्राकृतिक शत्रुओं की समय-समय पर निगरानी वह आधार है जिस पर संपूर्ण कीट प्रबंधन प्रणाली निर्भर करती है।

समस्त भारतीय भाषाओं के लिए यदि कोई एक लिपि आवश्यक हो तो वह देवनागरी ही हो सकती है।

- जस्टिस कृष्ण स्वामी अय्यर

खण्ड-ग

खरपतवार चालीसा

चन्द्रभानू
भाकृअनुप–भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान,
मोदीपुरम, मेरठ (उ.प्र.)

दोहा

कुटिल, चोरों बेशर्म अहैं, ढेरों अन्य विकार।
बिना बुलायें उगे रहें, नाम है खरपतवार।।
पानी, पोषक तत्व लूटते, धूप भी लेत निकार।
फसल की उपज घटाइके, कर दे हाहाकार।।

चौपाई

जय हो खरपतवार उजागर, जय जय चोरों के सौदागर।।
बिना निमंत्रण तुम उग आते, और फसलों का गला दबाते।
पानी पोषक तत्व चुरावहिं, सौर धूप तुम्हरे मन भावहिं।
फसल रोग के पालनकर्ता, फसल कीट के तुम हो धरता।
प्रथम शत्रु फसलों के घर का, उपज घटावहिं तुम्हरे करता।
बड़े प्रबल तुम्हरे सेनानी, पार्थेनियम रोगों की खानी।
मानव पशु कछुक नहिं त्यागी, चर्मरोग देहि स्वांश की व्याधि।
जलकुंभी गेहूं का मामा, लेण्टाना का ताना बाना।
इनसे त्रस्त है भारत देश, फैले बहुत अनेक प्रदेश।
तुम्हरे रूप बहुत जग जाना, चौड़ी पत्ती के दुर्गुण नाना।
संकरी पत्ती देहि अति पीरा, मोथा कुल भीषण बलवीरा।
दूर देश के तुम्हरे मीता, नाश करें है जैव विविधता।
तोर विनाश असंभव जानी, करे प्रबंध फसल विज्ञानी।
कृषि निरावहिं अपने हाथा, कठिन परिश्रम देर को काजा।
उचित रसायन जो कोई नावै, तुम्हरे भय को कम कर पावैं।
उचित यंत्र जिनको है भावा, तुम्हें उखारहिं उपज बढ़ावा।
सस्य क्रिया के हेरे फेरे, हैं तुम्हरे बहु विधि रखवारे।
जाइगोग्रामा भृंग कै पासा, गाजरघास का करै विनाश।
एकीकृत प्रबंध अपनावे, कम खर्चे में उपज बढ़ावै।
अपना पर्यावरण बचावैं, सारे जग को सुखी बनावै।
खरपतवार निदेशालय, अनुसंधान का एक अनोखा संस्थान।
जबलपुर में स्थापित अहै, उचित सलाह देकर करे कृषि का उत्थान।।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का गौरवान्वित वैज्ञानिक

अर्चना अनोखे
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

- मुझे मेरे 142 करोड़ भाई–बहनों के साथ इस देश का नागरिक होने पर गर्व है, जिस मिट्टी के कण–कण में बुद्ध, भगत और राम है।
- साथ ही मै इस बात के लिए गर्व महसूस करती हूँ कि मैं उस भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की सदस्य हूँ, जो कि देश के 15 करोड़ किसानो को अपने 7000 वैज्ञानिकगण के साथ मिलकर उन्हें उन्नतशील बनाने का जिम्मा अपने कंधो पर लिया है।
- मुझे गर्व है उस परिषद की सदस्या होने पर, जो अपने आप में विशाल है और वह 75 शोध संस्थान, 14 एन.आर.सी., 12 डायरेक्टरेट, 11 अटारी, 74 कृषि विश्वविद्यालय तथा 732 कृषि विज्ञान केंद्र का मार्गदर्शन कर रहा है।
- मुझे गर्व है उस परिषद की सदस्या होने पर, जिसने 1965 में हरितक्रांति का परचम विश्व में लहराया था और इस धरती को खाद्य परिपूर्ण बनाया था।
- मुझे गर्व है उस परिषद की सदस्या होने पर, जिसने देश के किसानों को मात्र 193 मिलियन हेक्टेयर उपजाऊ जमीन पर 330 मिलियन मीट्रिक टन खाद्यान, 320 मिलियन मीट्रिक टन बागवानी फसल, 41 मिलियन मीट्रिक टन तिलहन, 26 मिलियन मीट्रिक टन दलहनी फसल उत्पादन करने में मार्गदर्शन किया है।
- मुझे गर्व है इस देश के किसानों पर, जिन्होंने उत्पादन की श्रेणी में 195 देशों की श्रंखला में से भारत को चीनी तथा दुग्ध उत्पादन में प्रथम स्थान खाद्यान्न, बागबानी, चावल, गेंहू, दाल, अंडा, मछली, उत्पादन में द्वितीय स्थान मे पहुचाया है।
- मुझे गर्व है उस परिषद का सदस्या होने पर, जिसने विभिन्न परियोजनाओं जैसे कि– फार्मर्स फर्स्ट, मेरा गांव मेरा गौरव आर्या (ARYA), सीसा (CSISA), निक्रा (NICRA), एस.सी.एस.पी. (SCSP), टी.एस.पी. (TSP) के माध्यम से 37 हजार विकसित तकनीकियों का प्रदर्शन करके 5 लाख से भी अधिक किसानो को लाभ पहुचाया है, और यहाँ तक कि 75 हजार किसानो की आय दुगनी करने में मदत किया है।
- मुझे गर्व है उस परिषद का सदस्या होने पर, जिसने 4 लाख से भी अधिक जर्म प्लासम का उन्नत शोध के लिए संचय किया है।
- मुझे गर्व है उस संस्थान की सदस्या होने पर, जिसने अपने कर्मचारियों की सुविधाओं के लिए विभिन्न मंच जैसे कि स्पैरो (SPARROW), ई.आर.पी. (ERP), सारथी (SARTHI), दर्पन किसान (DARPAN KISAN), बेव मेल (WEB MAIL), ई–ऑफिस (E-OFFICE), सी. आर.एम.एस. (CRMS), पी.एम.एस. (PMS), पी.आई.एम.एस. (PIMS), ए.एस.आर.बी–ओएसिस (ASRB-OASIS) जैसी सुविधाए उपलब्ध कराई है।

जय जवान–जय किसान–जय अनुसंधान

राजकीय कामकाज में राजभाषा हिन्दी का महत्व

जी.आर.डोंगरे एवं मुकेश कुमार मीणा
भाकृअनुप– खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

एक भाषा के रूप में हिंदी न सिर्फ भारत की पहचान है बल्कि यह हमारे जीवन मूल्यों, संस्कृति एवं संस्कारों की सच्ची संवाहक, संप्रेषक और परिचायक भी है। बहुत सरल, सहज और सुगम भाषा होने के साथ हिंदी विश्व की संभवत: सबसे वैज्ञानिक भाषा है जिसे दुनिया भर में समझने, बोलने और चाहने वाले लोग बहुत बड़ी संख्या में मौजूद हैं। यह विश्व में दूसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है जो हमारे पारम्परिक ज्ञान, प्राचीन सभ्यता और आधुनिक प्रगति के बीच एक सेतु भी है। हिंदी भारत संघ की राजभाषा होने के साथ ही ग्यारह राज्यों और तीन संघ शासित क्षेत्रों की भी प्रमुख राजभाषा है। संविधान की आठवी अनुसूची में शामिल अन्य इक्कीस भाषाओं के साथ हिंदी का एक विशेष स्थान है।

भारत एक लोकतंत्र है। लोकतंत्र में राजभाषा का विशेष महत्व होता है। लोकतंत्र प्रजा की सरकार, प्रजा द्वारा चयनित एवं प्रजा के हित में कार्य करने वाली सरकार होती है। राजभाषा सरकार एवं प्रजा के मध्य् एक सेतु का कार्य करती है। राजभाषा जितनी सरल एवं अधिक से अधिक लोगों द्वारा समझी जा सकने वाली भाषा होगी, उतनी ही अच्छी तरह से जनता सरकार द्वारा कार्यान्वयित योजनाओं को समझ पायेगी एवं सरकारी योजनाओं में अधिक से अधिक भाग ले पायेगी।

राजभाषा के संबंध में राष्ट्र पिता महात्मा गांधी द्वारा बताये गये गुणों पर ध्यान देने की आवश्यकता है। गांधी जी के अनुसार राजभाषा सरल, अधिकांश जनता द्वारा समझे जानी वाली, राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवहार को बखूबी चलाने में सक्षम होनी चाहिए। इन गुणों के आधार पर यदि हम देखें तो हिन्दी में राजभाषा बनने के पूरे गुण हैं। हिन्दी विश्व की चीनी भाषा के बाद बोली जाने वाली सबसे बड़ी भाषा है। विश्व में लगभग 60 करोड़ लोग हिन्दी बोलते पढ़तें एवं समझते हैं। हिन्दी विश्व में मारिशस, सूरीनाम, ग्याना, भारत आदि में अधिकांश रूप से तथा नेपाल में अल्प रूप में प्रयोग में लायी जाती है। हिन्दीं भाषा सरल एवं आसानी से समझी जाने वाली पूर्ण वैज्ञानिक भाषा है। इसके शब्द भण्डार काफी समृद्ध है। हिंदी के शब्दो कोष में ढाई लाख से अधिक शब्द हैं, जिनमें दस हजार अंग्रेजी शब्द भी शामिल हैं। हिन्दी में नये–नये शब्दों के सृजन की भी क्षमता है।

हिन्दी के इन्हीं गुणों को ध्यार में रखते हुए 14 सितम्बर, 1949 को हिन्दी को राजभाषा का सम्मान प्रदान किया गया। यह भी निर्णय लिया गया कि 26 जनवरी, 1950 से 15 वर्षों तक अंग्रेजी का प्रयोग सरकारी कार्यों में उसी प्रकार होता रहेगा, जैसा हो रहा है। परन्तु 26 जनवरी, 1965 के पश्चात् समस्त राज काज केवल हिन्दी में ही होगा। हिन्दी को राजभाषा के रूप में संविधान की धारा 343 (1) के द्वारा घोषित किया गया था। राजभाषा से संबंधित प्रावधान संविधान की धारा 343 से धारा 352 तक में वर्णित है।

हिन्दी, हिन्द–यूरोपीय परिवार की भाषा है तथा हिन्द आर्य परिवार के अन्तर्गत आती है। इस परिवार की भाषाएं संस्कृत भाषा से जन्मी हैं। इसी कारण इनका शब्द कोष समृद्ध है। इस परिवार की भाषाओं के नियम स्पष्ट हैं तथा व्याकरण के रूप में अत्याधिक सरल हैं।

यद्यपि हिन्दी को राजभाषा घोषित करते समय यह निर्णय लिया गया था कि 26 जनवरी, 1965 के पश्चात् समस्त राजकीय कार्य केवल हिन्दी में किये जायेंगे। परन्तु देश के दक्षिण में हिन्दी भाषा के विरोध के कारण वर्ष 1963 में संविधान की धारा 363 (3) के द्वारा, अंग्रेजी को भी जारी रखने का निर्णय लिया गया तथा यह प्रावधान किया गया कि जब तक समस्त राज्य नहीं चाहेंगे तब तक सरकारी कामकाज में अंग्रेजी का प्रयोग यथावत जारी रहेगा।

संविधान के प्रावधान के कारण राजभाषा हिन्दी अपनी वह स्थान पाने से वंचित रह गयी, जिसकी वह हकदार है। देश में तकनीकी और आर्थिक समृद्धि के साथ–साथ अंग्रेजी पूरे देश पर हावी होती जा रही है। हिन्दी देश की राजभाषा होने के बावजूद आज हर जगह अंग्रेजी का वर्चस्व कायम है। हिन्दी जानते हुए भी लोग हिन्दी में बोलने, पढ़ने या काम करने में हिचकने लगे हैं। इसलिए सरकार का प्रयास है कि हिन्दी के प्रचलन के लिए उचित माहौल तैयार किया जा सके। आज भी अधिकतर सरकारी कामकाज अंग्रेजी में ही किये जाते हैं। हिन्दी के प्रयोग के आधार पर भारत को तीन क्षेत्रों में बांटा गया है।

'क' क्षेत्र में उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, हरियाणा, राजस्थान जैसे वे राज्य आते हैं जो हिन्दी भाषी हैं तथा जिनमें समस्त सरकारी कार्य (100 प्रतिशत) हिन्दी में होना चाहिए, परन्तु वास्तव में इन राज्यों में भी हिन्दी प्रयोग की स्थिति संतोषजनक नही है।

'ख' क्षेत्र में गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब जैसे राज्य आते हैं, जहां पर भी 100 प्रतिशत कार्य हिन्दी में किये जाने चाहिए तथा उनका अंग्रेजी में अनुवाद किया जाना चाहिए परन्तु इन क्षेत्रों में भी हिन्दी के प्रयोग की स्थिति संतोषजनक नहीं है।

'ग' क्षेत्र में हिन्दीत्तरभाषी क्षेत्र जैसे कि केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश दक्षिण के राज्य आते हैं। इन राज्यों में हिन्दी में कार्य करने हेतु लक्ष्य 55 प्रतिशत है।

संविधान की धारा 351 में यह लिखा गया है कि संघ हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए ऐसे समस्त कार्य करेगी, जिनके द्वारा उसे समृद्ध किया जा सके ताकि वह राजभाषा के रूप में सफलतापूर्वक कार्य कर सकें। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए सरकार ने अनेकों ऐसे कार्यक्रम प्रारम्भ किये हैं, जिनके द्वारा हिन्दी की उन्नति हो सके। सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने हेतु राजभाषा आयोग की स्थापना की गयी। केन्द्र सरकार के कार्यालयों में हिन्दी से सम्बद्ध कर्मचारियों की भर्ती की गयी। सरकारी कर्मचारियों के हिन्दी में प्रशिक्षण के कार्यक्रम चलाये गये। वैज्ञानिक कार्यों में राजभाषा के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए विज्ञान में लिखित मौलिक हिन्दी पुस्तकों पर ईनाम की योजना प्रारम्भ की गई। तकनीकी शब्दावली आयोग बनाया गया।

इसमें कोई संदेह नहीं है सरकारी कामकाज में राजभाषा हिन्दी का बहुत अधिक महत्व है। इसे भारत का अधिकांश जनमानस लिख एवं पढ़ सकता है तथा लगभग समस्त जनता समझ सकती है। इसके माध्यम से किये गये कार्य जनता के समझ में अच्छी प्रकार से आते हैं कम पढ़े–लिखे व्यक्ति भी हिन्दी में पारित आदेश/अध्यादेश आदि को भली प्रकार से समझ जाते हैं। आज विश्व के बहुत सारे छोटे से छोटे देश भी अपनी राजभाषा में कार्य कर रहे हैं। परन्तु यह हमारा बडा देश होने एवं अनेक भाषा–भाषी होने के कारण हमारे देश मे आज भी अधिकतर सरकारी कार्य अंग्रेजी में ही किये जा रहे हैं। जिसमें सुधार की अत्यंत आवश्कता है ।

पिछले वर्षों में राजभाषा हिन्दी के सरकारी कामकाज में वृद्धि हुई है। उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश एवं राजस्थान आदि में अधिकांश सरकारी कार्य हिन्दी में हो रहा है। केन्द्र सरकार में भी हिन्दी का प्रयोग बढ़ा है परन्तु आज भी बहुत कुछ किये जाने की आवश्यकता है। हिन्दी के सरकारी कामकाज में कम प्रयोग होने के पीछे दो कारण मुख्यक हैं। एक कारण है उच्च वर्ग का आज भी अंग्रेजी से लगाव तथा हिन्दी को हीन भावना से देखना। दूसरा कारण है संचार माध्यमों एवं कम्प्यूटर क्रांति के समय हिन्दी का नवीनतम टैक्नोलॉजी की दौड़ में पिछड़ना। इन्ही कारणो से चाहते हुए भी कुछ व्यक्ति हिन्दी का प्रयोग नही कर पा रहे है।

आज स्थिति बदलने लगी है। यूनीकोड़ के आगमन से कम्प्यूटर द्वारा हिन्दी का प्रयोग काफी सरल हो गया है। आज हर व्यक्ति आसानी से हिन्दी में कार्य कर पा रहा है। इन्टरनेट पर हिन्दी का अथाह शब्द भण्ड़ार भरा हुआ है। मंत्रा जैसे साफ्टवेयर उपलब्ध हैं जिनके द्वारा अनुवाद का कार्य भी आसानी से किया जा सकता है। आज आवश्यतकता केवल इस बात की है कि हम अपनी हिन्दी राजभाषा के प्रति अधिक आदर एवं गर्व के साथ व्यवहार करे। इस समृद्ध शब्द सम्पदा का लाभ उठायें तथा अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में करें।

अन्त में यह कहना अतिस्योक्ति पुर्ण नही होगा कि हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीरकार किये 60 वर्ष से अधिक बीत चुके हैं। परन्तु अभी भी इसे अपने गौरवपूर्ण स्थान पर पहुँचना बाकी है। इसका सरकारी कार्यो में अधिक से अधिक प्रयोग होना बाकी है। आशा है कि भविष्य राजभाषा हिन्दी का है तथा आने वाले समय में यह सरकारी कामकाज में अधिक से अधिक प्रयोग की जायेगी

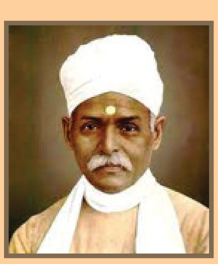

हिन्दी भाषा एक ऐसी सार्वजनिक भाषा है,
जिसे बिना भेद-भाव प्रत्येक भारतीय ग्रहण कर सकता है।

– मदन मोहन मालवीय

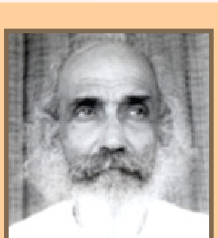

हिन्दी राष्ट्रीयता के मूल को सींचती है और उसे दृढ़ करती है।

– पुरूषोत्तम दास टंडन

अन्नदाता की हमसे आस

जी.आर.डोंगरे
भाकृअनुप- खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

उगाता अनाज मैं दिन-रात,
फिर भी क्यो खाली हैं मेरा हाथ
कृषि उत्पाद के नहीं बढ़ते दाम,
पेट्रोंल, डीजल, बिजली बढते हैं सरेआम
रोजमर्रा की चीजों के दाम,
कई गुना बढ़तें हैं सरेआम
व्यापारी हो रहा है धनवान,
किसान हो रहा है कर्जवान
कृषि पर मौसम की भी मार,
ओला, पाला और तुषार
बढता जाता लागत का भार,
जिसमें न होता बडा सुधार
नकली खाद, बीज का व्यवहार,
जिससे घटती है पैदावार
खेती लगती है घाटे का काम,
क्यों न बढतें अनाज के दाम
मजदूर मिले न, करें कोई काम,
ट्रैक्टर, थ्रेंसर भी नहीं है आम
हारवेस्टर, न बिजली है आसान,
हो रहा किसान ही परेशान
जब हो जाता अच्छा उत्पाद,
तब भी नहीं होता भारी लाभ
भाव घट जाते रातों-रात,
मंडी में आ जाता खूब अनाज
तब बिचौलियों का होता राज,
नहीं मिलता लागत का दाम
तब खेती होती घाटे का काम
गावों में खेती घाटे का व्यवसाय,
इससे नहीं होती अच्छी आय
मिल रहा जब मुफ्त राशन,
मजदूर को जब पाले शासन
प्रधानमंत्री आवास में करे आराम,
क्यों करेगा मेंहनत का काम
किसान हो रहा है कर्जदार,
कृषि हो रहा है घाटे का व्यापार
परम्परागत खेती में घटी पैदावार,
बिक रहा उसका घर बार,
बचा न जीने का आधार,
जब हो जाता वह लाचार,
तब करता अनुचित व्यवहार
बचाना होगा किसान को,
रखना होगा उसके मान को
समझना होगा उसके बलिदान को
समाज, सरकार सबका आवाहन,
करो अन्नदाता का सम्मान
करो उसकी मुश्किल आसान
तब होगा कृषि का जीडीपी में योगदान
जय जवान-जय किसान,
भारत बनेगा कृषि प्रधान।

किताबें हमारी मित्र

प्रीति ठाकुर
भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

किताबों को अपनी साथी बनाओं, जब जिंदगी का सफर तुम्हें थका दे, वो तुम्हें अपनी दुनिया में ले जाएंगी, जहां चारों ओर खूबसूरत हवा बहती हैं।

इंसान की सबसे अच्छी मित्र किताबें हैं क्योंकि किताबें और उनका ज्ञान जीवन के किसी भी पड़ाव पर किसी का साथ नहीं छोड़ते। किताबें दुनिया में ज्ञान और सूचना का सबसे बड़ा भंडार हैं। किताबों में हर समस्या का समाधान होता है और ये सबसे अच्छी दोस्त होती हैं जो कभी किसी को नहीं छोड़ती। विभिन्न शैलियों की किताबें पढ़ने से हमें विभिन्न तरीकों से सोचने और विश्लेषण करने में मदद मिलती है। ऐसे समय जब हम परेशान या हतोत्साहित होते हैं, किताबें सबसे अच्छा समाधान हो सकती हैं। जब हम अकेले होते हैं तो पढ़ने और अपने दिमाग को प्रेरित करने के लिए कोई भी किताब उठा सकते हैं। जीवनियाँ और आत्मकथाएँ प्रेरणादायक पुस्तकें हैं जो जीवन बदलने वाले अनुभवों के बारे में बताती हैं। किताबें अनुभवी लोगों द्वारा लिखी जाती हैं जो मुख्य रूप से अपने अनुभवों और जीवन से मिले सबक के बारे में लिखते हैं। विभिन्न पुस्तकें पढ़ने से हमें अपनी रचनात्मकता के साथ-साथ अपनी शब्दावली को भी बढ़ाने में मदद मिलती है।

कागज की ये महक, ये नशा रूठने को है,
किताबों से इश्क करने की ये आखिरी सदी है।

पुस्तकें सभी सूचनाओं और ज्ञान का केंद्र हैं। वे हमें डेटा इकट्ठा करने और उसे बेहतर ढंग से समझने में मदद करते हैं। विभिन्न पुस्तकें पढ़ने से हमें अपनी शब्दावली, रचनात्मकता और कल्पनाशक्ति को बढ़ाने में मदद मिलती है। यह इंसानों की विचार प्रक्रिया को उत्तेजित करता है और उनकी जीवनशैली में भी बदलाव लाता है। विभिन्न शैलियों की किताबें पढ़ने से हमें गंभीर रूप से सोचने और विश्लेषण करने में मदद मिलती है। यह दुनिया के बारे में बहुत सारी जानकारी देता है। किताब पढ़ते समय हम दुनिया को लेखक की नज़र से देखते हैं। विभिन्न आत्मकथाएँ और जीवनियाँ मनुष्य को सफल जीवन जीने के लिए प्रेरित कर सकती हैं। किताबें हमें सामान्य मानव संस्कृति और जीवनशैली के बारे में बहुत कुछ सिखाती हैं।

किताबों से दूरी: एक अच्छी किताब के कुछ पन्ने आपको बिना पढ़े ही छोड़ देना चाहिए ताकि जब आप दुखी हों तो उसे पढ़ कर आपको सुकुन प्राप्त हो सके। यह बातें आज से 4–5 वर्ष पूर्व तक काफी सटीक था लेकिन आज के दौर में यदि आपने किसी पुस्तक को पढ़ कर छोड़ दिया है तो छूटा ही रह जाता है। क्यूंकि हम किताबों से परहेज करने लगे हैं लेकिन मोबाइल को रिचार्ज और चार्ज करना नही भूलते।

एक अच्छी किताब जिंदगी में, बहुत बड़ा बदलाव लाती हैं ।

वक्त में जिस प्रकार तेजी से परिवर्तन हो रहा है, इससे पुस्तक पर संकट मंडराने लगा है। ऐसा एक दिन न आ जाए कि किताब गुजरे जमाने की चीज हो कर न रह जाए। नेट और गूगल ने सब कुछ बदलकर रख दिया है जिससे उनका पुस्तकों के प्रति मोह कम होने लगा है। उन्हें समझना होगा कि किताबें जेब में रखा एक बगीचा होता है जो हर पल एक नई सुंगध के साथ फूल देती है। आप उस सुगंध से वंचित मत होइए, इस बात का ध्यान रखें। किताबें कितना सुकून देती हैं, यह कोई किसी पुस्तक प्रेमी से पूछे। लोगों के दिलों में पुस्तकों के प्रति प्रेम जागृत करने के लिए पुस्तक दिवस मनाया जाता है जो एक जरिया है, इसी के तहत लेखकों, पाठकों, आलोचकों, प्रकाशकों और संपादकों का एक साथ सम्मान किया जाता है जो अपने ज्ञान, अपने अनुभवों को पुस्तकों के जरिए लोगों तक पहुंचाते हैं।

किताबें हमारी सबसे अच्छी दोस्त के रूप में

किताबें हमारे जीवन की सबसे अच्छी साथी होती हैं। जब भी हमें उनकी आवश्यकता होती है वे हमारे लिए उपलब्ध होती हैं। किताबें हमारी आसपास की दुनिया को समझने, सही और गलत के बीच निर्णय लेने में हमारी मदद करती हैं। वे हमारे आदर्श, मार्गदर्शक या सर्वकालिक शिक्षक के रूप में भी हमारे जीवन में शामिल होती हैं। किताबें पढ़ने से हमारे व्यक्तित्व में गुणात्मक परिवर्तन आता है। वे हमारे लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित करने में मदद करती हैं साथ ही यथा समय लक्ष्य प्राप्ति में भी मददगार हैं। हममें से कई लोगों को अपने खाली समय में या सोने से पहले किताबें पढ़ने की आदत होती है क्योंकि पढ़ने से अवांछित तनाव पर काबू पाने में भी मदद मिलती है। यह हमें एक अलग ही दुनिया में ले जाती है जिसे हम सुकून की दुनिया कह सकते हैं। लोगों के विपरीत किताबें कभी भी बदले में कुछ भी नही मांगती, बल्कि हमारे ज्ञान और रचनात्मकता को बढ़ाने में हमारी मदद करती हैं।

किताबें कुछ कहना चाहती हैं।
तुम्हारे पास रहना चाहती हैं।।

किताब पढ़ना फिल्म देखने से बेहतर क्यों है?

फिल्में देखना अपना मनोरंजन करने का एक बेहतर माध्यम है। आमतौर पर फिल्में दो से तीन घंटे की होती हैं। फिल्में हमें नैतिकता के साथ शिक्षा और मनोरंजन का भी कार्य करती हैं। पुस्तक पढ़ने के दौरान हमारी सभी इंद्रियां सक्रिय रहती हैं। पढ़ने के दौरान हम काल्पनिक दुनिया में अपने आप चले जाते हैं। हमारे मन में चित्र बनने लगते हैं। यह हमारी स्मरण शक्ति को भी बढ़ाता है। यह बिल्कुल सत्य भी है जो फिल्म और किताब के बीच के अंतर को स्पष्ट करती है। किताब पढ़ना एक दिन में पूरा नही किया जा सकता है। हमारे द्वारा पढ़ने के लिए दिए गए समय के अनुसार इसे कई दिनों तक जारी रखा जाता है। जब हम अलग-अलग अध्यायों को पूरा करते हैं तो कहानी की किताब या उपन्यास पढ़ने से हमें

दिन–ब–दिन एक बड़ी जिज्ञासा होती है। हम कल्पना की दुनिया में ऐसे खो जाते हैं जैसे कहानी सच में घटित हो रही हो। किताबें पढ़ने से हमें फिल्में देखने से ज्यादा सटीक जानकारी मिलती है। यह हमें ध्यान केंद्रित करने और हमारी ध्यान केंद्रित करने की शक्ति को बढ़ाने में भी मदद करता है। इन सबके साथ ही यह हमारी कल्पना शक्ति और रचनात्मकता को भी बढ़ाता है।

किताबों संग दोस्ती कभी, नाकामयाब नही रहने देती।

तकनीक और पुस्तकों का महत्व

इन दिनों इंटरनेट, मोबाइल फोन और कंप्यूटर का इस्तेमाल बहुत आम हो गया है। छात्र इन तकनीकों को अध्ययन के लिए एक अच्छा विकल्प मानते हैं लेकिन ये तकनीकें किताबों के महत्व को कभी खत्म नही कर सकती। जब हम किताबें पढ़ते हैं तो हमें कई नई जानकारियां मिलती हैं लेकिन कई अनसुलझी बातें भी होती हैं। इन सवालों का जवाब पाने के लिए हमें और अध्ययन करना होगा। इससे छात्रों में पढ़ने और खोजने की क्षमता बढ़ती है। यह हमारे दिमाग का एक अच्छा व्यायाम है और हमारे दिमाग को तेज करने का सबसे अच्छा तरीका भी। अगर हम इंटरनेट की बात करें तो यह हमें इस प्रकार का लाभ नही देता है क्योंकि वहां पर सारी जानकारी पहले से ही उपलब्ध होती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि यह हमारी प्रभावकारिता और क्षमता को क्षरित करता है। प्रौद्योगिकी को भी विद्युत शक्ति के उपयोग की आवश्यकता होती है लेकिन किताबों के साथ ऐसा नही है। किताबों को सिर्फ खोलने और पढ़ने की आवश्यकता होती है। वे हमारे लिए किसी भी समय उपलब्ध हैं, लेकिन इंटरनेट को संचालित करने के लिए डेटा और ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि इंटरनेट सीखने का एक अच्छा माध्यम है लेकिन किताबों को पढ़ने पर इसे कभी भी तरजीह नही दी जा सकती है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि मानव के व्यक्तित्व के विकास के लिए अध्ययन से श्रेष्ठ विकल्प कोई नही है। इसलिए किताबें मानव की सबसे अच्छी दोस्त हैं जो सदैव मैं सिर्फ परत दर परत जीवन के उतार–चढ़ाव से इसे परिचित कराती हैं बल्कि हर मुश्किल वक्त में एक दोस्त की भाँति मनुष्य का साथ देती हैं।

किताबें करती है बातें, गुजरे हुये जमाने की
संसार की, इंसान की, कल की, आज की
हर एक पल की, खुशी की, गम की
फूल की, बम की, जीत की, हार की
प्रेम की, मार की, क्या नही सुनोगे तुम
इन किताबों की बात ?

क्योंकि तुम हो गाजर घास

अंजलि बकोड़े[1], अभिषेक सिंह बकोड़े[2] एवं अर्चना अनोखे[3]
[1]शासकीय रानी दुर्गावति नर्सिंग कॉलेज, जबलपुर (म.प्र.)
[2]राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केंद्र, जबलपुर (म.प्र.)
[3]भाकृअनुप–खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

क्या है तुम में इतना खास। तुम तो हो, एक गाजर घाँस।।

फसलों को कर सकती हो नाश। क्योंकि तुम हो गाजर घास।।

खरपतवार तुम्हारी शैली। देश–विदेश में तुम हो फैली।।

जब हो तुम्हारा सही उपयोग। दवा एवं खाद बनाने में करती सहयोग।।

दुरुपयोग व सद्उपयोग सब कुछ है हमारे हाथ। तुम तो हो, एक गाजर घाँस।।

बस नाम में ही है गाजर घास, काम तुम्हारे हैं बकवास। क्योंकि तुम हो गाजर घास।।

पानी बचाना है

विजय कुमार कौशिक
कृषि विज्ञान केंद्र, उचानी, करनाल
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

बहन, बेटी, मेरी माता, थोड़ी मेरी भी सुनले,
इस पानी को जरा तु देखकर प्रयोग करले।
ये पानी ना रहेगा तो कुछ ना कर पायेगी,
करना तो छोड़ो, प्यासी ही मर जायेगी।।

जीवन खातिर खाना पानी और हवा जरूरी है,
पानी बचाना विकल्प नहीं अब मजबूरी है।
तुम घर सफाई में ज्यादा पानी ना गिराना,
अच्छी झाड़ू लगा कम पोछे से काम चलाना।।

फल सब्जी धोकर पानी बिल्कुल ना फेंकना,
उस पानी को घर के पौधा और बगीचों में डालना।
बर्तन मांजने और कपड़े धोने में भी रखना ध्यान,
जितनी जरूरत उतना बरतना रखना इसका मान।।

मेरे किसान भाइयों तुम भी ध्यान रखना,
पानी बिना कुछ नहीं है इसको मान लेना।
धान की जगह मक्का या सब्जी लगाना,
धान ना छूटे तो डी.एस.आर. अपनाना।।

कम दूरी की फसलों में फव्वारा लगा होगा,
गन्ना, सब्जियों में ड्रिप से पानी बचाना होगा।
फसल रोटेशन, जैविक अवशेष को धरा में मिलाना,
धरती समतल करके इसकी नमी को बचाना।।

बारिश के पानी को सीधा ना बहने देना भाई,
तालाब को साफ कर भर, गर्मी में देगा ठंडाई।
फालतू पानी को यूं नालियां मैं नहीं जाने देना है,
गड्डा करके इस से धरती का भूजल रिचार्ज कर लेना है।।

नहाने खातिर भी थोड़े पानी में काम चला लेना,
मोटर साइकिल कार के गीला कपड़ा ही मार लेना।
भैंसा और कटड़ा को भी ऐसे क्या रगड़ रगड़ के नहलाना है,
पानी को बचालो भाइयों उनको क्या पटड़े पे बैठाना है।।

अपने खुले नल पे टूटी ना है तो लगाना,
पानी को खराब ना होने देना थोड़ा तो शर्माना।
ये पानी ना बस अमृत है इतना समझाता हूँ,
घर में घी की तरह प्रयोग होगा इतना बताता हूँ।।

अपनी तो निकल जाएगी, इन बच्चो का क्या होगा,
अगर पानी ना बचाया तो जीना बस सपना ही होगा।
सारी माता बहनों और भाईयों ये ठान लेना,
प्रकृति के इस उपहार को बचाना है बस ये मान लेना।।

विकास का विश्वास

जी.आर. डोंगरे
भाकृअनुप- खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर (म.प्र.)

क्या सच में विकास हो रहा है,
या कोई झूठे वादों से जनता को मोह रहा है
कुछ वर्षो पहले कानों से सुना था,
कि उन्नत देशों में हर हाथ में मोबाइल हैं
हमें लगा कोई हमें बरगला रहा है,
भल गरीब, साधारण लोगों के पास मोबाइल ?
माना मोबाइल भी आया तो नेट कहा
बात तब समझ आयी जब भारत में भी हर
हाथ में मोबाइल आया और सब को भाया,
काल चार्ज को हुआ टाटा, सस्ता हुआ डाटा
हर मोबाइल में नेट, सोशल मीडिया पर डिबेट
नदी नाले पर्वत वन या ग्राम–ग्राम,
सब जगह है नेटवर्क, मोबाइल का आम
अब जेब में नहीं है पैसे का काम,
अब यू.पी.आई. डिजीटल लेनदेन खुलेआम
2 रू से 2 लाख का भुगतान सेकेंण्डो में होता सरेआम
अब इसे कहूं विकास या दूं भ्रम का नाम।।
मुझे मिला ग्राम से पैगाम बन रहे है पक्के मकान,
कोई नही करता खुले में शौच, घर–घर में शौचालय की पहुँच
गॉव में भी लगे है डी.टी.एच. घर–घर में आम
खेत खलिहान में अब गाडी बैल का क्या काम,
ट्रैक्टर, थ्रेसर, सीडड्रिल, हारवेस्टर है आम
पखें, कूलर और ऐ.सी. भी घरों की शान,
खेती छोड शहर में पलायन पर लगा है विराम
अब इसे कहूं विकास या दूं भ्रम का नाम।।
सडक, बिजली, पानी है भरपूर,
अस्पताल, मंडी और बाजार नहीं हैं दूर
गॉव–गॉव भी है संसाधनों से भरपूर
बॉधों से नहरों का बिछ रहा है खेतों में जाल,
सिचिंत हुई खेती और किसान हुआ मालामाल
जन–धन से तो मिटा है कर्ज का जन्जाल,
बिचौलियो, महाजनों, सूदखोर है बेहाल
घूसखोरो, कमीशन खोरो की बिगडी है चाल
शासन, चुस्त दुरूस्त हुआ प्रशासन का काम
अब इसे कहूं विकास या दूं भ्रम का नाम,
लकडी कण्डा छोड रसोंई में सिलेण्डर है आम
खेती में मेहनत घटी, लगी मशीनों का परिणाम,
बढ़ी है पैदावार घटी है मंहगाई और घटें है दाम
नई पीढी का बढा है खेती पर रूझान,
खेती को समझ रहें नौकरी से बेहतर मुकाम
सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान
कृषि विस्तार विकास की नयी तकनीक बनी वरदान
अब लोग शान से कहते है मैं हूं ग्रामीण किसान,
देश की बढी है दुनिया भर में आन–बान–शान
भारत की बढ रही विश्व गुरू के रूप में पहचान,
संकल्प है 2047 तक बनेगा भारत उन्नत महान
अब इसे कहूं विकास या दूं भ्रम का नाम
गरीबी बेरोजगारी दिन–ब–दिन घटी है,
पर जनसंख्या दिन–ब–दिन बढी हैं
लगता है देश आगे बढ रहा है,
कट्टरपंथीयों, परम्परावादियों से लड रहा है
सबका साथ–सबका विकास–सबका प्रयास
इससे हुआ हैं चहुओर विकास
विकसित देश बनाने की तैयारी पूरी है
आजादी की वर्षगाठ पर विकसित देश बनाना है,
पर एक बार फिर से आजादी को जन–जन तक पहुँचाना
सब का भ्रम मिटाना है भारत को विकसित देश बनाना है,
बनाना है बनाना ही है।।

वर्ष 2023-24 में भा.कृ.अनु.प. - खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की गतिविधियों एवं किये गये प्रयासो का संक्षिप्त विवरण

निदेशालय में राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन एवं प्रचार–प्रसार तथा समय–समय पर इसके प्रयोग एवं प्रगति का अवलोकन करने हेतु राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन किया गया है। समिति के प्रयासो के परिणाम स्वरुप संस्थान के सभी अनुभागों में हिन्दी में कार्य करने के लिये प्रोत्साहित किया।

राजभाषा के प्रयोग एवं प्रचार–प्रसार के क्षेत्र मे सर्वाधिक व सराहनीय कार्यो के लिए निदेशालय को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जबलपुर कार्यालय क्रंमाक 02 की 13वीं बैठक में सरकारी कामकाज में राजभाषा के उल्लेखनीय एवं सराहनीय प्रचार–प्रसार हेतु दिनांक 29 दिसम्बर, 2023 को प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

दिनांक 29 दिसम्बर, 2023

वर्ष 2023–24 में खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के माध्यम से निदेशालय द्वारा हिन्दी में हुई प्रगति एवं गतिविधियों का विवरण इस प्रकार है–

त्रैमासिक बैठको का आयोजन

निदेशालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की त्रैमासिक बैठकों का नियमित आयोजन किया गया। हिन्दी राजभाषा कार्यान्वयन समिति की अप्रैल से जून, 2023 तिमाही की बैठक दिनांक 28/06/2023, जुलाई से सितम्बर, 2023 की तिमाही बैठक दिनांक 01/09/2023, अक्टूबर से दिसम्बर 2023 की तिमाही बैठक दिनांक 29/12/2023 एवं जनवरी से मार्च, 2024 की तिमाही बैठक दिनांक 28/03/2024 को निदेशालय के सभागार में आयोजित की गई।

उक्त बैठकों में निदेशालय के समस्त अनुभाग प्रभारी, अधिकारी एवं समिति के पदाधिकारी सम्मिलित हुए। बैठक में कार्यान्वयन से संबंधित बिंदुओं पर विचार किया गया एवं पिछली बैठक के कार्यवृत्त को पारित किया गया। राजभाषा कार्यान्वयन समिति के प्रभारी द्वारा पिछली तिमाहियों का विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया, जिसमें राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3(3) के अनुपालन की स्थिति के संदर्भ में बताया गया, तत्पश्चात् पिछली तिमाहियों के अंतर्गत जारी त्रैमासिक प्रतिवेदनों, कागजातो, मांगपत्रों एवं जांच बिन्दुओं इत्यादि से संबंधित चर्चाएं की गई। बैठकों में राजभाषा वार्षिक कार्यक्रमों में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने तथा राजभाषा विभाग एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद से प्राप्त निर्देशो/आदेशो/समीक्षाओं के अनुपालन पर चर्चा की गई और इन बैठकों में लिये गए निर्णयो को लागू करने के लिए कार्यवाही की गई।

त्रैमासिक हिन्दी प्रतिवेदन का संकलन

भारत सरकार के राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा निर्धारित रिपोर्ट के प्रोफार्मा में निदेशालय के विभिन्न अनुभागो में किये जा रहे हिन्दी कार्यो की प्रगति तथा हिन्दी पत्राचार के आंकडे तिमाही समाप्ति पर मंगाये गए और उनको समेकित कर प्रतिवेदन को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद नई दिल्ली, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति–02 जबलपुर एवं क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, भोपाल को प्रेषित किये गये। त्रैमासिक प्रतिवेदन से प्राप्त समीक्षा के अनुसार सुझाए गये बिन्दुओ पर कार्यवाही की गयी तथा संबंधित अनुभाग को पृष्ठांकित किया गया।

राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम का क्रियान्वयन

भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुसार संस्थान द्वारा संपादित कार्यो में हिन्दी का क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिए गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा जारी राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम में दिये गये निर्देशों के अनुसार कार्यवाही के लिए सभी अनुभागो को राजभाषा संबंधी नियमों/निर्देशों से अवगत कराया गया तथा इन नियमों के अनुसार कार्यवाही सुनिश्चित करने का अनुरोध किया गया।

हिन्दी पखवाड़े का आयोजन

निदेशालय में राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा दिनांक 14 सितंबर, 2023 को हिन्दी दिवस एवं दिनांक 14/09/2023 से 29/09/2023 तक हिन्दी पखवाड़े का आयोजन किया गया। जिसमें निदेशालय के समस्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया।

हिन्दी पखवाड़े के समापन के दौरान मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. एस.पी. तिवारी, कुलपति, नाना जी देशमुख पशु चिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय उपस्थित रहें। कार्यक्रम का शुभारंभ माँ सरस्वती को माल्यार्पण कर परिषद के महिमा गान से किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. एस.पी. तिवारी ने अपने उद्बोधन में कहा कि भारत एक ऐसा देश है जहां के 70 से 75 प्रतिशत लोग हिन्दी भाषा को समझते, पढ़ते एवं बोलते है। हिन्दी अन्य सभी भाषाओं के बीच एक सम्पर्क भाषा का कार्य करती है। भाषा समाज, संस्कृति, इतिहास, राष्ट्र की अस्मिता और उसके भावी

लक्ष्यों की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है। आजकल कम्प्यूटर, लैपटॉप एवं मोबाइल पर हिन्दी का प्रयोग करके नयी–नयी तकनीकी जानकारी को हिन्दी भाषा में कृषको तक पहुँचाया जा रहा है।

इस अवसर पर निदेशालय द्वारा प्रकाशित वार्षिक हिन्दी पत्रिका ''तृण संदेश'' के आठरहवें अंक, खरपतवार समाचार एवं भा.कृ.अनु.प. –खरपतवार अनुसंधान निदेशालय की महत्वपूर्ण उपलब्धियां 2022–23 प्रकाशनों का विमोचन मुख्य अतिथि एवं निदेशक/अध्यक्ष राजभाषा द्वारा किया गया।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान निदेशालय में तात्कालिक निबंध, हिंदी शुद्धलेखन, कम्प्यूटर में यूनिकोड में टाइपिंग, आलेखन एवं टिप्पण, वाद–विवाद, अंताक्षरी एवं प्रश्न मंच प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। हिन्दी पखवाड़े का समापन एवं पुरस्कार वितरण दिनांक 29/09/2023 को किया गया। समारोह में विजयी प्रतियोगियों को प्रमाणपत्र/पुरस्कार वितरित किये गये।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान निदेशालय में विभिन्न प्रतियोगिताएँ संपन्न कराई गई। जिसमें विजयी प्रतियोगियों के नाम नीचे सूची में दिये गये है।

1. **तात्कालिक निबंध प्रतियोगिता** – यह प्रतियोगिता दिनांक 15 सितम्बर, 2023 को दोनो समूहो (अ एवं ब) के लिए आयोजित की गई।

समूह 'अ'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	इंजी वैभव चौधरी	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री जी.आर. डोंगरे	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री विकास सिंह	तृतीय पुरस्कार
4.	श्री आलोक कुमार सेन	सांत्वना पुरस्कार
5.	डॉ सुरभि होता	सांत्वना पुरस्कार

समूह 'ब'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्रीमती कुंदा विरूलकर	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री अनुराग मिश्रा	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री वीरेन्द्र विश्वकर्मा	तृतीय पुरस्कार
4.	श्री खुशबू पटेल	सांत्वना पुरस्कार
5.	श्री राकेश रजक	सांत्वना पुरस्कार

2. **हिंदी शुद्धलेखन प्रतियोगिता**– इस प्रतियोगिता का आयोजन दिनांक 18 सितम्बर, 2023 को निदेशालय के सभागार में किया गया।

समूह 'अ'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्री मुनि प्रताप साहू	प्रथम पुरस्कार
2.	डॉ. दीपक पवार	द्वितीय पुरस्कार
3.	इंजी वैभव चौधरी	तृतीय पुरस्कार
4.	श्री सौमित्र बोस	सांत्वना पुरस्कार

समूह 'ब'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्रीमती कुंदा विरूलकर	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री सविता दाहिया	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री संगीता उपाध्याय	तृतीय पुरस्कार
4.	श्रीमती नीलम राजपूत	सांत्वना पुरस्कार
5.	सुश्री सौम्या मिश्रा	सांत्वना पुरस्कार
6.	श्री अम्बर यादव	सांत्वना पुरस्कार

3. **कम्प्यूटर में यूनिकोड में टाइपिंग प्रतियोगिता** – इस प्रतियोगिता का आयोजन दिनांक 20 सितम्बर, 2023 को किया गया जिसमें निदेशालय के दोनो वर्ग के अधिकारी एवं कर्मचारी सम्मिलित हुए।

समूह 'अ'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	डॉ. हिंमाशु महावर	प्रथम पुरस्कार
2.	डॉ. दीपक पवार	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री मुकेश कुमार मीणा	तृतीय पुरस्कार

समूह 'ब'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्री मोहन लाल दुबे	प्रथम पुरस्कार
2.	श्रीमती इति राठी	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री अनुराग मिश्रा	तृतीय पुरस्कार
4.	श्री संतोष गौटिया	सांत्वना पुरस्कार
5.	श्री विश्वनाथ	सांत्वना पुरस्कार

4. **आलेखन एवं टिप्पण प्रतियोगिता**– दिनांक 21 सितम्बर, 2023 को निदेशालय के दोनो समूहो के अधिकारियों एवं कर्मचारियों हेतु किया गया था।

समूह 'अ'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्री जी.आर. डोंगरे	प्रथम पुरस्कार

समूह 'ब'

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्री अनुराग मिश्रा	प्रथम पुरस्कार
2.	श्रीमती कुंदा विरूलकर	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री मोहनलाल दुबे	तृतीय पुरस्कार
4.	श्रीमती नीलम चौरसिया	सांत्वना पुरस्कार

5. **वाद-विवाद प्रतियोगिता**– दिनांक 22 सितम्बर, 2023 को वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें निदेशालय के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया।

क्रं.	नाम	स्थान
1.	डॉ. चेतन सी.आर.	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री पंकज शुक्ला	द्वितीय पुरस्कार
3.	सुश्री प्रीति ठाकुर	तृतीय पुरस्कार
4.	डॉ. पी.के. मुखर्जी	सांत्वना पुरस्कार
5.	श्री अंजनीकांत चतुर्वेदी	सांत्वना पुरस्कार

6. **अंताक्षरी प्रतियोगिता** – इस प्रतियोगिता का आयोजन दिनांक 25 सितम्बर, 2023 को किया गया जिसमें निदेशालय के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया।

क्रं.	नाम
	प्रथम पुरस्कार
1.	डॉ. सुरभि होता
2.	श्री राजीव कुलश्रेष्ठ
3.	श्रीमती श्रद्धा त्रिपाठी
	द्वितीय पुरस्कार
1.	श्री अजय पाल सिंह
2.	श्री ए.के. चतुर्वेदी
3.	श्री रत्नेश यादव
	तृतीय पुरस्कार
1.	श्री सौमित्र बोस
2.	सुश्री सौम्या मिश्रा
3.	श्रीमती नीलम राजपूत

7. **प्रश्न–मंच प्रतियोगिता**– दिनांक 27 सितम्बर, 2023 को प्रश्न मंच प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें निदेशालय के अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा बनाई गई 07 टीमों (प्रत्येक टीम में 04 सदस्य) के प्रतिभागी एवं अन्य स्टाफ सदस्य सम्मिलित हुए।

क्रं.	नाम
	प्रथम पुरस्कार
1.	डॉ. के.के. बर्मन
2.	श्री जी.आर. डोंगरे
3.	श्री अनुराग मिश्रा
4.	श्री वीरेन्द्र विश्वकर्मा
	द्वितीय पुरस्कार
1.	इंजी वैभव चौधरी
2.	श्री पंकज शुक्ला
3.	श्री अंजनीकांत
4.	श्रीमती कुन्दा विरूलकर
	तृतीय पुरस्कार
1.	श्री राजीव कुलश्रेष्ठ
2.	श्री मुकेश कुमार मीणा
3.	सुश्री प्रीति ठाकुर

8. **नगद पुरस्कार** – वर्ष भर शासकीय कार्यो का संपादन हिन्दी में करने एवं 20,000 से अधिक शब्द हिन्दी में लिखने हेतु प्राप्त आवेदनों एवं चल शील्ड हेतु आवेदित किये गये अनुभागों के अभिलेखों का निरीक्षण सत्यापन/पुरस्कार चयन समिति द्वारा किया गया। समिति की अनुशंसा के अनुसार निम्न पुरस्कार निर्धारित किये गए है।

क्रं.	नाम	स्थान
1.	श्री बी.पी. उरिया	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री टी. लखेरा	द्वितीय पुरस्कार
3.	श्री जी.आर. डोंगरे	तृतीय पुरस्कार
4.	श्रीमती इति राठी	सांत्वना पुरस्कार

9. **वर्षभर हिन्दी में सर्वाधिक कार्य करने वाले अनुभाग को चलित शील्ड–**

क्रं.	नाम	स्थान
1.	क्रय एवं भण्डार अनुभाग	प्रथम
2.	स्थापना अनुभाग	द्वितीय
3.	पी.एम.ई. अनुभाग	तृतीय

10. **हिंदीत्तरभाषी प्रतियोगी हेतु पुरस्कार** – डॉ. पी.के. मुखर्जी को प्रदान किया गया।

राजभाषा वार्षिक पत्रिका के अठारहवे अंक का प्रकाशन–

तृण संदेश पत्रिका के अठारहवें अंक अप्रैल 2022 से मार्च 2023 का प्रकाशन किया गया, जिसमें खरपतवार प्रबंधन से संबंधित महत्वपूर्ण लेखो को स्थान दिया गया है। पत्रिका को स्लोगन एवं महापुरुषो के कथनों से प्रभावशाली बनाया गया।

हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन–

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा वर्ष 2022 के दौरान छः हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया गया, जिसका विवरण निम्नानुसार–

1. 21 अप्रैल, 2023 को ''वर्तमान परिवेश में योग एवं मेडिटेशन का महत्व'' विषय पर एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें डॉ. ज्योति मिश्रा, निदेशक लाईफ केयर प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र, जबलपुर द्वारा व्याख्यान दिया गया।
2. दिनांक 08 जून, 2023 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन ''जैविक कृषि की वर्तमान स्थिति" विषय पर किया गया, जिसमें डॉ. आर.पी. दुबे, प्रधान वैज्ञानिक द्वारा व्याख्यान दिया गया।
3. दिनांक 31 अगस्त, 2023 को निदेशालय द्वारा एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन "हिन्दी दिवस एवं राजभाषा चेतना मास की महत्वता'' विषय पर श्री बसंत मिश्रा, प्रभारी राजभाषा द्वारा व्याख्या दिया गया ।
4. दिनांक 12 दिसम्बर, 2023 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन "जलवायु अनुकूल कृषि में उचित खरपतवार प्रबंधन'' विषय पर सभी कृषकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियो हेतु किया गया। जिसके वक्ता डॉ. श्रीकांत दसारी, वैज्ञानिक रहे।
5. दिनांक 22 फरवरी, 2024 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन "पौध किस्म एवं कृषक अधिकार संरक्षण" विषय पर सभी कृषकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियो हेतु किया गया। जिसके वक्ता डॉ. पी.के. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक रहे।

समाचारों में भाकृअनुप-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय
ICAR - DWR in the NEWS

स्वच्छ भारत

एक कदम स्वच्छता की ओर

स्वच्छता ही सेवा अभियान 2024

''स्वभाव स्वच्छता - संस्कार स्वच्छता''

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

भा.कृ.अनु.प.-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय
जबलपुर (म.प्र.) - 482004

फोन / Phones: +91-761-2353001, 23535101, 23535138, 2353934, फैक्स / Fax: +91-761-2353129
ई-मेल / Email: director.weed@icar.gov.in वेबसाइट / Website: http://dwr.icar.gov.in
फेसबुक लिंक/Facebook Link- https://www.facebook.com/ICAR-Directorate-of-Weed-Research-101266561775694
X लिंक/Link- https://twitter.com/Dwrlcar यूट्यूब लिंक/Youtube Link - https://www.youtube.com/channel/UC9WOjNoMOttJaIWdLfumMnA

ISBN : 978-81-958133-8-4

9 788195 813384

Amrit # 8349634350